प्रकाशक :

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

मुद्रक

श्री शोभाचन्द सुराणा
रेफिल आर्ट प्रेस,
३१, बड़तल्ला स्ट्रीट,
कलकत्ता-७

जिन्होंने सत्साहित्य की निरन्तर सेवा
और ज्ञानोपासना के लिए सदा प्रेरित
और प्रोत्साहित किया, जिनके
अनन्त उपकारों से कभी उऋण
नहीं हो सकता, उन्हीं सरल-
हृदय, सौजन्यमूर्त्ति, धर्मप्राण,
सौम्य और कर्मठ समाज-
सेवक, जोवन-निर्माता,
परमपूज्य पितृदेव

श्री भैरूंदानजी नाहटा

की स्वर्गीय
आत्मा
को
सादर समर्पित

विनीत
भँवरलाल नाहटा

दो शब्द

श्री भँवरलाल नाहटा ने 'समयसुन्दर रासपंचक' का सपादन कर एक बड़ा उपयोगी कार्य किया है। संपादक ने प्रारम्भ मे पाँचों रासों का सार प्रस्तुतकर प्रस्तुत ग्रन्थ को हिन्दी पाठकों के लिए भी सहज ही बोधगम्य बना दिया है। अन्त में रासपंचक मे प्रयुक्त देशी सूची भी दे दी गई है।

जैन साधु-सन्तों ने लोक-साहित्य की रक्षा के लिए जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया, वह अनुपम है। उपदेश देते समय जैन साधु अनेक दृष्टान्त-कथाओं का प्रयोग किया करते थे, जिससे उपदेशों की छाप श्रोताओं के मन पर चिराकित हो सके। ऐसी अनेक दृष्टान्त-कथाएँ प्रस्तुत रास-पचक मे प्रयुक्त हुई है।

महोपाध्याय समयसुन्दर द्वारा विरचित इन पाँचों रासों का मेरी दृष्टि मे एक विशेष महत्त्व है। इन रासो मे जिन लोक-कथाओं का समावेश हुआ है, वे मूल अभिप्रायों (Motives) की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। सर्वप्रथम रास 'सिंहलसुत चौपई' में काष्ठ-पट्ट के सहारे धनवती द्वारा समुद्र-तट प्राप्त करने का उल्लेख हुआ है। लोक-कथाओं और कथा-

काव्यों मे इस अभिप्राय का प्रचुर प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। जायसी के पद्मावत में भी इस कथानक-रूढ़ि का प्रयोग हुआ है। इसी प्रकार मुद्रिका को पानी मे खोलकर राजकुमारी पर छिड़कना, उसे पिलाना और उसका सचेत होकर उठ बैठना 'जादू की वस्तुएँ' (Magical Aıticles) नामक प्ररूढ़ि के अन्तर्गत समझना चाहिए। इसी प्रकार अद्भुत कथा जो प्रति दिन खंखेरने पर सौ रुपये देती थी तथा आकाशगामिनी खटोली भी इसी अभिप्राय की निदर्शिका हैं। साँप द्वारा कुमार को कुब्जा और कुरूप बना देना अनायास ही महाभारत के नलोपाख्यान का स्मरण करा देता है, जहाँ कुरूप बना देना विपत्ति-रक्षा के साधन के रूप मे गृहीत हुआ है।

इस रास मे 'मौन भंग' नामक प्ररूढ़ि (Motıve) का प्रयोग भी बहुत ही कुतूहलवर्धक हुआ है। वामन थोडी-सी कथा कह कर शेष कथा दूसरे दिन पर स्थगित कर देता है, जिससे क्रमशः तीनों स्त्रियाँ बोल उठती हैं। 'वल्कलचीरी' मे श्वेत केश की रूढ़ि का प्रयोग हुआ है। रामचरित मानस के दशरथ भी जब हाथ मे दर्पण लेकर अपना मुँह देखकर मुकुट को सीधा करते है तो उन्हें जान पडता है कि उनके कानों के पास बाल सफेद हो गये हैं मानो वे यह उपदेश देते हैं कि अब वृद्धत्व आ गया है—इसलिए हे राजन्! श्री रामचन्द्रजी को युवराजपद देकर अपने जीवन और जन्म का लाभ क्यों नहीं लेते?

श्रवन समीप भए सित केसा। मनहुँ जरठपन अस उपदेसा ॥
नृप जुवराजु राम कहुँ देहू। जीवन जनम लाहु किन लेहू ॥

चम्पक सेठ सम्बन्धी रास में साधुदत्त भावी की अमिटता के सम्बन्ध में एक दृष्टान्त सुनाता है, किन्तु इसके विपरीत वृद्ध-दत्त की मान्यता है कि उद्यम के आगे भावी कुछ नहीं। इस सम्बन्ध में वह भी एक दृष्टान्त सुनाता है और यह सिद्ध करने का प्रयत्न करता है कि उद्यम का आश्रय लेकर विधाता के लेख में भी मेख मारी जा सकती है, किन्तु आगे की कथा से स्पष्ट है कि वृद्धदत्त विधि के विधान को टाल नहीं सका। चम्पक के मारने के प्रयत्न में वह स्वयं मृत्यु का शिकार हो जाता है। इस रास में 'भाग्य-लेख' नामक प्ररूढ़ि के साथ-साथ 'मृत्यु-पत्र' नामक मूल अभिप्राय का भी बडा सार्थक और समीचीन प्रयोग हुआ है। चंपक के 'पूर्व जन्म वृत्तान्त' में जर्जर दीवाल की कथा कही गई है, जो बाल-कथाओं की सुपरिचित प्रश्नोत्तरकी माला-शैली में वर्णित है। इसी वृत्तान्त में कपटकोशा वेश्या की चतुराई का चित्रण हुआ है, जिसे पढ़कर राजस्थानी की निम्नलिखित पद्यमयी लोकोक्ति का स्मरण हो आता है—

साहण हँसी साह घर आयो, विप्र हँस्यो गयो धन पायो।
तूं के हँस्यो रै बरड़ा भिखी, एक कला मैं अधकी सीखी ॥

धनदत्त श्रेष्ठी तथा पुण्यसार विषयक रास भी अपने ढंग के सुन्दर रास हैं।

लोक-कथाओं के मूल अभिप्रायों, तत्कालीन भाषा तथा देशी ढालों के अध्ययन की दृष्टि से इन रासों का विशेष महत्त्व है। इन रासों के सम्पादन के लिए श्री भँवरलालजी नाहटा बधाई के पात्र हैं।

पिलानी
३०-४-६१

कन्हैयालाल सहल
प्रिंसिपल बिड़ला आर्ट्स कालेज, *पिलानी*

महोपाध्याय समयसुन्दरजी की हस्तलिपि

प्रस्तावना

भारतीय वाङ्मय की गौरव वृद्धि करने वाले महान् कवियों में राजस्थान के उच्च कोटि के सन्त और साहित्यकार महोपाध्याय समयसुन्दर का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण है। संस्कृत मे उनके मौलिक व वृत्तिपरक अनेक ग्रन्थ है उनमें 'अष्टलक्षी' तो विश्व साहित्य का अजोड ग्रंथ है, जिसमें "राजानो ददते सौख्यम्" इन आठ अक्षरों वाले वाक्य के दस लाख से अधिक अर्थ करके सम्राट् अकबर व उसकी विद्वत् परिषद को चमत्कृत किया था। राजस्थानी एव गुजराती भाषा मे भी आपके रचित काव्यों की संख्या प्रचुर है। सीताराम चौपई जैसे जैन रामायण काव्य की ३७५० श्लोकों मे आपने रचना की थी। नलदमयन्ती, मृगावती, साब-प्रद्युम्न, थावच्चा, ४ प्रत्येक बुद्ध आदि अनेक भाषा काव्यों का निर्माण किया था। आपकी ५६२ लघु रचनाओं का सग्रह हमने अपनी "समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जलि" मे प्रकाशित किया है। उक्त ग्रन्थ मे आपकी जीवनी व रचनाओं के सम्बन्ध मे विस्तृत प्रकाश डाला गया है इसलिए यहाँ अधिक लिखना अनावश्यक है। संक्षेप मे आपका जन्म मारवाड़ प्रदेश के साचौर नामक जैन तीर्थ स्थान में पोरवाड़ रूपसी की भार्या लीलादेवी की कुक्षि से स० १६१५ के आसपास हुआ था। आप लघुवय में

ही युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिजी के करकमलों से दीक्षित हुए, आपके गुरुश्री का नाम सकलचन्द गणि था। सं० १६४१ से सं० १७०० तक आप अनवरत साहित्य साधना करते रहे। स० १६४९ मे सम्राट् अकबर के काश्मीर प्रयाण के समय एकत्रित विस्तृत सभा मे अपना अष्टलक्षी ग्रंथ विद्वज्जन समक्ष रखकर सबको आश्चर्यान्वित कर दिया था। इसी वर्ष फाल्गुन शुक्ला २ के दिन आपको वाचनाचार्य पद युगप्रधान श्रीजिनचंद्र-सूरिजी ने दिया। सं० १६७१ में लवेरा में आचार्य श्रीजिनसिंह सूरिजी ने आपको उपाध्याय पद से अलंकृत किया था। राज-स्थान, गुजरात, सिन्ध आदि में आपने विहार करके कई राजाओ एव शेख मकनुम आदि को प्रतिबोध देकर पचनदी के मत्स्य एवं गोहत्या का निषेध कराया था। वादी हर्षनन्दन आदि आपके ४२ विद्वान शिष्य थे, जिनकी शिष्य संतति अद्यावधि विद्यमान है। स० १७०२ चैत्र शुक्ला १३ को अह-मदाबाद मे आपका स्वर्गवास हुआ।

कथा कहानी के प्रति मानव का सहज आकर्पण आदिकाल से ही रहा है और इसी बात को लक्ष मे रखकर धर्म प्रचारकों ने भी कथा साहित्य को अपने उपदेश का माध्यम बनाया और जनता मे धर्म-सदाचार और नीति का विशद प्रचार किया। जैन विद्वानों ने परम्परानुगत पौराणिक और लोककथाओं को प्रचुरता से अपनाया। प्रस्तुत ग्रंथ मे कविवर समयसुन्दर के रचित पाँच राजस्थानी कथा काव्यो को प्रकाशित किया जा

रहा है। इनमे कुछ तो प्राचीन जैन ग्रन्थों से आधारित हैं एवं कुछ लोक कथाएँ भी है। सिंहल सुत-प्रियमेलक तीर्थ की कथा सम्बन्धी यह काव्य सं० १६७२ मेडता मे जेसलमेरी श्रावक कचरा के मुलतान में किये गए आग्रह के अनुसार दान-धर्म के माहात्म्य पर कौतुक के लिए रचे जाने का कवि ने उल्लेख किया है। दूसरी कथा वल्कलचीरी की है, यह बौद्ध जातक एवं महाभारत मे भी ऋषिश्रृङ्ग के नाम से प्राप्त है। सं० १६८१ में जेसलमेर में मुलतान निवासी जेसलमेरी साह कर्मचन्द्र के आग्रह से कवि ने इस कथा-काव्य का निर्माण किया है। तीसरी चम्पक सेठ की कथा अनुकम्पा दान के माहात्म्य के सम्बन्ध में सं० १६९५ जालोर में शिष्य के आग्रह से रची गयी थी, यह चौपाई दो खण्डों में विभक्त है इसके बीच में सं० १६८७ के दुष्काल का आँखों देखा वर्णन भी कवि ने सम्मिलित कर दिया है। चौथी कथा धनदत्त सेठ की व्यवहार शुद्धि या नीति के प्रसङ्ग से स० १६९६ आश्विन महीने मे अहमदाबाद मे रची गई है। पाँचवीं पुण्यसार चरित्र चौ० पुण्य के माहात्म्य को बतलाने के लिए सं० १६७३ में शान्तिनाथ चरित्र से कविवर ने निर्माण की है। हमने इस संग्रह मे पाँचों लघुकृतियों को प्राचीन व शुद्ध प्रतियों से उद्धृत किया है। जो हमारे अभय जैन ग्रन्थालय मे संरक्षित है और उनकी प्रशस्तियाँ भी प्रान्त में दे दी हैं। वल्कलचीरी चौ० की एक प्रति कविवर के स्वयं लिखित श्री पूरणचन्द्रजी

नाहर के संग्रह मे है, जिसका हमने अपने आदरणीय मित्र श्री विजयसिंहजी नाहर के सौजन्य से इसमें उपयोग किया है, एवं पुण्यसार चौ० की एक प्रति बीकानेर की सेठिया लाइब्रेरी मे है, जिसके पाठान्तरों का उपयोग कर पुष्पिका यहाँ साभार उद्धृत की जाती है :—

सवत् १७२९ प्रमिते कार्त्तिक मासे कृष्ण नवम्यां तिथौ महोपाध्यायजी श्री श्री ५ समयसुन्दरजी शिष्य वाचनाचार्य श्री मेघविजयजी तत् शिष्य वाचनाचार्य श्रीहर्षकुशलजी तत् शिष्य पण्डित प्रवर हर्षनिधान गणि तत् शिष्य हर्षसागर मुनि लिखितं। प० नयणसी प्रतापसी पठनार्थम् ॥

इन रासो मे सिंहलसुत चौ० आदि का अत्यधिक प्रचार रहा है और उसकी अनेक सचित्र प्रतियाँ भी उपलब्ध हैं। महाकवि समयसुन्दर की कृतियाँ अत्यन्त लोकप्रिय हैं, उनकी भाषा सरल और प्रासाद गुणयुक्त है। पाठकों से अनुरोध है कि वे मूल कृतियों का रसास्वादन करें। पाँचों रासों का कथासार भी आगे के पृष्ठों में प्रकाशित किया जा रहा है। पूर्व योजनानुसार इस सग्रह में कविवर के तीन रास ही देने अभीष्ट थे पर पीछे से दो रास और दे दिये गए। अतः पृष्ठ बढ़ जाने से लोक कथाओं के तुलनात्मक अध्ययन एवं कठिन शब्दकोश आदि देने का लोभ संवरण कर लेना पड़ा है, इसके लिए आशा है पाठकगण क्षमा करेंगे।

—भँवरलाल नाहटा

(१) सिंहलसुत चौ० का कथासार

सिंहलद्वीप के नरेश्वर सिंहल की रानी सिंहली का पुत्र सिंहलसिंह कुमार सूरवीर गुणवान और पुण्यात्मा था। वह माता पिता का आज्ञाकारी, सुन्दर तथा शुभ लक्षण युक्त था। एक वार वसत ऋतु के आने पर पौरजन क्रीड़ा के हेतु उपवन में गए, कुमार भी सपरिकर वहाँ उपस्थित था। एक जगली हाथी उन्मत्त होकर उधर आया और नगरसेठ धनदत्त की पुत्री जो खेल रही थी, अपने सुण्डादण्ड मे ग्रहण कर भागने लगा। कुमारी भयभीत होकर उच्च स्वर से आक्रन्द करने लगी—मुझे वचाओ! वचाओ! यह दुष्ट हाथी मुझे मार डालेगा 'हाय! माता पिता कुलदेवता स्वजन सब कहाँ गये, कोई चाँदनी रात्रि का जन्मा सत्पुरुष हो तो मुझे वचाओ! राजकुमार सिंहलसिंह ने दूर से विलापपूर्ण आक्रन्द सुना और परोपकार बुद्धि से तुरन्त दौड़ा हुआ आया। उसने बुद्धि और युक्ति के प्रयोग से कुमारी को उन्मत्त गजेन्द्र की सूंड से छुड़ा कर कीर्तियश उपार्जन किया।

सेठ ने कुमारी की प्राण रक्षा हो जाने पर बधाई बाँटनी शुरू की। राजा भी देखने के लिए उपस्थित हुआ, सेठ ने कुमार के प्रति कुमारी का स्नेहानुराग ज्ञात कर धनवती को राजा के

सम्मुख उपस्थित किया और सर्व सम्मति से कुमार के साथ पाणिग्रहण करा दिया। सिंहलसिंह अपनी प्रिया धनवती के साथ सुखपूर्वक काल निर्गमन करने लगा।

राजकुमार जिस गली मे जाता उसके सौन्दर्य्य से मुग्ध हो नगर वनिताएँ गृह कार्य छोड कर पीछे पीछे घूमने लगतीं। पचों ने मिलकर सिंहल नरेश्वर से प्रार्थना की कि आप कुमार को निवारण करो अथवा हमें विदा दिलाओ! राजा ने कुमार का नगर वीथिकाओं मे क्रीड़ा करना बन्द कर महाजनों को तो सन्तुष्ठ कर दिया पर कुमार के हृदय मे यह अपमान-शल्य निरन्तर चुभने लगा। कुमार ने भाग्य परीक्षा के निमित्त स्वदेश-त्याग का निश्चय किया और अपनी प्रिया धनवती के साथ अर्द्ध रात्रि मे महलों से निकल कर समुद्रतट पहुँचा। उसने तत्काल प्रवहणारूढ होकर परद्वीप के निमित्त प्रयाण कर दिया।

सिंहलकुमार का प्रवहण समुद्र की उत्ताल तरंगों के बीच तूफान के प्रखर झोको द्वारा झकझोर डाला गया। भग्न प्रवहण के यात्रीगणों को समुद्र ने उदरस्थ कर लिया। पूर्व पुण्य के प्रभाव से धनवती ने एक पाटिया पकड लिया और जैसे तैसे कष्टपूर्वक समुद्र का तट प्राप्त किया। वह अपने हृदय मे नाना विकल्पों को लिये हुए उद्वेग पूर्वक वस्ती की ओर बढी। नगर के निकट एक दण्ड कलश और ध्वज-युक्त प्रासाद को देख कर किसी धर्मिष्ठ महिला से नगरतीर्थ का नाम ठाम पूछा। उसने कहा—

यह कुसुमपुर नगर है और यह विश्वविश्रुत प्रियमेलक तीर्थ है। यहा का चमत्कार प्रत्यक्ष है, यहाँ जो मौन तप पूर्वक शरण लेकर बैठती है उसके बिछुड़े हुए प्रियजन का मिलाप निश्चय पूर्वक होता है। धनवती भी निराहार मौनव्रत ग्रहण कर वहाँ पतिमिलन का संकल्प लेकर बैठ गयी।

इधर सिंहलकुमार भी संयोगवश हाथ लगे हुए लम्बे काष्ट खंड के सहारे किनारे जा पहुँचा। आगे चल कर वह रतनपुर नगर मे पहुँचा, जहाँ के राजा रत्नप्रभ की रानी रतनसुन्दरी की पुत्री रत्नवती अत्यन्त सुन्दरी और तरुणावस्था प्राप्त थी। राजकुमारी को साँप ने काट खाया जिसे निर्विष करने के लिए गारुडी मंत्र, मणि, औषधोपचार आदि नाना उपाय किये गये पर उसकी मूर्छा दूर नहीं हुई, अन्ततोगत्वा राजा ने ढढोरा पिटवाया। कुमार सिंहलसिंह ने उपकार बुद्धि से अपनी मुद्रिका को पानी मे खोल कर राजकुमारी पर छिड़का और उसे पिलाया जिससे वह तुरन्त सचेत हो उठ बैठी। राजा ने उपकारी और आकृति से कुलीन ज्ञात कर कुमार के साथ राजकुमारी रत्नवती का पाणिग्रहण करा दिया रात्रि के समय रंगमहल में कोमल शय्या को त्याग कर धरती सोने पर रत्नवती ने इसका कारण पूछा। कुमार यद्यपि अपनी प्रिया के वियोग मे ऐसा कर रहा था पर उसे भेद देना उचित न समझ कहा कि—प्रिये! माता पिता से बिछुड़ने के कारण मैंने भूमि-शयन व ब्रह्मचर्य का नियम ले रखा है। राजकुमारी ने यह

सुन उसके माता पिता की भक्ति की प्रशंसा की। राजा को ज्ञात होने पर उसने कुमार का कुल वंश ज्ञात कर पुत्री व जामाता के विदाई की तैयारी की। एक जहाज में वस्त्र, मणि रत्नादि प्रचुर सामग्री देकर दोनों को विदा किया व साथ मे पहुंचाने के लिए रुद्र पुरोहित को भी भेजा। जहाज सिंहलद्वीप की ओर चला।

रत्नवती के सौन्दर्य से मुग्ध होकर रुद्रपुरोहित ने सिंहलकुमार को अथाह समुद्र मे गिरा दिया और उसके समक्ष मिथ्या विलाप करने लगा। राजकुमारी ने यह कुकृत्य उसी दुष्ट पुरोहित का जान लिया। उसके आगे प्रार्थना करने पर रत्नवती ने कहा मैं तो तुम्हारे वश मे ही हूँ अभी पति का बारिया हो जाने दो, कह कर पिण्ड छुडाया। आगे चलने पर समुद्र की लहरों मे पडकर प्रवहण भग्न हो गया। कुमारी ने तख्ते के सहारे तैर कर समुद्रतट प्राप्त किया और प्रियमेलक यक्ष का भेद ज्ञात कर जहाँ आगे धनवती बैठी थी, रत्नवती ने भी जा कर मौनपूर्वक आसन जमा दिया। पापी पुरोहित भी जोवित बच निकला और उसने कुसुमपुर आकर राजा का मंत्रिपद प्राप्त कर लिया।

सिंहलकुमार को समुद्र मे गिरते हुए किसीने पूर्व पुण्य के प्रभाव से ग्रहण कर लिया और उसे तापस आश्रम मे पहुँचा दिया। शुभ लक्षण वाले कुमार को देख कर हर्षित हुए तापस ने अपनी रूपवती नामक पुत्री के साथ पाणिग्रहण करा दिया।

करमोचन के समय कुमार को एक ऐसी अद्भुत कथा दी जो प्रति दिन खंखेरने पर सौ रुपये देती थी, इसके साथ एक आकाश-गामिनी खटोली भी दी, जिस पर बैठकर स्वेच्छानुसार जा सके। कुमार अपनी नव परिणीता पत्नी के साथ खटोली पर आरूढ हो गया, खटोली ने उसे कुसुमपुर के निकट ला उतारा। रूपवती को धूप और गरमी के मारे जोर की प्यास लग गई थी। अत कुमार जल लाने के लिये अकेला गया। ज्योंही वह जलकूप के निकट पहुँच कर पानी निकालने लगा एक भुजंग ने मनुष्य की भाषा मे अपने को कुए मे से निकाल देने की प्रार्थना की। कुमार ने उसे लम्बा कपडा डालकर वाहर निकाला। साँप ने निकलते ही उसपर आक्र-मण कर काट खाया जिससे कुमार कुब्जा और कुरूप हो गया। कुमार के उपालम्भ देने पर साँप ने कहा—बुरा मत मानो, इसका गुण आगे अनुभव करोगे। तुम्हारे मे संकट पडने पर मैं तुम्हें सहाय करूँगा। कुमार सविस्मय जल लेकर अपनी प्रिया के पास आया और उसे जल पीकर प्यास बुझाने को कहा। रूपवती ने कुब्जे के रूप मे पति को न पहिचान कर पीठ फेर ली और तुरन्त वहाँ से प्यासी ही चल दी। उसने इधर-उधर घूम कर सारा वन छान डाला, अन्त में पति के न मिलने पर निराश होकर वहीं जा पहुँची जहाँ प्रियमेलक तीर्थ की शरण लेकर दो तरुणियाँ बैठी थीं। रूपवती भी उसके पास जाकर मौन तपस्या करने लगी।

सिंहलकुमार कंथा और खाट कहीं छोड कर नगरी की शोभा देखता हुआ घूमने लगा, उसने अपनी तीनों प्रियाओं को भी तपस्यारत देख लिया। कुछ दिन बाद यह बात सर्वत्र प्रचलित हो गई कि तीन महिलाएँ न मालूम क्यो मौन तपश्चर्या मे लगी हुई हैं, जिन्होंने सौन्दर्य्यवती होते हुए भी तप द्वारा देह को कृश बना लिया है। यह वृन्तान्त सुनकर राजा के मन मे उन्हें बोलाने की उत्सुकता जगी। नरेश्वर ने नगर मे ढिंढोरा पिटाया कि जो इन तरुण तपस्विनियों का मौन भंग करा देगा उन्हें मैं अपनी पुत्री दूँगा। घूमते हुए वामनरूपी सिंहलकुमार ने पटह स्पर्श किया। राजा के पास ले जाने पर वामन ने दूसरे दिन प्रातःकाल युवतियों को बोलाने की स्वीकृति दी। दूसरे दिन राजा, मंत्री, महाजन आदि सब लोग प्रियमेलक तीर्थ के पास आकर जम गये। वामन ने कोरे पन्ने निकाल कर बाँचने का उपक्रम करते हुए कहा कि ये अदृश्याक्षर है। राजा आदि आश्चर्यपूर्वक सावधानी से सुनने लगे। वामन ने कहा—सिंहलकुमार अपनी प्रिया के साथ प्रवहणरूढ होकर समुद्र यात्रा करने चला, मार्ग मे तूफान के चक्कर में प्रवहण भग्न हो गया। इतनी कथा आज कही आगे की बात कल कहूँगा। धनवती ने कहा—आगे क्या हुआ? वामन ने कहा—राजन्! देखिये यह बोल गयी।

दूसरे दिन फिर सबकी उपस्थिति मे वामन ने कोरे पन्नों को बाँचते हुए कहा—"काष्ठ का सहतीर पकड़कर कुमार

रतनपुर नगर पहुँचा, वहाँ उसने राजकुमारी रत्नवती से व्याह किया फिर वहाँ से विदा होकर आते समय मार्ग में पापी पुरोहित ने कुमार को समुद्र में गिरा दिया।" उसने पोथी बाँधते हुए कहा आज का सम्बन्ध इतना ही है, आगे का सुनना हो तो कल आना। रत्नवती ने उत्सुकतावश कहा—"हाथ जोड़ती हूँ पण्डित आगे का वृतान्त कहो।" इस प्रकार दूसरी भी सब लोगों के समक्ष बोल गयी।

दूसरे दिन प्रातःकाल फिर लाखों की उपस्थिति में वामन ने पुस्तक वाचन प्रारम्भ किया। उसने कहा—कुमार को जल मे गिरते हुए किसी ने ग्रहण कर लिया फिर उसे तापस ने अपनी कन्या रूपवती को परणाई। वे दोनों दम्पति खटोलडी मे बैठ कर यहाँ आये, कुमार जल लेने के निमित्त कुएँ पर गया जिस पर वहाँ साँप ने आक्रमण किया इस प्रकार यह तीनों बातें हुई। वामन के चुप रहने पर रूपवती से चुप नहीं रहा गया, उसने भी आगे का वृतान्त पूछा। वामनने कहा—राजन्! अब तीनों स्त्रियाँ वोल चुकीं मुझे कुसुमवती देकर अपना वचन निर्वाह करो। राजा ने वचन के अनुसार घर आकर चौंरी माडकर विवाह की तैयारी की। वामन और राजकुमारी के सम्बन्ध से खिन्न होकर औरतों के गीत गान मे अनुद्यत रहने पर आगे का वृतान्त जानने की उत्सुकता से तीनों कुमारपत्नियाँ विवाह मण्डप मे जाकर गीत गाने लगीं। करमोचन के समय

उल्लासरहित साले ने कहा— साँप लो ! कुमार ने कुएँ के साँप को याद किया, उसने आते ही कुमार को डस दिया, जिससे वह मूर्छित हो गया। अब वे सब कन्याएँ मरने को उद्यत होकर कहने लगीं—हम भी इसके साथ ही मरेंगी, हमे इन्हीं का शरण है। इतने मे देव ने प्रगट होकर कुमार को अपने असली रूप में प्रगट कर दिया, सब लोग इस नाटकीय पटपरिवर्तन को देखकर परम आनन्दित हुए। कुसुमवती को अपार हर्ष था, अपने पति को पहचान कर चारों पत्नियाँ विकसित कमल की भाँति प्रफुल्लित हो गईं। अब कुसुमवती का व्याह बडे धूम-धाम से हुआ और कुमार सिंहलसिंह अपनी चारो पत्नियों के साथ आनन्दपूर्वक काल निर्गमन करने लगा। कुमार ने देव से पूछा—तुम कौन हो और निष्कारण मेरा उपकार कैसे किया ? देव ने कहा—मैं नागकुमार देव हूँ, मैंने ही तुम्हें समुद्र मे डूबते को बचाकर आश्रम में छोडा, तुम्हे कुब्जे के रूप मे परिवर्त्तन करने वाला भी मैं हूँ। तुम्हारे पूर्व पुण्य तथा प्रबल स्नेह के कारण मैं तुम्हारा सान्निध्यकारी बना। कुमार के पूछने पर देव ने पूर्व भव का वृतान्त बतलाना प्रारम्भ किया।

पूर्व जन्म वृत्तान्त

धनपुर नगर में धनजय नामक सेठ और उसके धनवती नामक सुशीला पत्नी थी। एक बार मासक्षमण तप करने वाले त्यागी वैरागी निग्रन्थ मुनिराज के पधारने पर धनदेव ने उन्हें

सत्कारपूर्वक अन्न जलादि वहोराया जिसके पुण्य प्रभाव से वह मर कर महर्द्धिक नागकुमार देव हुआ। धनदत्तके भी भावपूर्वक मुनिराज को सेलडी (ईख) का रस दान करते हुए तीन वार भाव खण्डित हुआ और मर कर तुम सिंहलसिंह हुए। तीन वार परिणाम गिरने से तुम समुद्र में गिरे फिर वहराते रहने से स्त्रियों की प्राप्ति हुई। तुम्हें कुरूप वामन करने का मेरा यह उद्देश्य था कि अधम पुरोहित तुम्हें पहिचान कर मारने का प्रयत्न न करे। सिंहलसिंह कुमार को अपना पूर्व भव सुनकर जातिस्मरण ज्ञान हो आया जिससे अपना पूर्व भव वृतान्त उसे स्वय ज्ञात हो गया। राजा ने पुरोहित पर कुपित हो उसे मारने की आज्ञा दी, कृपालु कुमार ने उसे छुडा दिया।

अब कुमार के हृदय में माता-पिता के दर्शनों की उत्कण्ठा जागृत हुई, उसने स्वसुर से विदा मांगी और उडनखटोली पर आरूढ़ हो चारों पत्नियों को चारो ओर तथा मध्य मे स्वय विराजमान हो आकाशमार्ग से सत्वर अपने देश लौटा। माता-पिता के चरणो मे उपस्थित होकर उन सबका वियोग दूर किया। चारों बहुओं ने सासू के चरणों मे प्रणाम कर आशीर्वाद पाया। राजा ने कुमार को अपने सिंहासन पर अभिषिक्त कर स्वय योग-मार्ग ग्रहण किया।

राजा सिंहल सुत (सिंह) श्रावक व्रत को पालन करता हुआ न्याय पूर्वक राज्य करने लगा। उसने उत्साह पूर्वक धर्म

कार्य करने मे अपना जीवन सफल किया। जिनालय निर्माण, जीर्णोद्धार, शास्त्र लेखन, साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका की भक्ति, औषधालय निर्माण, दानशाला तथा साधारण द्रव्य इत्यादि दसो क्षेत्रों मे प्रचुर द्रव्य व्यय किया। दिनोदिन अधिकाधिक धर्म ध्यान करते हुए गृहस्थ धर्म का चिरकाल पालन कर आयुष्य पूर्ण होने पर समाधिपूर्वक मरकर सौधर्म देवलोक मे उत्पन्न हुआ वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र मे उत्पन्न होकर मोक्ष पद प्राप्त करेगा।

(२) वल्कलचीरी

भगवान पार्श्वनाथ, सद्गुरु और सरस्वती को नमस्कार कर पापों का नाश करने के हेतु कविवर समयसुंदर वल्कलचीरी केवली की चौपई का निर्माण करते हैं।

मगध देश का राजगृह नगर अत्यन्त समृद्धिशाली था। यहाँ भगवान महावीर ने १४ चातुर्मास किये। यहीं धन्ना, शालिभद्र, नन्दन मणिहार, कयवन्ना सेठ, जंबू स्वामी, मेतार्य मुनि, महाराजा श्रेणिक, अभयकुमार आदि महापुरुष हुए हैं, गौतम स्वामी की निर्वाणभूमि भी यही है। एक वार भगवान महावीर राजगृह के गुणशील चैत्य मे समवसरे। वनपालक से वधाई पाकर श्रेणिक महाराजा भगवान को वन्दनार्थ चला। उसने मार्ग में एक महामुनि के दर्शन किये जो एक पैर के सहारे

दोनों हाथ ऊँचा किये सूर्य के समक्ष खड़े तपश्चर्या कर रहे थे। सुमुख और दुमुख नामक श्रेणिक के दो राजदूत उधर से निकले। सुमुख ने मुनिराज के त्याग वैराग्य की बडी भारी प्रशंसा-स्तुति की तो दुमुख ने कहा—यह कायर और पाखडी है, अपने बालक पुत्र को राजगद्दी देकर स्वय तपश्चर्या का ढोंग करता है! अब शत्रु लोग मौका पाकर आक्रमण करेंगे और इसके पुत्र को मार कर रानियों को वंदी कर लेंगे। इससे यह निःसन्तान होकर दुर्गति का भाजन होगा।

दुमुख के वचन सुनकर मुनिराज के हृदय मे पुत्र मोह जगा और उसके मनः परिणाम, रौद्र ध्यान मे लीन हो गए, वह मन ही मन शत्रुओं के साथ संग्राम करने लगा। श्रेणिक ने हाथी से उतर कर मुनिराज को वन्दन किया और वहाँ से समवशरण मे आकर भगवान का उपदेश सुनने लगा। उसने भगवान से पूछा—मैंने मार्ग मे जिस उग्र तपस्वी राजर्षि को वन्दन किया, वह यदि अभी मरे तो किस गति में जावे? भगवान ने कहा—सातवीं नरक। श्रेणिक के मन मे सन्देह हुआ और क्षणान्तर में फिर प्रश्न किया तो भगवान ने उत्तर दिया—सर्वार्थसिद्ध। श्रेणिक ने साश्चर्य कारण पूछा तो भगवान ने कहा दुमुख के वचनों से रौद्र ध्यान मे चढ कर जब वह मानसिक संग्राम रत था तो उसके परिणाम नरकगामी के थे पर जब उसे अपने लोच किये हुए सिर का ख्याल आया तो पश्चात्ताप पूर्वक शुभ ध्यान मे आरूढ़ हो गया और भावनाओं

के बल से अशुभ कर्मों को खपा कर इस समय वह अपने आत्म ध्यान में तल्लीन हो रहा है ! श्रेणिक ने पूछा—भगवन् ! राजर्षि ने बालक को राज्य देकर किस लिए प्रव्रज्या स्वीकार की ? भगवन् ने फरमाया—

पोतनपुर के राजा सोमचंद्र और उनकी राणी का नाम धारिणी था। एक बार राजा रानी महल में बैठे हुए थे। रानी प्रेमपूर्वक राजा का मस्तक सहला रही थी तो उसने एक श्वेत केश देखकर कहा—देव ! देखिये, दूत आ गया है। राजा ने जब इधर उधर देखकर किसी दूत को न पाया तो रानी से दूत का रहस्य पूछा रानी ने श्वेत केश दिखाते हुए कहा—यह देखिये, जम का दूत। राजा का हृदय जागृत हो गया, उसने कहा—मेरे पूर्वजों ने तो श्वेत केश आने से पहिले ही राज पाट त्याग कर दीक्षा स्वीकार कर ली थी पर खेद है कि मैं अभी तक मोह माया मे फँसा हुआ हूँ। क्या करूँ अभी पुत्र प्रसन्नचंद्र छोटा है। अतः तुम उसके पास रहो, मैं तो वनवासी बनूँगा। रानी ने कहा—मैं तो आपके साथ ही छाया की तरह रहूँगी। पुत्र राजसुख भोगता रहे ! अंत मे राजा सोमचंद्र और धारिणी ने पुत्र को राजगद्दी पर बैठा कर स्वयं तापसी दीक्षा स्वीकार कर ली वे तपसाश्रम की कुटिया में रहने लगे। रानी इंधन लाती, गोबर से कुटिया में लीपन करती। राजा वन-व्रीहि लाता और रानी तृणों की शय्या बिछाती, इस तरह दोनों कठिन तप करते हुए वन मे रहते।

आश्रम में रहते हुए सोमचद्र ने जब रानी धारिणी को गर्भवती देखकर उसका कारण पूछा तो रानी ने कहा—मेरे गृहस्थावस्था में ही गर्भ था पर दीक्षा लेने मे अन्तराय पड़ने के भय से मैंने उसे अप्रकट रखा। गर्भकाल पूर्ण होने पर धारिणी ने पुत्र प्रसव किया और तत्काल बीमार होकर मर गई। वल्कलवस्त्र मे लपेटा हुआ होने से पिता ने उसका 'वल्कलचीरी' नाम दिया। कुछ दिन तक तो धाय माता ने उसका लालन पालन किया पर जब वह भी काल प्राप्त हो गई तो पिता ने उसे भैंस का दूध, वनफल और बिना बोये हुए अन्न से पाल पोष कर बडा किया। वल्कलचीरी मृगशावकों के साथ खेलता, पढता-लिखता और पिता की सेवा किया करता। वह तरुण हो जाने पर भी भोला-भाला ब्रह्मचारी था, स्त्री जाति क्या होती है ? यह भी उसे मालूम नहीं था।

राजा प्रसन्नचंद्र ने जब सुना कि धारिणी माता पुत्र प्रसव करने के बाद दिवगत हो गई और मेरा भाई अब तरुण हो गया है तो उसका हृदय भ्रातृ स्नेह से अभिभूत हो गया। वह उसे देखने के लिए उत्कण्ठित हुआ। उसने चित्रकारों को आश्रम मे भेज कर वल्कलचीरी का चित्रपट बनवा कर मँगाया। जब चित्रकारों ने उसका चित्र राजा को लाकर दिया तो उस सुन्दर तरुण भ्राता के चित्र को हृदय से लगाकर विचार करने लगा कि पिताजी तो वृद्धावस्था मे वैराग्यपूर्ण हृदय से दुष्कर तप करते है पर मेरा छोटा भाई इस तरुण अवस्था मे

जंगल मे कष्ट पाता है और इधर मैं राज्य ऋद्धि भोगता हूँ अतः मुझे धिक्कार है ! उसने भाई को नगर में बुलाने के लिए कई वेश्याओं को आज्ञा दी कि तुम लोग तापस-वेश करके आश्रम मे जाओ और अपने हाव-भाव, कला-विलास से आकृष्ट कर मेरे भाई वल्कलचीरी को शीघ्र यहाँ ले आओ !

तरुणी वेश्याएं बील, फलादि लेकर तापसाश्रम पहुँची। वल्कलचीरी ने अतिथि आये जान कर उनका स्वागत करते हुए पूछा कि आप लोग किस आश्रम से आये है ? उन्होंने कहा हम लोग पोतन आश्रम मे रहते है। जब वल्कलचीरी ने उन्हें वन-फल खाने को दिये तो उन्होंने अपने लाए हुए फल उसे देते हुए कहा कि—देखो हमारे आश्रम के ये स्वादिष्ट फल है, तुम तो निरस फल खाते हो। वल्कलचीरी ने उनकी सुकुमार देह पर हाथ लगाया और पूछा कि तुम्हारे हृदयस्थल पर ये वील की तरह सुकोमल सुस्पर्श क्या है ? वेश्याओं ने कहा— हमारे आश्रम का सुकुमाल स्पर्श और मधुर फल पुण्योदय से ही मिलता है। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हमारे आश्रम में चलो ! वल्कलचीरी मधुर फलों के स्वाद और अग स्पर्श से आकृष्ट हो कर पोतन आश्रम चलने के लिए प्रस्तुत हो गया। वेश्याओं ने नये वस्त्र पहिना कर उसके पहिने हुए वल्कल को वृक्ष पर टंगा दिया एवं सकेतानुसार आश्रम से निकल पड़े। वन में जब दूर से ऋषि सोमचंद्र के आने का समाचार उन्होंने सुना तो भय के मारे वेश्याएं भग गईं।

तापसों (वेश्याओं) को न देख कर वल्कलचीरी भयभ्रान्त होकर वन मे घूमने लगा, इतने ही मैं उसने एक रथी को देखा और उसे अभिवादन पूर्वक पूछा कि—तुम कहा जाओगे ? उसने कहा मैं पोतन जा रहा हूँ ! वल्कलचीरी भी पोतन आश्रम जाने को उत्सुक तो था ही, अतः उससे अनुमति लेकर उसके साथ साथ चलने लगा।

वल्कलचीरी रथ के पीछे चलता हुआ रथी की स्त्री को तात ! तात !! कहकर पुकारने लगा। उसकी स्त्री ने जब इस व्यवहार पर आश्चर्य प्रगट किया तो रथी ने कहा—यह ऋषिपुत्र भोला है, इसने कभी स्त्री देखी नहीं है। इसके लिए तो सारा संसार ही तापस है। आगे चलकर वल्कलचीरी ने पूछा—बड़े-बड़े मृगों को मारते हुए इस मे क्यों चलाते हो ? तो रथी ने कहा—यह इनके कर्मों का दोष है, मैं क्या करूँ ? रथी ने ऋषिपुत्र को खाने के लिए लड्डू दिये तो उसके स्वाद से प्रसन्न होकर कहा—पोतन आश्रम के तापसों (वेश्याओं) ने भी मुझे ऐसे फल दिये थे। वल्कलचीरी जगल के निरस फलों से विरक्त हो गया और शीघ्र पोतन आश्रम पहुँचने के लिए उसके हृदय मे तालावेली लग गई। आगे चलकर एक चोर के साथ रथी की भिडन्त हो गई। रथी के वार से घायल चोर ने प्रसन्न होकर मरते हुए अपना सारा माल उसे दे दिया। पोतनपुर पहुँचने पर रथी ने धन का बँटवारा करते हुए वल्कलचीरी से कहा—तुम मेरे राह के मित्र हो, अपने हिस्से का यह धन

संभालो, क्योंकि यहाँ इसके विना तुम्हें खान-पान या ठहरने को स्थान तक नहीं मिलेगा।

वल्कलचीरी पोतनपुर नगर की शोभा देखता हुआ इतस्ततः घूमने लगा। वह वहाँ की ऋद्धि समृद्धि देख कर मन्न में करता इस आश्रम के लोग बड़े सुखी प्रतीत होते है। वह लोगों को देखकर तात! तात! कहता हुआ अभिवादन करता तो सब लोग उसके भोलेपन की बड़ी हंसी उड़ाते। उसे घूमते घूमते सध्या हो गई पर कहीं रहने को आश्रय नहीं मिला अन्त मे वह एक वेश्या के यहाँ जा कर उसे बहुतसा द्रव्य देकर उसके यहाँ ठहरा। वेश्या ने नापित को बुलाकर उसके लम्बे लम्बे नख उतरवाये, जटाजूट को खोलकर सुगंधित तेल और कंघे द्वारा सुसंस्कारित किए। स्नानादि से उसका शरीर निर्मल कर सुसज्जित किया। वल्कलचीरी के ना ना करने पर वेश्या ने कहा—यदि यहाँ रहना हो तो हमारा अतिथि सत्कार चुपचाप जैसे कहते हैं, स्वीकार करो। वेश्या ने उसे वस्त्र आभरण पहिना कर अपनी पुत्री के साथ उसका पाणिग्रहण करा दिया। विवाह के सारे रीति रिवाज देखकर और वेश्यापुत्री के साथ शयनगृह मे जाते हुए भोले ऋषिकुमार ने पोतनपुर के अतिथि सत्कार को बडा ही आश्चर्यजनक अनुभव किया।

इधर जो वेश्याएँ तापस रूप मे आश्रम जाकर वल्कलचीरी को वहका लाई थी, वे सोमचन्द्र के भय से भग कर राजा के पास आई और सारा वृतान्त उससे कह सुनाया। राजा

प्रसन्नचन्द्र भाई के आश्रम से निकल कर नगर न पहुँचने के कारण बड़ा चिन्तित हुआ और शोकपूर्ण हृदय से रात्रि व्यतीत करने लगा। जब उसने गीत वाजित्र सुने तो कहा—मेरे शोकपूर्ण वातावरण मे यह जिसके घर गीत वाजित्र हो रहे है, उसे पकड़कर लाओ! राजपुरुषों ने वेश्या को राजा के सामने उपस्थित किया। वेश्या ने मधुरवाणी से कहा—राजन्! ज्योतिषी के वचनानुसार हमारे घर में अनाहूत आये हुए ऋषिपुत्र के साथ मैंने अपनी पुत्री का विवाह किया है। मेरे घर मे उसी के सोहले गीत-वाजित्रादि मगलकृत्य किये जा रहे हैं। मुझे श्रीमान् के चिन्ता-शोक का बिल्कुल ज्ञान नहीं था, अतः क्षमा करें! राजाने अपने पास रहा हुआ चित्र दिखाकर विश्वस्त व्यक्तियो को उसे पहचानने के लिए भेजा। और अपने भाई की प्रतीति होने पर महोत्सवपूर्वक गजारूढ कर अपने पास राजमहल मे बुला लिया। राजाने उसे खान-पान रीति-रिवाज और गृहस्थ के सारे शिष्टाचार सिखाये और कई सुन्दर कन्याओं से विवाह करवा दिया। एक बार बाजार मे वल्कलचीरी के साथी रथी को चोर से प्राप्त आभरणों को बेचते हुए, आभरणों के वास्तविक स्वामी ने देखा और उसे गिरफ्तार करवा दिया तो वल्कलचीरी ने अपने मित्र रथी को पहिचान कर छुडवा दिया।

इधर आश्रम से वल्कलचीरी के एकाएक गायब हो जाने से राजर्षि सोमचन्द्र को अपार दुख हुआ। उनके तो वृद्धावस्था

मे एक मात्र पुत्र का ही आधार था। पुत्र की चिन्ता मे राजर्षि झुरते हुए अन्धे हो गए। अन्तमे जब दूसरे तापसों के मुखसे वल्कलचीरी के पोतनपुर पहुँचने के समाचार उन्हें ज्ञात हुए तो कुछ सन्तोष अनुभव किया। वृद्ध तपस्वी के लिये अन्य तापस लोग वनफल आदि पहुंचा कर सेवा सत्कार कर देते थे।

वल्कलचीरी को पोतनपुर मे बारह वर्ष बीत गए, एक दिन रात्रि के समय वह जगकर अपना आश्रम जीवन स्मरण करने लगा। उसे अपने पिता की याद आ गई और वह अपने को कोटिशः धिक्कारता हुआ पश्चाताप करने लगा। उसने पुनः पिता की सेवा में आश्रम जाने का अपना निश्चय, भाई प्रसन्नचन्द्र के समक्ष व्यक्त किया। दोनों भाई आश्रम के पास पहुच कर घोड़े से उतर पड़े। वल्कलचीरी आश्रम की सारी वस्तुओं को दिखाते हुए भाई को कहने लगा—यहाँ मैं वनफल इन्हीं वृक्षों से प्राप्त करता, इन्हीं भैंसो को दूह कर पिता-पुत्र हम दूध पीते। इन्हीं मृगशावकों के साथ मे खेलता हुआ समय निर्गमन करता था। इस प्रकार आश्रम की शोभा देखते हुए दोनो भाई राजर्षि सोमचन्द्र के पास जाकर चरणों मे गिरे। और अपने पुत्रों का परिचय प्राप्त होते ही राजर्षि का हृदय हर्षप्लावित हो गया और हर्षाश्रुओं के प्रवाह से उसके आँखों के पटल दूर हो गए। वे लोग परस्पर सारी बीती बातें और कुशलप्रसन्न पूछने लगे।

वल्कलचीरी ने एक कुटी मे जाकर तापसोपगरणों को देखा और उनका प्रतिलेखन करते हुए ऊहापोह पूर्वक जाति-स्मरण ज्ञान प्राप्त किया। उसे अपने मनुष्य और देव के भव स्मरण हो आये। उसे साधुपन के आदर्शका ध्यान हुआ और उच्च आत्म भावना भाते हुए लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। देवताओं ने प्रगट होकर साधुवेश दिया। वल्कलचीरी केवलीने प्रत्येकवुद्ध होकर पिता व भाई को प्रतिवोध दिया और स्वय अन्यत्र विहार कर गए। राजा प्रसन्नचन्द्र वैराग्यपूर्ण हृदय से पोतनपुर लौटे, उनके हृदय में ससार त्याग की प्रबल भावना थी।

भगवान् महावीर ने कहा—श्रेणिक! एक दिन हम पोतनपुर के उद्यान मे समौसरे प्रसन्नचन्द्र वदनार्थ आया और उपदेश श्रवणानन्तर अपने वाल पुत्र को राजगद्दी पर स्थापित कर स्वय हमारे पास दीक्षित हो गया। आर अब उग्र तपश्चर्या द्वारा अपनी आत्मा को तपसयम से भावित करता है। जब भगवान ने इतना कहा तो गगनागण में देव-दुंदुभि सुनाई दी और देवताओं का आगमन हुआ। श्रेणिक द्वारा इसका कारण पूछने पर भगवानने फरमाया कि प्रसन्नचन्द्र राजर्षि को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है। श्रेणिक राजा ने साश्चर्य राजर्षि की प्रशंसा करते हुए पुनः पुनः वन्दन किया। अन्त में कविवर समयसुन्दर वल्कलचीरी मुनिराज के गुण गाते हुए मोक्ष सुख की कामना करते हैं।

(३) चंपक सेठ

कविवर समयसुन्दर जालोर मण्डण पार्श्वनाथ और स्वर्णगिरि के भूषण महावीर भगवान को नमस्कार कर अपने माता पिता व दीक्षा-विद्या गुरु को नमनपूर्वक दान धर्म की विशेषता बताने के लिए चम्पकसेठ की चौपाई निर्माण करते हैं।

पूर्व देश मे चम्पापुरी नामक समृद्धिशाली नगरी थी जहाँ के ८४ चौहटे, सतमजिले आवास एवं नगर के इतर वर्णन मे कवि ने २३ गाथाओं की ढाल लिखी है। इस नगरमें राजा सामन्तक राज्य करता था। इसी चम्पापुरी मे वृद्धदत्त नामक एक धनवान व्यापारी रहता था जिसके पास ९९ करोड़ स्वर्णमुद्राएं थीं, पर वह एक पैसा भी खरच न कर कोठे में बन्द कर आठों पहर उसकी रक्षा करता था। सेठ के कौतुकदेवी स्त्री और तिलोत्तमा नामक सुन्दर पुत्री थी। उसके साधुदत्त नामक भाई था, जो सेठ के साथ ही रहता था। वृद्धदत्त सेठ घी, धान्य आदि का व्यापार करने के साथ खेती-बाडी, लेन-देन का भी धन्धा करता था पर उसकी शोषक वृत्ति इतनी प्रबल थी कि लोग प्रभात वेला मे उसका नाम तक लेना पसन्द नहीं करते। एक दिन स्वर्णमुद्राओं की रक्षा में सोये हुए सेठ को अर्द्धरात्रि के समय एक देव ने आकर चेतावनी दी कि सेठ! तुम्हारे धन का भोगने वाला उत्पन्न

हुआ है। तीन रात तक जब लगातार सेठ को यही सवाद मिला तो वह अपने कष्टोपार्जित द्रव्य को स्वयं अपुत्रिया होने के कारण दूसरे द्वारा भोगने की बात जानकर अत्यन्त चिन्तातुर हुआ। उसने इसके भोगने वाले का पता लगाने के हेतु कुलदेवी की आराधना की और अन्नजल त्याग कर सो गया। सातवें दिन देवी ने प्रत्यक्ष होकर सेठ से पूछा कि तुमने मुझे क्यों आराधन किया। सेठ ने देवी से पूछा कि मेरा धन भोगने वाला कहाँ उत्पन्न हुआ है ? देवी—कम्पिलपुर के त्रिविक्रम वणिक के यहाँ पुष्पवती दासी की कुक्षि में तुम्हारे धन का भोक्ता उत्पन्न हुआ है—बतला कर अदृश्य हो गई।

दूसरे दिन प्रातःकाल वृद्धदत्त पारणा करने के पश्चात् अपने भ्राता साधुदत्त से एकान्त में इस विषय मे विचार विमर्श करने लगा। साधुदत्त ने कहा—देववाणी असत्य नहीं होती, कर्मों के आगे कोई जोर नहीं। वृद्धदत्त ने कहा—भाग्य करोसे न बैठकर किसी भी उपाय से अपने द्रव्य की रक्षा करनी चाहिए। उद्यम, धैर्य्य, पराक्रम, बल साहस और बुद्धि के सामने देव भी भय खाते हैं, अतः पुरुषार्थ नहीं छोड़ना चाहिए। साधुदत्त ने कहा—भाग्य के बिना उद्यम का कोई मूल्य नहीं, पपीहा तालाब का पानी पीता है तो गले मे से निकल जाता है। अतः भावी को कोई मिटा नहीं सकता, मैं इस विषय में एक दृष्टान्त सुनाता हूँ।

भावी न टलसकने पर दृष्टान्त

रत्नस्थल नगर मे रतनसेन नामक राजा अत्यन्त प्रतापी था जिसका पुत्र रत्नदत्त ७२ कलाओं में निपुण और सुन्दर था। जव राजकुमार तरुणावस्था को प्राप्त हुआ तो राजा ने उसके योग्य कन्या की गवेषणा के लिए जन्मपत्री व चित्रपट देकर चारों दिशाओं मे सोलह-सोलह व्यक्तियों को भेजा। अतः सभी लोग योग्य कन्या न पाकर वापस लौट आये, पर जो उत्तर दिशा मे गये उन्होंने गंगातटवर्त्ती चन्द्रस्थल के राजा चन्द्रसेन की पुत्री चन्द्रवती को कुमार के सर्वथा योग्य ग्यात कर सम्बन्ध पक्का कर लिया। राजा चन्द्रसेन ने जव उनका लग्न मुहूर्त्त दिखाया तो १६ दिन के वाद ही निकला। मंत्री ने कहा घडी भर मे योजन भूमि उल्लंघन करने वाले ऊँट को तय्यार कर तुम लोग जाओ, सात दिन जाने और सात दिन आने मे लगेंगे, तुरंत वर को ले आवो ताकि विवाह का मुहूर्त्त साध लिया जाय। वे पुरुष रत्नस्थल मे आये और राजाने तुरन्त कुमार को चन्द्रस्थल के लिए रवाना कर दिया। अव इधर जो घटना हुई वह वतलाता हूँ।

समुद्र के वीच चित्रकूट पर्वत पर लंका नामक समृद्धिपूर्ण नगरी का स्वामी त्रिखण्डाधिप रावण राज्य करता था। एक दिन इसकी सभा मे एक नैमित्तिक आया, जिसे रावण ने पूछा कि मेरे जैसे शक्तिशाली का भी कोई घातक होगा? यदि भविष्य जानते हो तो वतलाओ। ज्योतिषी ने कहा—अयोध्या

के राजा दशरथ के यहाँ राम-लक्ष्मण पुत्र होंगे जो बड़े होने पर तुम्हें मारेंगे ! उनके सिवा दूसरा तुम्हें कोई भय नहीं है, भावी को कोई मिटा नहीं सकता। इस बात की प्रतीति के लिए देखो आज से सातवें दिन रत्नस्थल के राजकुमार का विवाह चन्द्रस्थल की राजकुमारी चन्द्रवती से होगा यदि यह अन्यथा हो जाय तो तुम भी निर्भय हो सकते हो ! रावण ने कहा—इसका क्या ? यह तो अन्यथा करना बिलकुल आसान है ! ज्योतिषी ने कहा—यदि मैं झूठा पड़ा तो पंचाग फाडकर अपनी जनोई तोड डालूँगा !

रावण ने ज्योतिषी की बात मिथ्या करने के लिए राक्षसों को भेजकर वरनोले घूमती हुई राजकुमारी को हरण कर अपने यहाँ मगा लिया। उसने दात की पेटी मे खान पान की सारी सामग्रीं सहित राजकुमारी को बन्द कर विद्यादेवी को आदेश दिया कि तुम तिमंगली-मत्स्य का रूप कर अपने मुँह में पेटी रख कर गगासागर के संगम पर रहो। सात दिन पूरे होने पर जब मैं तुम्हे याद करूँ तब आ जाना। तिमंगली, रूपी देवी गंगासागर में उर्द्धमुख करके रहने लगी। कुमारी चन्द्रावती के भय और चिन्ता का कोई पारावार नहीं था। अब रावण ने तक्षक नाग को बुलाकर आदेश दिया कि रत्नदत्तकुमार जो चन्द्रस्थल के लिए रवाना हुआ है उसे जाकर तुरत सर्पदश द्वारा निर्जीव कर दो। वह भयंकर विषधर कुमार को डस कर रावण के पास आया तो रावण ने ज्योतिषी को

बुलाकर कहा कि मैंने तुम्हारा कथन अन्यथा कर दिया है। ज्योतिषी ने निर्भयता पूर्वक कहा—(अभी ७ दिन में क्या होता है देखिये) होनहार नहीं मिट सकती।

जब राजकुमार सर्प विप से नीला होकर अचेत हो गया तो वहुत से गारुडिक, वैद्य लोगों को बुलाकर उसे निर्विष करने का प्रयत्न किया गया पर असफल होने पर वड़े वैद्य की राय से उसे एक मंजूषा में बन्द कर गगा मे प्रवाहित कर दिया गया। गंगा मे बहती हुई वह पेटी समुद्र मे प्रविष्ट हुई। उस समय तिमगली ने सोचा उर्द्धमुख कर कुमारी की पेटी को उठाये कष्ट पाते हुए मुझे सात दिन होने आए। अतः अब थोड़ा आराम करलूँ। उसने पेटी को समुद्रतट पर रख दी और स्वयं समुद्र मे केलि करने के लिए चली गई। राजकुमारी पेटी से बाहर निकल कर समुद्र का दृश्य देखने लगी, उसने राजकुमार वाली पेटी को समुद्र की लहरों मे बहती देखकर बाहर निकाल ली। राजकुमारी ने पेटी खोलते ही विपाक्त राजकुमार को देखकर अमृतपान कराया और अपने हाथ मे रही हुई मुहरा की निर्विप मुद्रा के प्रयोग से राजकुमार का सारा जहर उतार दिया। दोनों ने एक दूसरे को पहिचान कर पूरा वृतान्त ज्ञात कर लिया और धूलि की ढिगली करके परस्पर गंधर्व विवाह कर लिया, राजकुमारी ने समुद्रतट पर रहे हुए बहुत से मोती, माणिक, प्रवाल आदि संग्रह कर लिए और दोनों ने गठबंधन पूर्वक पेटी मे प्रविष्ट होकर वापस उसी प्रकार पेटी बंद कर

ली। थोड़ी देर में तिमंगली मत्स्य ने आकर पेटी को अपने मुँह मे रख लिया। इधर रावण ने ७ दिन की अवधि बीत जाने पर ज्योतिषी के सामने तिमगली मत्स्य (देवी) को बुलाकर जब पेटी को खोला तो उसमें वर-कन्या को विवाहित देखकर उनसे साश्चर्य सारा वृतान्त ज्ञात किया और ज्योतिषी को धन्यवाद देकर विदा किया और वर कन्या को कुशल क्षेम पूर्वक अपने अपने पितृगृह पहुंचा दिया।

वृद्धदत्त ने साधुदत्त से उपर्युक्त दृष्टान्त सुनाकर कहा भाई ! तुम भोले हो! उद्यम के आगे भावी कुछ नहीं, मै भी तुम्हें एक-दृष्टान्त उद्यम पर सुनाता हूँ!

उद्यम से रख में मेख-दृष्टान्त—

मथुरा नगरी मे हरिवल राजा राज्य करता था। उसके-सुबुद्धि नामक मत्री था। संयोगवश राजा और मत्री के हरदत्त और मतिसागर नामक पुत्र एक साथ उत्पन्न हुए। मत्री ने अर्द्ध-रात्रि के समय महल से निकलते हुए एक स्त्री को देखा। मत्री ने उसका हाथ पकड कर पूछा कि तुम कौन हो! उसने कहा मैं त्रिधाता हूँ और छट्ठी रात्रि का लेख लिख कर आई हूँ! क्या लिखा है? पूछने पर उसने कहा—राजकुमार शिकार मे एक ही जीव (पशु-पक्षी) प्राप्त करेगा और मत्रिपुत्र अपने मस्तक-पर एक ही भारी लावेगा! मंत्री ने कहा—मुग्धे! कुल-घराने के अयोग्य यह क्या लिखा? उसने कहा विधि के विधान को

कौन मेट सकता है ? मंत्री ने कहा—मैं बुद्धिबल से तुम्हारा लेख विघटन कर दूंगा और तुम देखती ही रहोगी !

एक वार मथुरा पर शत्रु सेना का आक्रमण हुआ जिसके साथ युद्ध मे वहाँ का राजा हरिवल काम आ गया। मथुरा को लूट कर शत्रुओं ने अपना राज्य जमा लिया। राजकुमार हरिदत्त और मंत्रिपुत्र मतिसागर दोनों नगर से भाग छूटे और भिक्षावृत्ति करते हुए लखमीपुर गाव मे पहुँचे। हरिदत्त ने पहले तो एक व्याध के घर काम किया, पीछे अपनी एक स्वतत्र झोंपडी वाँध कर रहने लगा वह शिकार मे एक ही जीव प्रतिदिन प्राप्त करता। मतिसागर भी उसी गाँव मे इंधन की एक भारी लाकर जैसे तैसे अपना पेट भरता। एक दिन सुबुद्धि मंत्री घूमता फिरता लखमीपुर पहुँचा और उसने अपने पुत्र को इंधन की भारी लाते हुए देखा। उसने कहा वेटा ! यह क्या ? उसने कहा दिन भर धूप सह कर भी एक से दो भारी इंधन नहीं ला सकता। जैसे तैसे दिन निकालता हूं एवं राजकुमार भी शिकार में एक ही जीव पाकर दिन पूरे करता है ! मंत्री ने मन ही मन सोचा विधाता की वात सच्ची हो रही है पर मुझे उद्यम कर के इनका भाग्य अवश्य ही पलटना है।

मंत्री ने मतिसागर से कहा वेटा ! जगल मे जाओ पर चदन की लकड़ी के सिवा दूसरी लकड़ी पर हाथ न डालना ! यदि संध्या पर्य्यन्त चंदन न मिले तो भूखे ही सो जाना ! फिर मंत्री ने राजकुमार से उसका वृतान्त पूछा तो उसने भी कहा

कि मुझे एक से अधिक दूसरा जीव कभी भी शिकार में हाथ नहीं लगता। मंत्री ने कहा—तुम्हें हाथी मिले तो उसे ही पकड़ना अन्यथा दूसरे जीव पर हाथ न डालना। विधाता ने देखा कि यदि इन दोनों को चंदन और हाथी नहीं प्राप्त कराती हूँ तो मेरा लेख झूठा हो जाता है, अतः वह प्रतिदिन एक भारी चंदन और एक हाथी दोनों को प्राप्त कराने लगी। मंत्री उन दोनों से प्रतिदिन उनकी भारी व शिकार लेकर संग्रह करता गया। कुछ अरसे मे हजार हाथी ओर चंदन के मूल्य से करोड़ों रुपये एकत्र कर लिये। इस प्रकार उसने महर्द्धिक हो जाने पर सेना एकत्र की व मथुरा पर चढ़ाई कर शत्रुओंको मार भगाया और राजकुमार को अपना पैतृक राज्य दिला दिया। जिस प्रकार मंत्री ने उद्यम का आश्रय लेकर विधाता के लेख में मेख मार दी इसी प्रकार मैं भी देखना साधुदत्त भाई! देववाणी को अन्यथा करूँगा। क्योंकि मेरी लक्ष्मी का भोक्ता कोई और ही व्यक्ति हो जाय, यह मैं सहन नहीं कर सकता! (मैं पुष्पवती दासी को ही समाप्त कर दूँगा तो उसका पुत्र मेरे धन का स्वामी कैसे होगा?)

अब वृद्धदत्त, अपना कार्य सिद्ध करने के हेतु ऊंठ, गाडी और बैलों पर प्रचुर माल भर के कंपिलानगरी में गया और एक दुकान लेकर व्यापार करने लगा। वह अपनी दुकान मे सब तरह की वस्तु रखता और नगद दाम से माल बेचता। उसने अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए त्रिविक्रम सेठ

और पुष्पवती दासी का पता लगा लिया और सेठ से मित्रता गाठने के लिए आवश्यक वस्तुएं बिना मूल्य उधार देना प्रारम्भ कर दिया। सेठ त्रिविक्रम ने भी उसके भोजनादि का प्रबन्ध अपने यहाँ कर दिया। वृद्धदत्त ने त्रिविक्रम के परिवार को खुले हाथ उपहारादि देकर अपने वश में कर लिया। वृद्धदत्त ने कुछ दिन बाद व्यापार मलटा कर चम्पानगर लौटने की तय्यारी कर त्रिविक्रम से अन्तिम जुहार करते हुए विदा माँगी। त्रिविक्रम ने कहा—चार महीनों की प्रीति अविचल रहे और जो कुछ ऊंट, बैल, घोड़ा आदि सामग्री चाहिए, निसंकोच ले जाइये ! सेठ वृद्धदत्त ने कहा—आपकी कृपा से हमारे किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है पर आपका इतना ही आग्रह है तो मार्ग मे भोजनादि की सुविधा के लिए पुष्पश्री दासी को हमारे साथ भेज दीजिए। घर पहुँचते ही मैं इसे आपके पास सुरक्षित लौटा दूँगा। त्रिविक्रम ने कहा—यद्यपि इसका विरह असह्य है और इसके बिना घर मे भी नहीं सरता, फिर भी आपका कथन तो रखना ही पड़ेगा !

वृद्धदत्त ने वहिली (वाहन) मे पुष्पश्री को बिठा कर प्रयाण किया। जब ये लोग उज्जैन के निकट पहुँचे तो जकात से बचने के बहाने सारे साथ को आगे रवाने कर दिया और स्वयं पुष्पश्री के साथ रहा। उसने एकान्त पाकर पुष्पश्री को वहिली से नीचे गिरा कर लातों की निर्दय मार से मरणासन्न कर दिया। जब वह अचेत हो गई तो वृद्धदत्त उसे मृतक समझ कर

छोड़ भागा और अपने साथ से जा मिला। साथ वालों के पूछने पर कहा कि पुष्पश्री देह-चिन्ता के बहाने कहीं भग गई, मैं ने उसकी बहुत खोज की पर पता नहीं लगा अब दाणी (जकात के अधिकारी) लोग अपने को आ घेरेंगे। अतः शीघ्र आगे बढ़ो। वृद्धदत्त ने कंपिला मे त्रिविक्रम के यहाँ कहला दिया कि पुष्पश्री कहीं भग गई, उसकी बाट न देखें। इसके बाद वृद्धदत्त निश्चिन्त होकर चम्पापुरी अपने घर लौट आया।

इधर वृद्धदत्त के द्वारा मार्मिक चोट खाई हुई दासी अधिक देर जीवित न रह सकी। उसने मरते मरते सुन्दर और स्वस्थ बालक को प्रसव किया। थोड़ी ही देर में उज्जैन की ओर आती हुई एक वृद्धा ने यह स्वरूप देखा तो उसने समझा किसी दुष्ट ने वैर वश यह चाण्डाल कर्म किया है, यदि चोर मारते तो इसके अंग पर एक भी आभरण नहीं बच पाता। उसने दयापूर्वक नवजात बालक को ले लिया और आभूषणों की गठडी बाँध कर उज्जैन ले आई। उसने राजा के समक्ष आभूषण और उस सुन्दर बालक रखते हुए सारा वृतान्त कह सुनाया। राजा ने इसके लिए धन्यवाद देते हुए वृद्धा को आदेश दिया कि बालक का भरण-पोषण सुचारु रूप से करना। तदनन्तर राजा ने पुष्पश्री की देह का अंतिम संस्कार भी राजपुरुषों द्वारा करवा दिया।

वृद्धा ने बालक को अपने घर ले जाकर जन्मोत्सव मनाया और चम्पक वृक्ष के नीचे प्राप्त होने से उसका नाम भी चम्पक

कुमार ही रखा। राजा ने कहा—जो भी वस्तु चाहिए, हमारे यहाँ से मंगा लेना, पर बच्चे के भरण-पोषण में न्यूनता न करना। जब चम्पक आठ वर्ष का हुआ तो उसे पाठशाला में भेजा गया, वह अल्पकाल में ही अपने बुद्धिबल से बहत्तर कलाओं में निष्णात हो गया। एक बार दूसरे बच्चों द्वारा उसे बिना बाप का कहने पर चम्पक ने वृद्धा से अपना सारा वृतान्त ज्ञात किया और अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए व्यापार प्रारम्भ कर दिया। थोड़े दिनों में उसने प्रचुर द्रव्योपार्जन कर लिया और वह राजमान्य हो गया। राजा ने उसे नगरसेठ की पदवी दी और व्यापार विस्तार से वह चार करोड स्वर्ण मुद्राओं का स्वामी हो गया।

एक वार चम्पकसेठ अपने मित्र की वरात मे चम्पानगर के निकटवर्त्ती किसी गाँव मे गया। वहाँ कन्या का पिता वृद्धदत्त का मित्र था। अतः वृद्धदत्त भी विवाह समारोह मे सम्मिलित हुआ था। वाराती लोग सब मौज शौक मे घूम रहे थे। चम्पक सेठ भी वापी पर जब दतवन कर रहा था तो वृद्धदत्त से साक्षात्कार हो गया। वृद्धदत्त इसके शालीनता और सौन्दर्य्य पर मुग्ध होकर मन ही मन अपनी पुत्री के योग्य वर ज्ञात कर जात-पाँत पूछने लगा। सरल स्वभावी चम्पक सेठ ने अपनी उत्पत्ति का यथाज्ञात वृतान्त कह सुनाया। उसे सुनकर वृद्धदत्त के हृदय पर साँप लोटने लगे। उसे अपने धन के भोक्ता के बच जाने और देवी-वचन सत्य

होने की प्रतीति होने लगी, फिर भी वह उद्यम पूर्वक दूसरी बार हत्या की घात सोचने लगा। उसने कहा—आप अपने साथ को छोडकर मेरे साथ रहिए। हमारे यहाँ मजीठ अत्यन्त सस्ती है और उज्जैन में उसके सीधे दुगुने होंगे। अतः द्रव्योपार्जन का एकान्त लाभ उठाने के लिए दूसरों से अज्ञात मजीठ की खरीदी प्रारम्भ कर देनी चाहिए, क्योंकि दूसरे व्यापारी जान लेने पर वे भी खरीद प्रारम्भ कर देंगे और फिर अपने को ही ऊँचे दामों मे बेचेंगे। चम्पानगर में मेरा भाई साधुदत्त है, मैं उसके नाम पत्र लिख देता हूँ। इस व्यापार मे जो लाभ होगा उसे अपन आधा-आधा बाँट लेंगे।

व्यापार में लाभ प्राप्त करने के लोभ से चम्पक ने चम्पा-नगर जाना स्वीकार कर लिया। वृद्धदत्त ने अपने भाई के नाम से एक पत्र लिख कर चम्पक को दिया, जिसमें लिखा कि इसने भरे बाजार मे मुझे बेइज्जत किया है और हमारा परम शत्रु है। अतः बिना कुछ हया दया लाये व आगा पीछे सोचे इसे मारकर कुएँ में डाल देना एवं काम हो जाने पर मेरे पास बधाई देकर आदमी भेज देना।

चम्पक सेठ पत्र लेकर चम्पानगर वृद्धदत्त के घर पहुँचा। उस समय साधुदत्त कहीं तकादा उगाहने के लिए गया हुआ था एवं गृहस्वामिनी कौतिगदे भी घर से बाहर गयी हुई थी। अतः घर में वृद्धदत्त की पुत्री तिलोत्तमा अकेली ही फूलदड़े

से खेल रही थी। चम्पक सेठ ने तिलोत्तमा को पत्र दिया। उसने पत्र खोलकर पढ़ा तो उसमे देवकुमार सदृश गुणवान कुमार को वध करने की पितृ-आज्ञा देख कर सन्न रह गई। उसने कुमार चम्पक को स्वागतपूर्वक ठहराया और घोड़े वहिली शाला मे वँधवा दिये। तिलोत्तमा पूर्वजन्म के सयोग-वश सोचने लगी कि—पिताजी ने यह क्या पापकार्य सोचा? यदि सौभाग्यवश यह मेरा पति हो जाय तो मैं अपनेको धन्य मानूँ। उसने पिता के अक्षरों मे दूसरा पत्र लिखकर तैयार किया और माँ के आने पर उसे सौंप दिया। सन्ध्या समय साधुदत्त भी घर आ गया। सब की उपस्थिति में पत्र पढ़कर देखा तो उसमे लिखा था कि आज सन्ध्या के शुभ लग्न में चम्पक के साथ तिलोत्तमा का व्याह कर देना। समय कम था, पर साधुदत्त ने थैलियों का मुँह खोल दिया और बड़े धूमधाम से महोत्सवपूर्वक चम्पक सेठ के साथ तिलोत्तमा का पाणिग्रहण करा दिया।

चम्पक की मृत्यु के समाचार सुनने के उत्सुक वृद्धदत्त ने जब याचकों के मुख से तिलोत्तमा के साथ उसका पाणिग्रहण होने का सवाद सुना तो वह मन ही मन जल भुन गया। वृद्धदत्त घर आया और जानी-मानी जीमते देखकर शीघ्रतापूर्वक काम तमाम करने के लिये ऊपरी मन से धन्यवाद देने लगा। विवाह कार्य निपटने पर उसने साधुदत्त से कहा—भाई! तुमने यह क्या अनर्थ कर डाला? साधुदत्त ने कहा—यह देखिये

आपका पत्र, इसी के अनुसार मैंने सारा काम किया है, इसमें मेरा कोई दोष नहीं ! सेठ ने सारी करतूत तिलोत्तमा की ज्ञात कर चुप्पी साध ली। चम्पक का व्याह चपापुर मे हुआ, ज्ञात कर सारे बाराती उज्जैन चले गये और जाकर बूढी माँ से चम्पककुमार के व्याह की बधाई दी।

अब चम्पक सेठ आनन्दपूर्वक चम्पानगरी मे रहने लगा। एक बार सीयाले की रात में तिमजिले महल मे अपने पति के साथ सोई हुई तिलोत्तमा किसी कार्य से नीचे उतरी तो दुमजिले मे उसने वृद्धदत्त द्वारा अपनी स्त्री को कहते सुना कि— लिखा तो कुछ और ही था और हमारे कर्म दोप से हो गया कुछ और ही ! इस जंवाई की जात-पाँत का कोई पता नहीं और यहाँ रहते ये हमारे घर का स्वामी हो जायगा। अतः पुत्री का मोह त्याग कर जवाई को विष देकर मार्ग लगा दो ! पति के आग्रह से कौतिगदे ने उपर्युक्त बात स्वीकार कर ली।

तिलोत्तमा ने जब यह बात सुनी तो वह विचित्र धर्म सकट में पड़ गई। यदि वह पति से कहती है तो पिता की जान को खतरा और न कहे तो पति के मारे जाने का भय। इधर बाघ और उधर कुंआ देखकर उसने पति से कहा—प्रियतम ! शकुन निमित्त के बल से मुझे आप पर दो महीना भारी सकट मालूम देता है अतः आप कृपा कर इस घर मे भोजन पानी कुछ भी न लें यावत् पान तक न खाएँ। दिन भर मित्रों के यहाँ खान पान कर घूमते रहें एवं रात्रि के समय यहाँ आवें और सुबह

होते ही फिर निकल पड़ें। चम्पक ने अपनी स्त्री का यह कथन स्वीकार कर लिया। अब वह दिन भर मित्रों के साथ निश्चिंत घूमता रहता। वृद्धदत्त ने एक दिन फिर अपनी स्त्री से कहा— तुमने मेरा कथन नहीं किया? उसने कहा—मेरा क्या दोष। वह अपने घर खाना पीना तो दूर, दिन भर मे आता ही नहीं है। वृद्धदत्त यह सुनकर दूसरी घात सोचने लगा। उसने विश्वासी सुभटों को बुलाकर कहा—तुम लोग मौका पाकर चम्पक सेठ को मार डालो! काम हो जाने पर प्रत्येक को सौ-सौ स्वर्ण-मुद्राओं से पुरष्कृत करूँगा। सुभट लोग जब घात मे रहने लगे तो चंपक सेठ ने अपने साथ शस्त्रबद्ध अंगरक्षक रखना प्रारम्भ कर दिया। छः मास बीत जाने पर भी सेठ के सुभटों को कोई अवसर न मिला। एक दिन रात्रि के समय राही रूप धारण कर खेलने वाले रावलियों का खेल हो रहा था तो चम्पक भी वहाँ बैठ गया। चम्पक के अगरक्षक रात्रि मे घर के निकट निर्भय ज्ञात कर अपने घर चले गये। खेल समाप्त होने पर चम्पक अकेला घर आया, उसकी आँखें घुल रही थी। अतः प्रतोली में बिछे हुए तापड़ पर सो गया, उसने सोचा रात के समय कोलाहल कर क्या किवाड़ खुलाना है! उसे सोते ही नींद आ गई। वृद्धदत्त के सुभटों ने उसे सोते हुए देखा और मारने को प्रस्तुत हुए पर चंपक के भाग्य बल से उन्होंने फिर सोचा कि बहुत दिनों की पुरानी आज्ञा है, सेठ का जंवाई ही है अतः सेठ को फिर से

पूछ लेना चाहिए! सुभटों ने वृद्धदत्त से पूछा तो उसने कहा—सत्वर उसका काम तमाम कर डालो! इधर खटमलों के उपद्रव से जग कर चंपक सेठ, द्वार खुला देखकर वहाँ से उठ अपने महल में जाकर प्रिया के पास सो गया। सुभटों ने जब चंपक को न देखा तो समझा शरीर चिन्ता के लिए गया होगा, अभी आ जायगा! वे लोग इतस्ततः छिप गए और तय कर लिया कि सब लोग उसके आने पर एकाएक आकर टूट पड़ेंगे! इधर वृद्धदत्त के मन मे तालावेली लगी हुई थी ही, वह देखने के लिए आया तो वहाँ किसी को न देखकर स्वयं उस स्थान पर सो गया। थोड़ी देर में सुभटों ने सोये हुए वृद्धदत्त को चपक के भरोसे एक साथ मिलकर वार कर मार डाला और कुएँ मे फेंक दिया एवं प्रातःकाल इनाम पाने की आशा में हर्षित होकर वे अपने घर चले गये। प्रातःकाल जब वृद्धदत्त की लाश को कुएँ में तैरते देखा तो उन्हें बड़ा भारी पश्चात्ताप हुआ। साधुदत्त ने जब भाई की मृत्यु सुनी तो वह भी छाती फट कर मर गया। बारह दिन होने पर भाई और पुत्र के अभाव में सब लोगों ने वृद्धदत्त सेठ का उत्तराधिकारी चम्पक सेठ को बना दिया, जिससे वह ६६ कोटि स्वर्णमुद्राओं का स्वामी हो गया।

चम्पक सेठ ने ६६ कोटि स्वर्णमुद्राएँ हस्तगत करके उज्जैन से वृद्धा माता को भी १४ कोटि स्वर्णमुद्राओं के साथ चम्पापुरी बुला लिया। उसने अपने बुद्धि बल और पूर्व पुण्य से इतना

व्यापार विस्तार किया कि उसके ६६ कोटि मुद्राएँ निधान मे ६६ कोटि व्यापार में एवं ६६ कोटि व्याज सूद में लगती थी। उसके १००० वाहन, १००० गाडे, १००० सतमंजिले घर, १००० दुकानें, १००० भण्डशालाएँ, ५०० हाथी, ५०० अंगरक्षक, ५००० घोडे, ५००० सुभट, ५०० ऊँट, १०००० पोठिये, १ लाख वलद, १०० गोकुल (प्रति १०००० गायें), १०००० व्यापारी थे। उसके घर में लाख रुपया प्रतिदिन का खरच था। १० लाख दान-पुण्य मे खरच होते। वह प्रति दिन देवपूजा, सामायक, प्रतिक्रमण, स्वधर्मीवात्सल्य किया करता। उसने १००० जिनालय एव लाखों जिन बिबादि का निर्माण करवाया।

पूर्व जन्म वृतान्त—

एक वार चम्पापुरी के उद्यान में केवली भगवान् पधारे। चंपक ने उनके चरणों मे उपस्थित होकर अत्यन्त विनय-भक्ति से उपदेश श्रवण किया। अन्त मे उसने पूछा—भगवन्! मैंने पूर्व जन्म मे ऐसे क्या पुण्य किये थे, जिससे इस जन्म मे अगणित लक्ष्मी मिली? वृद्धदत्त ६६ कोटि मुद्रा पाकर भी भोग न सका, मेरा अज्ञात कुल होने पर भी वृद्धा ने अत्यन्त प्रेम से पालन किया, मुझ निरपराध को मारने के लिए वृद्धदत्त ने क्यों वारम्वार प्रयास किये? केवली भगवान ने कहा इन सारी वातों का कारण पूर्व जन्म मे किये हुए अपने शुभाशुभ कर्मों का विपाक है, उसे ध्यान पूर्वक सुनो!

सुमेलिका नगरी के वन में तापसों का आश्रम था, जिसमें भवदत्त और भवभूति नामक तापस कन्द-मूल खाकर पचाग्नि साधना करते थे। इनमे भवदत्त कुटिल बुद्धि और भवभूति सरल स्वभावी था। दोनो मर के यक्ष हुए, फिर भवदत्त तो अन्यायपुर पाटण मे वंचनामति सेठ हुआ और भवभूति पाडलीपुर मे महासेन नामक क्षत्रिय हुआ। वह बडा पुण्यात्मा था, एक वार वह तीर्थयात्रा के लिए निकला तो आवश्यक व सारभूत द्रव्य अपने साथ ले लिया और फिर अन्यायपुर पाटण में उसने वचनामति सेठ के यहाँ एक गाँठ अनामत रखी, जिसमे पाँच वहुमूल्य रत्न भी थे। महासेन तो सेठ पर विश्वास करके तीर्थयात्रा मे चला गया। इधर सेठ ने गाँठ खोलकर देखी और पाँच रत्न पाकर वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने उनमे से एक रत्न लेकर एक लाखमें किसी महर्द्धिक के यहाँ गिरवे रख दिया और स्वयं उन रुपयों से ऊँची हवेली बनाकर रहने लगा। अवशिष्ट चार रत्नों को उसने गुप्त रूप से छिपा कर रख लिया। जब महासेन तीर्थयात्रा से लौटा तो उसने वंचनामति सेठ से अपनी धरोहर वापिस माँगी। सेठ ने कहा—तुम कौन हो? मैं तुम्हें पहचानता भी नहीं एवं न मैं किसी की धरोहर अपने यहाँ रखता हूँ। महासेन यह सुनते ही खिन्न होकर सोचने लगा कि ये वणिक भी कैसा चौहटे का चोर है, प्रत्यक्ष दी हुई वस्तु को डकार जाने में नहीं हिच-किचाता, यों क्रय-विक्रय में लूटना तो वणिकों की वृत्ति ही हो

गई है। अव क्या उपाय करूँ ? अन्त मे न्याय की शरण लेने के विचार से राजसभा मे गया और वहाँ के राजा, न्यायपद्धति आदि की आवश्यक जानकारी प्राप्त की।

इस अन्यायपुर पाटण का राजा निर्विचार, तलारक्षक सर्वलूटाक और मुँहता सर्वङ्गिल था। यहाँ का राजगुरु अज्ञानराशि और राजवैद्य जन्तुकेतु था। नगरसेठ वही वंचनामति और पुरोहित का नाम सिलापात था। वहाँ की कपटकोशा वेश्या अपने दाव-पेच मे वडी निष्णात है। यह सव खेल जान कर उसने सोचा मैं अपने रत्न किस युक्ति से प्राप्त करूँ ? इतने ही मे एक वृद्धा ने रोते कलपते हुए आकर राजा के पास पुकार की कि—महाराज! मेरा न्याय कीजिये, मैं अत्यन्त दुखिनी हो गई! राजा ने कहा मैं न्याय करूँगा, तुम अपना दुख कहो! वृद्धा ने कहा—मैं आपके नगर मे रहती हूँ, किसी से लडाई-झगडा न कर शान्ति से रहती हूँ। राजाने कहा—डोकरी कैसी सुशील है! इसकी अवश्य न्याय सहायता की जायगी! वृद्धा ने कहा—मै चोर की माँ हूँ, मेरा पुत्र प्रसिद्ध चोर था, आज वह देवदत्त के घर चोरी करने गया, जव वह खात डालने के लिए दीवाल के नीचे वैठा तो जर्जर दीवाल गिर पड़ी और मेरे पुत्र की मृत्यु हो गई। मेरे एक ही पुत्र था, अव मेरा कौन आधार ? राजा ने कहा तुम निर्दोष हो, अपने घर जाओ, देवदत्त को मैं दण्ड दूँगा!

राजा ने देवदत्त को बुलाकर कहा—तुमने जर्जर दीवाल

क्यों बनाई ? जिससे चोर दब कर मर गया, अब इस डोकरी का कौन सहारा ? देवदत्त ने कहा राजन् ! मेरा क्या दोष मैंने तो सूत्रधार को पूरी मजूरी दी, कमजोर भीत का जिम्मेवार वह है ! राजा ने सूत्रधार को बुलाकर पूछा तो उसने कहा मैं तो अच्छी तरह दीवाल बना रहा था पर देवदत्त की तरुण पुत्री सोलह श्रृंगार सज कर आ खडी हुई तो मेरी चंचल दृष्टि उस पर पड़ गई और दीवाल की इटे शिथिल बन्ध वाली हो गई। देवदत्त की पुत्री को पूछने पर उसने कहा—मैं नग्न परिव्राजक को देख कर लज्जावश उधर चली गई। राजा ने परिव्राजक से बुलाकर पूछा कि तुम क्यों इस मार्ग में आए ? उसने कहा—आपके जंवाई ने घोडा दौडाया तो मैं क्या करूँ ? राजा ने जवाई से पूछा कि तुमने घोडा क्यों दौडाया। जंवाई ने देखा कि सब ने अपने माथे से आपत्ति उतार दी तो मुझे भी किसी युक्ति का आश्रय लेना चाहिए ! उसने कहा कि मैं तो कर्म-विधाता की प्रेरणा से आया मेरा क्या दोष ? राजा ने मंत्री से कहा मंत्री ! विधात्रा को शीघ्र बुलाओ ! मैं अन्याय नहीं सहन कर सकता ! प्रधान ने कहा—आपके तेज प्रताप से डर कर काँपती हुई वह कही भग गई है, मैंने सब जगह शोध के लिए पुरुष भेजे पर मिली नहीं, अब तो दूसरे दिन खबर लगेगी ! राजा ने कहा—कोई बात नहीं आज देर भी हो गई, कल पर बात, कोई जल्दी थोड़े ही है !

महासेन ने देखा इस राजा के न्याय के भरोसे तो मेरे

पाच रत्न गये ही समझना चाहिए। उसने कुछ सोच कर कपट-कोशा वेश्या का आश्रय लिया और उसे अपनी दुख गाथा कह सुनाई। वेश्या ने उसपर दया लाकर के कहा—तुम निश्चित रहो, मैं तुम्हारे रत्न निकलवा दूँगी! वह अपने घर मे गई और उत्तम वस्त्र, मणि माणिक आभरण, कस्तूरी, कर्पूरादि बहुमूल्य वस्तुएं एकत्र कर सबको पेटी में भर, ऊँट पर चढ कर वंचना-मति सेठ के घर गई। तीन चार सखियों के साथ सेठ के पास जाकर उसने हाँफते हुए कहा—सेठ जी! मेरी बहिन वसतपुर में मरणासन्न पडी है और मुझे शीघ्र बुलाया है, अतः मैं उससे मिलने जाती हूँ, आप मेरी माल-मता धरोहर रूप मे रखिये, क्योंकि आप ही सर्वथा मेरे विश्वास भाजन हैं। यदि मेरी बहिन मर गई तो मैं भी अवश्य उसके साथ जल मरूँगी, यदि आपको मेरी मृत्यु के समाचार मिल जाय तो आप सारा धन (पुण्य कार्यों मे) खरच डालना! वचनामति सेठ ने सोचा यह मर जायगी तो अच्छा हो जायगा, करोडों की जवाहरात मैं सहज मे ही हजम कर सकूगा! इतने ही मे पूर्व सकेतानुसार महासेन आकर उपस्थित हो गया और धरोहर मे रखे अपने पाँच रत्न माँगने लगा। सेठ ने वेश्या का माल हजम करने के लोभ मे आकर अपनी प्रतीति जमाने के लिए महासेन के पाच रत्न लौटा देना ही उचित समझा और तुरत चार रत्न निकाल के दे दिये। पाँचवाँ रत्न भी जो धनावह सेठ के यहाँ रखा हुआ था, पुत्र के द्वारा बदले मे अपनी सम्पति को गिरवे रख-

कर छुडा मँगाया। महासेन को अब अपने पाँचों रत्न मिल गए। इतने ही में पूर्व सकेतानुसार कपटकोशा को बधाई मिली कि आपकी वहिन स्वस्थ हो गई है उसने कहलाया है कि आप यहाँ आने का कष्ट न करें। मै स्वयं मिलने के लिए आ जाऊँगी। वेश्या प्रसन्न होकर नाचने लगी। महासेन भी रत्न प्राप्ति के हर्ष में नाचने लगा, तो वंचनामति भी उनके नाच में सहयोगी हो गया। लोगों ने जब इसका कारण पूछा तो वेश्या ने बहिन के जीने का, महासेन ने रत्न प्राप्ति का कारण बतलाया। वचनामति ने कहा—मैं अपने जीवन मे आज ही कपटकोशा से ठगा गया हूँ, जिसने मेरे महल को अडाने रखा कर महासेन के पाँच रत्न वापस दिला दिए। इसने खूब किया, यह सोचकर नाच रहा हूँ। इसके बाद वचनामति ने विरक्ति पाकर तापस का व्रत स्वीकार कर लिया। कपटकोशा को सब लोग धन्यवाद देने लगे। महासेन अपने नगर मे आकर सुखपूर्वक रहने लगा।

एक बार उसके देश मे महान दुष्काल पडा, जिसका वर्णन कविवर ने दूसरे खण्ड की छठी ढाल में विस्तार से किया है और सं० १६८७ के भयंकर दुष्काल से उसका तुलना की है।

महासेन ने इस दुष्काल के समय पाँचों रत्न बेचकर धान्य का प्रचुर सग्रह किया और सार्वजनिक दानशाला खोलकर दीन-दुखियों का बड़ा उपकार किया। जो लोग संकोच व

मानवश उसके वहाँ मागने नहीं आते, उन्हें वह गुप्त रूप से सहायता पहुंचाता। उसने रोगियों के लिए चिकित्सालय खोल दिये। एक दिन एक वृद्धा को, जिसके क्षुधा के मारे अजीर्ण, शोथ आदि की भयंकर व्याधि हो गई थी, महासेन ने अपने घर लाकर सेवा सुश्रुषा कर स्वस्थ किया। महासेन की स्त्री गुणसुन्दरी ने भी दीन अनाथों की बड़ी सेवा सुश्रुषा की। इस बारहवर्षी दुष्काल के समय आश्रित लोगों को महासेन के यहाँ बड़ी शान्ति मिली और उसने सुकाल होने पर सत्कारपूर्वक उन्हें अपने घर भेज दिये।

केवली भगवान ने कहा—महासेन के भव मे तुमने जो अनुकम्पा दान किया उसके प्रभाव से तुम इस भव में समृद्धिशाली चंपक सेठ हुए। गुणसुन्दरी का जीव तिलोत्तमा हुई। दुष्काल के समय तुमने जिस वृद्धा की सेवा सुश्रुषा की वह उज्जैन मे उत्पन्न हुई और इस भव में उसने तुम्हें पालपोष कर बडा किया। वंचनामति का जीव वृद्धदत्त हुआ, तुम्हारे उसने पाच रत्न लिए थे तो इस भव मे उसके ९६ करोड़ के तुम स्वामी हुए। तुमने गत भव मे कुल मद किया। अत इस भव में दासी पुत्र हुए, तुमने वंचनामति को पूर्व भव मे अपभ्राजित किया। अतः उसने तीन वार तुम्हें मारने का प्रयत्न किया। पूर्व भव का वृतान्त सुनकर चंपक सेठ का हृदय वैराग्य वासित हो गया। उसने तिलोत्तमा के साथ बड़े ठाठ से संयम धर्म स्वीकार किया। शुद्ध सयम पालकर वह देवलोक में देव हुआ।

अन्त में चंपक वहाँ से च्यवकर मनुष्य भव पाकर महाविदेह क्षेत्र में दीक्षा लेकर मोक्षगामी होगा।

सं० १६६५ में अपने प्रिय शिष्य के आग्रह से कविवर समयसुन्दर ने जालोर में अनुकम्पा दान पर इस दृष्टान्त-आख्यान की रचना की।

(४) धनदत्त श्रेष्ठी चौपई सार

शान्तिनाथ भगवान् को नमस्कार कर कविवर समयसुन्दर ने व्यवहार शुद्धि के विषय मे धनदत्त श्रेष्ठी की चउपई प्रारम्भ करते हुए सर्वप्रथम श्रावक व्रतोपयोगी २१ गुणों को बतलाया है १ वाणिज्य व्यवसाय में न न्यून दे, न अधिक ले, अच्छी वस्तु को बुरी न कहे, बुरी को अच्छी न कहे, जिस समय देने का वायदा किया हो उसी समय दे, मिथ्या भाषण न करे, यह प्रथम व्यवहार शुद्धि गुण है। २ पंचेन्द्रिय परिपूर्ण ३ शान्त प्रकृति, ४ लोकप्रिय, ५ वचनारहित - निष्कपट, ६ अक्रूर, पापभीरू, ७ अमायी, ८ उपकारी, ६ कुकर्म विरत, १० दयालु, ११ मध्यस्थवृत्ति, १२ शात-दात गुणी, १३ गुणरागी, १४ शोभन पक्ष, १५ दीर्घदर्शी, १६ विशेषज्ञ, १७ वृद्ध व बुद्धिमान पुरुषानुगामी, १८ माता-पिता गुरु के प्रति विनयशील, १६ कृतज्ञ, २० पर हितकारी, २१ लब्ध लक्ष। इन २१ गुणों में व्यवहारशुद्धि सर्व प्रधान है, इसके विना सारे गुण व्यर्थ है। धोती

विना सिर पर पगड़ी, घड़े विना इंढाणी, नींव विहीन इमारत की भाति व्यर्थ हैं। गाव ही नहीं तो सीमा क्या? ठंढ नहीं तो हिम कहा? उसी प्रकार व्यवहार शुद्धि के विना मनुष्य की शोभा नहीं। अग्नि के विना धुँआ कहाँ? स्त्री ही नहीं तो वेटा कहाँ? धर्म बिना सुख नहीं, द्रव्य विना हाट नहीं, गुरु विना वाट नहीं, उसी प्रकार व्यवहार शुद्धि विना सारे गुण विना अक के शून्य हैं। साधु के लिए शुद्ध आहार और श्रावक के लिए शुद्ध व्यवहार ये प्रधान गुण हैं।

अयोध्या नगरी मे उग्रसेन राजा और उसके पद्मावती पटरानी थी। उसके सुबुद्धि नामक मन्त्री था। इसी नगर मे धनदेव व्यवहारी का पुत्र धनदत्त निवास करता था, जिसके पापोदय से माता-पिता का देहान्त हो गया। जब वह आठ वर्ष का हुआ तो शास्त्राभ्यास मे लग गया और पिता का कमाया हुआ द्रव्य खाकर काल निर्गमन करने लगा। एक वार धर्मघोषसूरि के पधारने पर धनदत्त ने उनका वैराग्यपूर्ण व्याख्यान सुना तो उपदेश से प्रभावित होकर कुछ नियम लेने का विचार किया। उसने अपने को संयम मार्ग मे असमर्थ बताते हुए मुनिराज के समक्ष व्यवहार शुद्धि का नियम स्वीकार किया। घर आने पर उसकी स्त्री ने व्यवहार-शुद्धि नियम की वडी प्रशंसा की।

धनदत्त ने दुकान खोली और सचाई के साथ अपना नियम पालन करता हुआ व्यापार करने लगा। लोग सत्यता के

आदी नहीं होने से धनदत्त का व्यापार ठण्ढा पड गया और घर मे धन का तोड़ा आ गया। उसने स्त्री से विदेश जाने की अनुमति माँगी तो उसने कहा—आप विदेश में भी अपने नियम का पालन करते रहें, मैं घर मे बैठी अपना शील व्रत पालन करूँगी! धनदत्त सथवाड़े के साथ रवाना हो गया। आगे चलकर एक गाँव में धनदत्त ने लोगों से पूछा कि यहाँ कोई व्यवहार शुद्धि नियम का पालन करने वाला हो तो बताओ, मैं उसके यहाँ नौकरी करना चाहता हूँ। किसी ने धर्मात्मा सेठ का नाम बताया तो वह उसके वहाँ जाकर गुमास्ता रह गया। उस सेठ के घर गायें, भैंसे बहुत थी, जो जगल मे चरने जाती और पराये खेतों मे प्रविष्ट होकर हरे-भरे धान को उखाड कर खा जातीं। कृषक लोगों ने सेठ के सामने शिकायत की तो उसने कहा—ग्वालिये को मना कर देंगे! सेठ ने उन्हें तो आश्वासन दे दिया, पर उसने ग्वालिये को कहा नहीं, क्योंकि गायों के मुफ्त का धान-घास चरके आने से उसके यहाँ दही, दूध, घी का ठाठ रहता था। धनदत्त ने सेठ के इस अशुद्ध व्यवहार को अनुभव कर उनकी नौकरी छोड दी और दूसरे गाँव चला गया। वहाँ उसने एक श्राविका के यहाँ नौकरी कर ली और उसका व्यापार देखने लगा। वह श्राविका निस्सन्तान होने पर भी लोभिणी थी, रात मे वह बैठी-बैठी सूत कातती तो अपने घरका दीपक भी न जलाती और पड़ौसी के महल के प्रकाश का उपयोग करती। धनदत्त ने उसे अनु-

च्चित बताया तो सेठानी ने कहा—तुम दूध में भी जन्तु देखते हो! अपना क्या गया, इस कते सूत के पैसों से घर में सब्जी का खर्च निकल जाता है! धनदत्त अपना हिसाब लेकर साथियों से जा मिला। साथी लोग व्यापार करते, पर धनदत्त का हाथ खाली था। माल-पत्र वेचकर साथी लोग स्वनगर जाने को तैयार हुए तो मित्र ने धनदत्त से कहा—देश चलो! धनदत्त ने कहा—मैंने कुछ भी द्रव्योपार्जन तो किया नहीं। अतः अभी मैं नहीं चल सकूंगा! मित्र ने कहा—यदि तुम न चल सको तो कोई वस्तु भी हमारे साथ भेजो; क्योंकि घर पर स्त्री वाट जोह रही है! धनदत्त ने कहा मेरे पास पैसा नहीं, क्या भेजूँ? मित्र ने कहा—यहाँ बीजौरे वहुत ही उत्तम जाति के स्वादिष्ट और खूब सस्ते हैं और नहीं तो ये ही भेजो! धनदत्त ने मित्र की राय मानकर एक टोकरी मे वहुत से बिजौरे भरकर मित्र के साथ भेज दिये। साथ वाले लोग प्रवहण मे बैठकर रवाना हुए और किसी नगर के किनारे जाकर ठहरे। संयोगवश उस समय उस नगर का राजकुमार दाह ज्वर से पीड़ित हो गया। वैद्यों के सारे इलाज वेकार हुए तो राजवैद्य ने कहा—परदेशी बिजौरा यदि मिल सके तो इस रोग की वही अन्तिम चिकित्सा है, जिससे राजकुमार बच सकता है! राजा ने सर्वत्र ढिंढोरा पिटवाया कि कहीं किसी के पास परदेशी बिजौरा हो तो दे! उसे राजा मनोवाञ्छित देगा। नगर मे कहीं भी बिजौरा न मिला तो इस खयाल से कि—कोई परद्वीप से बिजौरे लाया होगा-

व्यापारियों का साथ जहाँ ठहरा हुआ था, उद्घोषणा की। तब धनदत्त के मित्र ने तुरन्त पटह स्पर्श किया और बिजौरा के करण्डिये को लेकर राजा के सन्मुख भेंट किया। बिजौरे की चिकित्सा से राजकुमार स्वस्थ हो गया। राजा ने प्रसन्न होकर उस करण्डिये को मणिमाणिक और सोने से परिपूर्ण कर दिया और ससम्मान साथ वालों की जकात भी माफ कर दी! सब लोग वहाँ से रवाने होकर क्रमशः अयोध्या पहुँचे।

धनदत्त की स्त्री ने देखा, साथ वाले सब लोग आ गए, पर मेरा पति नहीं आया, वह घर के द्वार पर अश्रुपूर्ण नेत्रों से खड़ी बाट देख रही थी। मित्र ने शीघ्रतावश आकर वह रत्नों का भरा करण्डिया उसे दे दिया और उसका पति सकुशल है! कहकर अपने घर की राह ली। धनदत्त की स्त्री ने घर में जाकर करण्डिये को खोला तो उसमें सोना, मणि, रत्न भरा था, वह देखते ही दुखी होकर सोचने लगी—मेरे पति ने अवश्य ही अपना नियम तोड़ा है अन्यथा न्यायपूर्वक इतना द्रव्य कहाँ से प्राप्त होता? यह धन विष सदृश है, मेरे लिए धूलि है।

थोड़ी देर बाद मित्र आया और उसने भौजाई को चिन्तित देखा तो कहा—धनदत्त सकुशल है, तुम चिन्ता क्यों करती हो? जब उसने अपने दुख का कारण बताया तो मित्र ने द्रव्य प्राप्ति का सारा वृतान्त सुना दिया। धनदत्त की स्त्री प्रसन्न होकर धर्म पर और भी दृढ़ श्रद्धा वाली हो गई।

धनदत्त की स्त्री ने उस धन मे से राजा को भेंट द्वारा प्रसन्न कर भूमि खण्ड प्राप्त किया और उस पर सुन्दर महल, बाटिका, स्नानागार आदि बनवाये। वह सत्रागार (दानशाला) खोलकर उन्मुक्त दान देने लगी, साधु साध्वी व स्वधर्मी लोगों की भक्ति करती हुई निर्मलशील पालन करती थी।

इधर धनदत्त चिरकाल विदेश मे रहकर भी द्रव्योपार्जन न कर सका तो धैर्य्य धारण कर फटे हाल स्वदेश लौटा। लोगों के मुँह से धनदत्त की स्त्री की हवेली ज्ञातकर अपने घर पहुँचा तो प्रतोली रक्षक ने उसका प्रवेश निषिद्ध किया। धनदत्त ने सशकित चित्त से प्रवेश करने का हठ किया तो सेठानी की आज्ञा से धनदत्त को सामने धूप में ले जाकर खड़ा किया। सेठानी ने अपने प्रियतम को पहिचाना और आदर सहित घर मे बुलाकर सामने करबद्ध खड़ी हो गई। धनदत्त ने मन मे स्त्री के शील पर शका लाकर ऋद्धि समृद्धि का कारण पूछा। सेठानी ने सारा वृतान्त कहा और मित्र की साक्षी से सही वृत्त ज्ञात कर धनदत्त को अपार हर्ष हुआ। सेठानी ने नाई को बुलाकर सँवार कराई और धनदत्त को वस्त्राभरण से सुसज्जित किया। अब वे लोग आनन्दपूर्वक निवास करने लगे।

एक वार उस नगरी मे साधु मुनिराज पधारे और उद्यान मे ठहरे। उनका उपदेश श्रवणकर धनदत्त प्रतिबोध प्राप्त हुआ और पुत्र कलत्रादि को त्याग कर संयम मार्ग में दीक्षित हो

गया। वह अप्रमत्त चारित्र पालन कर अनित्य भावना भाते हुए क्रमशः केवलज्ञान प्राप्त कर शिवशर्म को प्राप्त हुआ।

सं० १६६४ में आश्विन महीने मे अहमदावाद में कविवर समयसुन्दरजी ने इस व्यवहार शुद्ध विपये धनदत्त श्रेष्ठि चौ० की रचना की।

(५) पुण्यसार चौपई सार

भरतक्षेत्र मे गोपाचल-ग्वालियर अत्यन्त सुन्दर नगर है। वहाँ धर्मात्मा व सरल स्वभावी पुरन्दर सेठ निवास करता था जिसकी पत्नी पुण्यश्री पतिव्रता और गुणवती थी। सेठ के यहाँ सब कुछ होते हुए भी उसका घर पुत्रविहीन था और यही चिन्ता उसे कचौट रही थी। मित्रों ने सेठ को दूसरा विवाह करने की सलाह दी, पर पत्नी पर अटूट प्रेम होने के कारण वह इसके लिए प्रस्तुत न हुआ तब मित्रों ने इसी स्त्री से सतान हो, इसके लिए मंत्र-यंत्र, यक्ष पूजा, होम आदि उपाय करने का कहा। सेठ ने मिथ्यात्व दूषण से बचने के लिए कुलदेवी का आराधन किया। कुलदेवी ने प्रकट होकर पुत्र होने का वरदान दिया। पुण्यश्री के गर्भ मे एक पुण्यवान जीव आकर अवतीर्ण हुआ। पुत्र जन्म होने पर सेठ ने बडे भारी उत्सव पूर्वक उसका नाम पुण्यसार रखा। पाँच धायों द्वारा प्रतिपालन होकर जब पुण्यसार आठ वर्ष का हुआ तो उसे

अध्ययन के हेतु पाठशाला में भरती किया गया। उसी नगर के धनवान सेठ रत्नसार की पुत्री रत्नवती भी पुण्यसार के साथ साथ पढ़ती और हठपूर्वक होड किया करती। एक दिन पुण्यसार ने उसे एकान्त में कहा—सुन्दरी! तुम पुरुप की निन्दा मत किया करो, पुरुप की क्या बरावरी? तुम्हें भी तो एक दिन पुरुष की पत्नी होना पडेगा! रत्नवती ने कहा—रे मूर्ख शेखर! स्त्री बनूगी किसी पुण्यवान की, तुम्हारी क्या बिसात है? पुण्यसार ने कहा—भावी किसे दीखती है, अब तो मैं तुम्हारे साथ जबरदस्ती विवाह करूँगा! रत्नवती ने कहा—निर्गुण! तुम रोते ही रहोगे, प्रेम जबरदस्ती नहीं होता! इस प्रकार दोनों के परस्पर विवाद मे बोलचाल बढ़ गई।

पुण्यसार घर आया और अन्नपान त्याग कर चुपचाप सो गया। पुरन्दर सेठ ने चिन्ता का कारण पूछा तो उसने स्पष्ट कह दिया—यदि मेरा जीवितव्य चाहते हों तो आप रत्नसार की पुत्री से मेरा विवाह करादें! सेठ ने कहा—बेटा! अभी तक तुम बालक हो, विद्याभ्यास मे मन लगा कर निपुण बनो, वयस्क होने पर हमे स्वय तुम्हारा विवाह करने का उल्लास है! पुण्यसार ने कहा—आप जैसा कहेंगे, करूँगा पर रत्नवती से मेरी सगाई कर दीजिये, तब भोजन करूँगा! सेठ ने उसे समझा बुझा कर भोजन कराया और स्वयं मित्रादि को साथ लेकर रत्नसार सेठ के यहाँ गया। रत्नसार ने स्वागत पूर्वक पुरन्दर सेठ से आगमन का कारण ज्ञात किया और यह कहा कि आप

राजमान्य और प्रतिष्ठित हैं, मैं अपनी पुत्री आपको सहर्ष देता हूँ ! रत्नवती निकट ही थी उसने पिता की बात सुन कर कहा—मुझे अग्नि-प्रवेश कर जाना इष्ट है, पर पुण्यसार के साथ विवाह कदापि नहीं करूँगी । पुरन्दर सेठ कन्या की बात सुनकर दंग रह गया उसने मन में सोचा इस धीठ बालिका को प्राप्त कर पुण्यसार को क्या सुख मिलेगा ?

रत्नसार ने पुरन्दर सेठ से कहा—यह अभी तक बच्ची और अज्ञान है, मैं समझा दूँगा । आप निश्चिन्त रहें, मैंने अपनी पुत्री आपके पुत्र को दी ! पुरन्दर सेठ अपने मित्रों के साथ घर लौटा और पुण्यसार से कहा—बेटा ! वह छोकरी टेढ़ी मेढ़ी बातें करती है अतः तुम्हारे योग्य नहीं है ! पुण्यसार ने कहा—हमारे आपस में हठ पूर्वक विवाद हो गया है, पाणिग्रहण के पश्चात् सब ठीक होगा ! उसने अपना भविष्य सानुकूल बनाने के लिए कुलदेवी का आराधन करने का विचार किया और विधिपूर्वक उपवास कर के बैठ गया देवी ने प्रगट होकर पुण्यसार से कहा—तुम्हारा मनोवाछित सिद्ध होगा ! निश्चिन्त होकर विद्याध्ययन करो । उसने कलाभ्यास तो पूरा किया पर तरुण अवस्था मे जुआरियों की सगत मे पड़ने से जुए का व्यसन लग गया ।

एक दिन रानी का बहुमूल्य हार जो पुरन्दर सेठ के यहाँ धरोहर रूप में रखा था, पुण्यसार जुए में हार गया । राजा ने जब हार मगाया तो सेठ ने घर मे सभाला और न मिलने

पर उसने निश्चय किया कि अवश्य ही पुण्यसार ने हार को गायब किया है अन्यथा घर मे रखी गुप्त वस्तु कहाँ जाती ? उसने पुण्यसार को बुला कर डाँटा तो उसने सच्ची सच्ची बात बतला दी। सेठ कुपित तो था ही, उसने पुत्र को घर से बाहर निकाल दिया। पुण्यसार नगर से बाहर आया और सन्ध्या हो जाने से रात्रि व्यतीत करने के लिए वटवृक्ष के कोटर में बैठ गया।

घर जाने पर सेठ को पुण्यवती ने पूछा—पुत्र कहाँ ? उसने कहा मैंने शिक्षा देने के लिए—अभी का अभी हार लाओ। कह कर घर से निकाल दिया! पुण्यवती ने इसके लिए सेठ को बड़ा उपालभ दिया और पुत्र को खोज कर लाने का कहा। सेठ पुत्र को खोजने के लिए सारे नगर मे घूमने लगा। जब बहुत देर तक पति व पुत्र दोनों नहीं लौटे तो पुण्यवती अपनी मूर्खता के लिए पश्चाताप करने लगी।

पुण्यसार ने वटवृक्ष पर बात करती हुई दो देवियों को देखा और ध्यान देकर उनकी बातें सुनने लगा। एक ने कहा इस चाँदनी रात मे कहीं घूमने चलें। दूसरी ने कहा—कहीं कौतुक वार्त्ता हो तो देखें, अन्यथा निष्प्रयोजन घूमना व्यर्थ है! प्रथम ने कहा—वल्लभी नगरी मे सुन्दर सेठ के सात पुत्रिया ब्रह्मसुन्दरी, धनसुन्दरी, कामसुन्दरी, मुक्तिसुन्दरी, भागसुन्दरी, सुभागसुन्दरी और गुणसुन्दरी नाम की है। जिनके वर की चिन्ता मे सेठ ने गणपति को मनाया और गणपति

देव ने सातवें दिन वर प्राप्त होने का निर्देश किया है। सेठ ने लम्बोदर के आदेशानुसार विवाह मण्डप रच कर विवाह की सारी तय्यारी कर रखी है आज ही लग्न दिवस है, अतः वल्लभी चल कर आज यही कौतुक देखा जाय! दोनों एक मत होकर वल्लभी जाने को प्रस्तुत हुई और मंत्रोच्चार किया तो वट वृक्ष उड कर वल्लभी के उद्यान में आ उतरा। दोनों देविया नायिका रूप धारण कर सेठ के घर की ओर चली। कुमार भी कोटर में से निकल कर पीछे-पीछे हो गया। जब वे विवाह मंडप में गईं और पुण्यसार को देखते ही सेठ ने कहा कि आप लम्बोदर देव द्वारा प्रेषित हमारे जामाता है अतः सातों पुत्रियों से पाणि-ग्रहण कीजिये! पुण्यसार को वस्त्राभरण से सुसज्जित कर विवाहचौंरी मे बिठाया गया और सातों कन्याओं से पाणि-ग्रहण करवा दिया।

पुण्यसार विवाह के अनन्तर सातों स्त्रियों के साथ महल में गया और उनके साथ प्रश्नोत्तर, श्लोक रचना आदि में थोडा समय विताया। उसके मन में वट वृक्ष के लौट जाने की चिन्ता थी। उसकी चेष्टाओं से अनुमान कर गुणसुन्दरी ने पूछा—आपको देह चिन्ता के लिए जाना हो तो मेरे साथ नीचे चलिए! वह तुरत गुणसुन्दरी के साथ नीचे आया और खडिया से दीवाल पर तुरन्त निम्नोक्त दोहा व श्लोक लिख दिया—

किहा गोपाचल किहा वलहि, किहां लंबोदर देव।
आव्यो वेटो विहि वसहि, गयो सत्तवि परणेवि ॥१॥
गोपाचल पुरा दागा, वल्लभ्यां नियतेर्वशात्
परिणीय वधू सप्त, पुनर्तत्र गतोस्म्यहं ॥ १ ॥

गुणसुन्दरी ने लज्जावश उपर्युक्त लेख की ओर ध्यान नहीं दिया। पुण्यसार ने उससे—तुम द्वार पर खडी रहो, मैं देह चिन्ता निवारण करके आता हूँ! कह कर जहाँ वट वृक्ष था, वहाँ जाकर कोटर में बैठ गया। थोडी देर में दोनों देवियाँ आईं और वट वृक्ष को उडाकर अपने स्थान में लाकर पुनः स्थापित कर दिया।

पुरन्दर सेठ रात्रि के समय पुत्र की खोज में घूमता हुआ थक कर वट वृक्ष के नीचे आ बैठा था। जब सूर्योदय होने पर पुण्यसार कोटर मे से निकला तो उसे पितृ दर्शन हुए! पिता ने भी पुत्र को वस्त्रालंकारों से सुसज्जित प्रसन्न मुद्रा मे देखा तो आलिंगन पूर्वक मिल कर अपने घर ले आया। पुण्यश्री को पति और पुत्र के आने पर अपार हर्ष हुआ और रात्रि का सारा वृतान्त ज्ञात किया। परस्पर अपने अपराधों की क्षमा-याचना कर पुण्यसार ने वल्लभी से लाये हुए अलंकारों को बेच डाला और रानी का हार छुड़ा कर राजा को भेज दिया और वह व्यसन त्याग कर पिता के साथ दुकान मे बैठकर काम काज करने लगा।

इधर पति के न लौटने पर गुणसुन्दरी ने अन्य ६ बहिनों

से जाकर कहा तो वे पति-विरह में रोने कलपने लगी। पिता ने आकर जामाता के भग जाने का सारा वृतान्त ज्ञात किया और नाम ठाम न जान सकने के कारण चिन्तातुर हुआ। गुणसुन्दरी ने नीचे जाकर दीवाल पर लिखे अभिलेख को पढ़ा और पति के गोपाचल निवासी होने का अनुसंधान पा लिया। उसने पिता से पुरुष वेश प्राप्त कर छः मास मे पति को प्राप्त करने की प्रतिज्ञा पूर्वक विदा ली। पिता ने ऋद्धि-समृद्धि और नौकर कर्मचारी साथ दे दिये। वह गोपाचल आकर गुणसुन्दर कुमार के नाम से व्यापार करने लगी। थोड़े दिनों मे गुण-सुन्दर एक सफल व्यापारी के रूप मे सर्वत्र प्रसिद्ध हो गया। एक दिन मार्ग में चलते हुए गुणसुन्दर को देख कर रत्नवती मुग्ध हो गई और पिता से प्रार्थना की कि गुणसुन्दर वर मुझे पसंद है, मेरा उसके साथ पाणिग्रहण करा दें। सेठ रत्नसार ने गुणसुन्दर के पास जाकर रत्नवती से पाणिग्रहण करने की प्रार्थना की। गुणसुन्दर ने मन ही मन इस अयोग्य सम्बन्ध को विचार कर कहा कि—यह बडों के अधिकार की बात है, पिता दूर है अतः आप किसी अन्य कलावान पुरुप के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दें। रत्नसार ने कहा—मेरी पुत्री तुम्हें चाहती है तो मैं उसे दूसरे को कैसे दूँ ?

रत्नसार के आग्रह से गुणसुन्दर को रत्नवती के साथ पाणिग्रहण करना पडा। जब पुण्यसार ने सुना कि रत्नवती का विवाह हो गया तो वह कुलदेवी के समक्ष आत्मघात करने

को प्रस्तुत हुआ, देवी ने कहा—वत्स तुम वृथा क्यों मरते हो ? रत्नवती तुम्हारी ही स्त्री होगी। पुण्यसार ने कहा रत्नवती का विवाह परदेशी के साथ हो गया, अतः परस्त्री से मुझे क्या प्रयोजन। देवी ने उसे धैर्य्य धारण कर भावी का विधान देखने का आदेश दिया। गुणसुन्दरी की छ मास की प्रतिज्ञा थी, अवधि बीत जाने पर भी जब पति को प्राप्त करने मे असमर्थ रही तो उसने अग्नि-प्रवेश करने की तय्यारी की। सारे नगर में चर्चा होने लगी कि गुणसुन्दर सार्थवाह मरने को प्रस्तुत है। दर्शनार्थ लाखों व्यक्ति एकत्र हो गए। राजा ने गुणसुन्दर से पूछा—किसी ने तुम्हारी आज्ञा भंग की या कौनसा दुख उपस्थित हो गया, जिससे तुम अग्नि प्रवेश करते हो। उसने कहा—इष्ट-वियोग के कारण मैं काष्ठभक्षण कर रहा हूँ। राजा ने कहा—कोई सुज्ञ पुरुप इसे समझावे। लोगों ने कहा—पुण्यसार के साथ इसकी मित्रता है, वही समझदार व्यक्ति है जो इसे मरने से रोक सकता है। राजा ने पुण्यसार को बुलाया। पुण्यसार ने उसके निकट जाकर पूछा कि किस दुख से तुम देह त्याग करने को प्रस्तुत हुए हो ? गुणसुन्दर ने कहा—हृदय का दुख किसके आगे कहा जाय ? उसकी कोई सीमा नहीं। पुण्यसार ने कहा—मैं भी तो कम दुखी नहीं, मेरी प्रियाएं वल्लभी मे अपने पीहर मे रहती हैं। अब तुम भी अपना दुख कहो ! गुणसुन्दर ने कहा—मेरा प्रिय यहीं गोपाचलपुर मे है जिसकी शोध में मैं यहाँ आई और प्रतिज्ञा की अवधि पूर्ण

होने पर अब प्राणान्त करने को प्रस्तुत हूँ ! पुण्यसार ने कहा—मैं वही हूँ, पहचानो ! गुणसुन्दरी ने कहा—प्रियतम ! आप मुझे तोरण द्वार पर छोड़ आए तो मैंने आपको प्राप्त करने के लिए ही इतना प्रयास किया। अब मेरा उद्देश्य पूर्ण हुआ, मुझे स्त्री वेश दीजिये ! पुण्यसार ने घर से स्त्री की पोशाक मगा कर दी जिसे धारण कर गुणसुन्दरी ने श्वसुरादि को नमस्कार किया।

राजा के पूछने पर पुण्यसार ने सारा व्यतिकर बतलाया तो सुन कर सब लोग चकित हो गए। रत्नसार ने कहा—मेरी पुत्री की अब क्या गति होगी ? राजादि सब लोगों ने कहा—उसका पति स्वाभाविक ही पुण्यसार हो गया, इसमें पूछना ही क्या है ? वल्लभी से छओं परिणीताओं को बुला लिया गया। सेठ ने पुण्यसार के लिए आठ महल प्रस्तुत कर दिये, जिसमें रहते हुए वह अपनी कुल मर्यादानुसार काल बिताने लगा।

एक वार ज्ञानसागर नामक ज्ञानी गुरु के पधारने पर पुरन्दर सेठ भी पुण्यसार आदि परिवार को लेकर धर्मोपदेश सुनने गया। सद्गुरु की वैराग्यमय वाणी श्रवण कर बहुत लोग प्रतिवोध पाये। सेठ पुरन्दर के पूछने पर उन्होंने पुण्यसार का पूर्वभव इस प्रकार बतलाया कि नीतिपुर में यह सरल स्वभावी कुलपुत्र था। ससार से विरक्त हो कर सुगुरु सुधर्म के निकट दीक्षित हुआ और सयम-धर्म की आराधना करने लगा। वह दश मच्छर आदि का उपसर्ग होने पर कायगुप्ति का पालन न कर कायोत्सर्ग में वार वार उड़ाता रहता। गुरु

से शिक्षा प्राप्त कर शुद्ध क्रिया करने में तत्पर हो गया और मर कर सौधर्म देवलोक में देव हुआ, वहां से च्यव कर पुण्यसार हुआ है। पूर्व पुण्य के प्रभाव से इसे देवता का सानिध्य मिला और संपदा प्राप्त हुई। ५ समिति और ३ गुप्ति इन आठों मे इसने कायगुप्ति कष्ट से पालन की थी, जिससे सात स्त्रियाँ तो सहज और आठवीं कष्ट से मिली।

पुरन्दर सेठ पुण्यसार को गृहभार सौंप कर दीक्षित हो गया। पुण्यसार ने भी चिरकाल तक श्रावकधर्म पालन कर अन्त में पुत्रादि से विदा लेकर संयममार्ग स्वीकार किया और अनशन पूर्वक समाधि मरण प्राप्त किया। कविवर समयसुन्दर ने यह चौपई शांतिनाथ चरित्र के अनुसार निर्माण की है।

—:o:o:—

समयसुन्दर रास पञ्चक

सूचनिका

श्री सद्गुरुभ्योनमः

समयसुन्दर रासत्रय

प्रियमेलक-तीर्थ-प्रबन्धे सिंहलसुत चौपई

सोरठिया दूहा ६

प्रणमू सद्गुरु पाय, समरूं सरसति सामिणी ।
दान धरम दीपाय, कहिसि कथा कौतक भणी ॥१॥

धरमा माहि प्रधान, देता रूडा दीसियइ ।
दीधउ वरसीदान, अरिहंत दीक्षा अवसरइं ॥२॥

उत्तम पात्र तउ एह, साधनइ दीजइ सूझतउ ।
लहियइ लाछि अछेह, अढलिक दान जउ आपियइ ॥३॥

अति मीठा आहार, सखरा देज्यो साधनइ ।
सुख लहिस्यउ श्रीकार, फल बीजा सरिखा फलइ ॥४॥

प्रथिवी माहि प्रसिद्ध, सुणियइ दान कथा सदा ।
प्रियमेलक अप्रसिद्ध, सरस घणुं सम्बन्ध छइ ॥५॥

सुणउ मिलइं जउ संख, ए सुणता जे उंघस्यइ ।
उ माणस अगलिंच, के मुझ वचनि को रस नहीं ॥६॥

ढाल १ राग—रामगिरी

चाल—नयरी द्वारामती कृष्ण नरेस, एहनी

सिंहलदीप सिंहल राजान, सिंहली राणी जीव समान ।
सिंहलसिंह कुमर अति सूर, प्रगट्यउ पुण्य तणउ अकूर ॥१॥
माइ बाप नइं मानइं घणुं, एतउ लक्षण उत्तम तणुं ।
दीसइं रूपइं देवकुमार, चालइं उत्तम कुलि आचार ॥२॥
कुमरइ सीखी बहुतरि कला, व्यसन सात कीया वेगला ।
पर उपगारी परम कृपाल, रूड़ा वोलइ वचन रसाल ॥३॥
साहसीक पराक्रम सार, परदुख कातर पुण्य प्रकार ।
विनयवंत अनइं जसवंत, सकल कला गुण मणि सोभत ॥४॥
एहवइं मास वसंत आवियउ, भोगी पुरषा मनि भावियउ ।
रूड़ी परि फूली वणराइ, महकइ परिमल पुहवि न माइ ॥५॥
सखर घणुं मउर्‌या सहकार, माजरि लागी महकइ सार ।
कोयलि वइठी टहुका करइ, साखा ऊपरि मधुरइ सरइ ॥६॥
छयल छबीला नर छेकाल, गायइ वायइं वाल गोपाल ।
चतुर माणस ते हाथे चंग, मेघनाद वाजइ मिरदंग ॥७॥
फूटरा गीत गायइं फागता, रसिक तेह कहइं रागना ।
ऊडइ लाल गुलाल अबीर, चिहु दिसि भीजइ चरणा चीर ॥८॥
नगर माहि सको नरनारि, आणंद क्रीडा करइं अपार ।
ढलती रामगिरी ए ढाल, समयसुन्दर कहइ वचन रसाल ॥९॥

[सर्व गाथा १५]

सोरठीया दूहा ३

क्रीड़ा करण कुमार, इण अवसर वनि आवियउ।
पूठि बहु परिवार, खेलण लागउ खाति सुं ॥१॥

तिण अवसरि वनि तेण, वन-गज आयउ विलसतउ।
जल थल लंघ्या जेण, मातउ मयगल मद झरइ ॥२॥

नगर सेठ धन नाम, कन्या तेहनी क्रीड़ती।
अकसमात अभिराम, गज सुंडादंड माहि ग्रही ॥३॥

[सर्व गाथा १८]

ढाल (२) पाइल री, अथवा—करइ विलाप मृगावती,

कुंयरी रोयइ आक्रंद करइ, मुंनइ को मुंकावइ।
आंखे बिहुं आंसू झरइ, मुंनइ को मुंकावइ ॥१॥

मरूं रे मरूं मोरी मातजी, मुं० तुरत आवउ मोरा तातजी॥२॥
हा हा हाथी हुं अपहरी, मुं० धीरिज हुं न सकुं धरी मुं० ॥३॥
केथि गई कुल देवता मु०, सकल कुटंब पाय सेवता मुं० ॥४॥
करउ रे कृपा अबला तणी मुं०, चतुर जायउ कोई चाद्रणी ॥५॥
आक्रंद कुमर सुण्या इसा मु०, कुण विलाप देखुं किसा ॥६॥
ततखिण कुमर गयउ तिहा मुं० जुवती रोती थी जिहा ॥७॥
कष्ट देखी कुमरी तणउ मुं०, प्रगट थयउ करुणा पणउ मु० ॥८॥
कुमर विचार इसउ करइ मुं०, उत्तम उपगार आदरइ मु० ॥९॥
पर उपगार कीधा पखी मुं०, दस मास मात कीधी दुखी ॥१०॥

यतो गाथा त्रयं —

किं ताणं जम्मेणवि, जणणीए पसव दुक्ख जणएण।
पर उवयार मुणो विहु, न जाण हिययंमि विप्फुरई ॥१॥
दो पुरिसे धरउ धरा, अहवा दोहिं पि धारिया धरिणी।
उवयारे जस्स मई, उवयारं जो नवि म्हुसई ॥२॥
लच्छी सहाव चला, तओ वि चवलं च जीवियं होई।
भावो तउ वि चवलो, उवयार विलंबणा कीस ॥३॥
सूर वीर अति साहसी मु०, उपगार मति मनि उल्लसी ॥११॥
कुमर कला काई केलवी मु०, भली रे हकीकति भेलवी ॥१२॥
कुमर छोडावी कुंयरी मुं०, कु० सुजस सोभाग सिरी वरी ॥१३॥
वात नगर माहे विस्तरी मुं० कुं, सिगलइ कीरति संचरी ॥१४॥
धन धन कुमर धीरिज धरयउ मुं० कु, कुण उपगार मोटउ करयउ मुं० कु० ॥१५॥
वाटइ सेठ वधामणी मुं०, भूप आयउ देखण भणी मुं० ॥१६॥
खलक लोक देखइ खड़ा मु०, बोलइं कुमर विरुद वड़ा मु० ॥१७॥
कुमरी राग जाणी करी मु ०, धन सेठइं आगइं धरी मुं० ॥१८॥
परणावी पाचे मिली मु ०, राजा सेठ पूगी रली मुं० ॥१९॥
धन-धन नारि ए धनवती मुं, पुरुष रतन पाम्यउ पती मुं०॥२०॥
महुल मंदिर रुड़े मालिए मुं०, आणंद करइ गउख आलिएमुं०।२१।
काम भोग अधिकार ना मुं०, सुख भोगवइ संसार ना मुं०।२२।
एह ढाल उपगार नी मु ०, समयसुन्दर कहइ सार नी मुं० ।२३।
[सर्वगाथा ४४]

सोरठिया दूहा ४

सिंहलसुत सोभाग, रूपइं दीसइं रूयड़उ।
रमणी आणइं राग, केड़ि न मुंकइं कामिनी ॥ १ ॥
जिण जिण गलिए जाय, तिण गलीए तरुणी फिरइ ।
काज काम न कराय, चिटपट लागी चित्त मइं ॥ २ ॥
पंच मिली पोकार, अवनीपति आगइ करी।
के तुं कुमर निवारि, अथवा अम्हनइं सीख दे ॥ ३ ॥
महाजन मन संतोप, राजा रूडी परि कीयउ।
दाख्यउ दुसमण दोष, कुमर नइ राख्यउ क्रीडतउ ॥ ४ ॥
[सर्वगाथा ४८]

ढाल (३) वालुं रे सवायउ वयर हु माहरुं जो, एहनी

अमरप कुमर नइं आवीयउ जी, कीयउ मुझ सुं पिता कूड़।
अवहील्या जे आघा पडइं जी, धिग ते जनम नइं धूड़ि ॥ १ ॥
करम परीक्षा करण कुमर चल्यउ जी, धणवती चली धण साथि।
कंत विहूणी किसी कामिनी जी, अस्त्री नइ प्रियु आथि ॥ २ ॥
देश प्रदेसे अचरिज देखस्युं जी, भाग्य नउ लहस्युं भेद।
साजण दूजण समझस्युं जी, इम मनि धरी रे उमेद ॥ ३ ॥ क०

यतः

दीसइ विविह चरिय, जाणिज्जइ सयण दुज्जण विसेसो।
अप्पाण च कलिज्जइ, हिंडिज्जइ तेण पुहवीए ॥ १ ॥

आधी राति ऊठियउ जी, सुंदर लीधी साथि।
सिंहलसुत महा साहसी जी, हथियार तरवारि हाथि ॥ ४ ॥
तुरत गयउ दरिया नइं तटइ जी, समुद्रे चढ्यउ साहसीक।
प्रवहण बइठउ पर दीपा भणी जी, नारि नइं लेई रे निजीक ॥५॥
आगलि जाता दरियउ ऊछल्यउ जी, तिम वलि लाग्यउ तोफान।
प्रवहण भाग्यउ कोलाहल पड़यउ जी, अतिदुख पड़्यउ असमान।६।
पुण्य सयोगइ पाम्यउ पाटियउ जी, धनवती लीधउ आधार।
नारि सहंती दुख नीसरी जी, पाम्यउ समुद्र नउ पार ॥७॥ क०
अबला चाली तिहांथी एकली जी, वसती जाउं किण वेगि।
कंत विहूणी रूपवंत कामिनी जी, उपजइ कोड़ि उदेगि ॥८॥ क०
नगर निजीक नारी गई जी, पेख्यउ एक प्रासाद।
दंड कलस ध्वज दीपतां जी, नवला संख निनाद ॥ ६ ॥ क०
धनवती पूछी काइ धरमिणी जी, कहि बाई कुण ए गाम।
कुण तीरथ एह केहनउ जी, ए महिमा अभिराम ॥ १० ॥ क०
गाम कुसमपुर गुणनिलउ जी, इंद्रपुरी अवतार।
प्रियमेलक तीरथ परगड़उ जी, सहु जाणइ संसार ॥ ११ ॥
वेगि मिलइ प्रियु वीछड्यउ जी, नित तप करइ जे नारि।
इहाँ वइठी अणबोलती जी, परता पूरइ अपार ॥ १२ ॥ क०
धनवती मौन वरत धरी जी, जाइ बइठी जोग ध्यान।
नाह मिल्यां विण बोलूँ नहीं जी, ए हठ लीयउ असमान ॥१३॥

मन गमती ढाल मारुणी जी, दुखिया जगावइ दुक्ख।
समयसुन्दर कहइ सुणता थका जी, सुखिया संपजइ सुक्ख ॥१४॥
[सर्वगाथा ६३]

दूहा सोरठिया ३

कुमरइ पणि इक कोय, लाधउ लावउ लाकड़उ।
तरतउ तरतउ तोय, पारइं पहुँतउ पाधरउ ॥१॥
जेहवइ आगइं जाय, नगर रतनपुर निरखीयउ।
रत्नप्रभ तिहाँ राय, राणी रतनासुंदरी ॥ २ ॥
रतनवती बहु रूप, राजा नइं बेटी रतन।
सुंदर सकल सरूप, भर जोवन आवी भली ॥ ३ ॥
[सर्व गाथा ६६]

ढाल (४) राग—आसाउरी,

चाल—सहजइ छेहडउ रे दरजणि स० वालि रे भर जोवन माती,

तिण अवसर वाजइ तिहा रे, ढढेरा नउ ढोल।
चउरासी चहुटे भमइ, बोलइ वलि एहवा बोल रे ॥ १ ॥
राजा नी कुंयरी, मरइ रे साप खाधी सुंदरी।
को जीवाडइ रे, कुमरी को जीवाड़इ। आंकणी।
गारुड़ी नाग मंत्रा गुण्या रे, मरद्या मोरी गइ।
मणि पणि डंक ऊपरि मूंकी, गुण न थयउ ते गया रइ रे ॥२॥ रा०
हिव वैद्ये हाथ झाटक्या रे, उपजइ नहिं को उपाय।
मुरछागत कुमरी मरइ, जीवित हाथा मांहि जाय रे ॥३॥ रा०

कुमर महा अति कौतकी रे, आणी उपगार बुद्धि।
पड़ह छब्यउ निज पाणि सुं, सापुरषा साची सिद्धि रे ॥४॥ रा०
कुमर आण्यउ कुमरी कन्हइ रे, निर्मल आण्यउ नीर।
उहली मुंद्रड़ि आपणी, सहु छाण्यउ कुमरी शरीर रे ॥ ५ ॥ रा०
पाणी पायउ प्रेम सुं रे, ऊठि बइठी थई आप।
कुमरइ उपगार ए कियउ, बहु हरख्या माइं नइं बाप रे ॥६॥रा०
रूपइं दीठउ रूयड़उ रे, गुण दीठउ उपगार।
उत्तम कुलि तिण अटकल्यउ रे, प्रगट्यउ पुण्य प्रकार रे ॥७॥रा०
रत्नप्रभ गुण रंजियउ रे, कीधउ कुमरी वीवाह।
दीधउ कुमर नइं दायजउ, अधिकउ कुमरी उच्छाह रे ॥८॥ रा०
राति पड़ी रवि आथम्यउ रे, जाग्यउ मदन जुवान।
रंगमहुल पहुता रली रे, वारू जाणे इंद्र विमान ॥९॥ रा०
वर पल्लंग विछाइयउ रे, पाथर्‍या बहु पटकूल।
अगर उखेव्या अति घणा, महकइं परिमल अनुकूल ॥१०॥ रा०
दीवा कीधा चिहु दिसइं रे, रत्नवती बहु रंग।
कुमर पलंग छोडी करी, सूतउ धरती तजि संग रे ॥११॥ रा०
चतुर नारी मनि चींतवइ रे, करम फूटउ मुझ कोय।
सेज छोड़ी धरती सूयइ, रमणी जीवितइं नइ रोय ॥१२॥ रा०

यत·

घरि घोड़उ नइ पालउ जाइ, घरि घीणउ नइं लूखउ खाइ।
घरि पलग नइ धरती सोयइ, तिण री बइरि जीवतइ नइ रोवइ ।१।

पुछ्यु कुमरी प्रेम सु रे, भेद कहउ भरतार।
ए वयराग तुम्हे आदस्यउ, किम राग तणइं अधिकार रे।१३रा०
कुमरइं मन माहि अटकल्यउ रे, स्त्रीनइ न कहीयइ साच।
वली विसेस वात सउकिनी, वदइ पंडित एहवी वाच रे।१४रा०
कुमर कहइ वात केलवी रे, सुणि सुदरि मुझ संच।
मा बाप थी मइं वीछड्यइ, राख्यउ अभिग्रह रच रे।।१५।। रा०
सूस्यु धरती सर्वदा रे, पालीसि सील प्रताप।
सूंस लियउ मइं सुंदरी, मिलस्यइ नहि जा माइ बाप रे।।१६।।
कहइ कुमरी सुणउ कंत जी रे, धन्य तुम्हें धस्यउ नेह।
भगति मा बाप तणी भली, उत्तम पुत्र लक्षण एह रे।। १७ ।।रा०
भेद जाण्यउ सहु भूपती रे, चिन्तातुर थयउ चित्त।
कुमर नइं पूछ्यु किहा वसउ, कुलवंश कहउ सुपवित्त रे।१८रा०
कुमर कहउ कुल आपणउ रे, वंश अनइ गाम वास।
समयसुंदर कहइ सहु सुखी, रही रत्नवती नीरास रे।।१६।।रा०

[सर्व गाथा ८६]

सोरठिया दूहा ४

रत्नप्रभ हिव राय, कुमरी सम्प्रेडण करइ।
राखी रती न जाय, सुख लहिस्यइ गइ सासरइ।।१।।
मणि माणिक बहु माल, मोती जवहर मूंगीया।
रतन अमूलिक लाल, चीर पटवर चरणिया।।२।।
सहु संप्रेडण साज, कुमरी नइं राजा कीयउ।
जतने घणे जीहाज, बइसास्या वेऊ जणा।।३।।

राजा पुरोहित रुद्र, संप्रेडण साथइ दियउ।
खोटउ मन में क्षुद्र, सिंहलद्वीप साम्हा चाल्या ॥४॥
[सर्व गा० ६०]

ढाल (५) अलवेल्यारी

प्रवहण तिहाथी पूरियउ रे लाल,
सहु सुं कीधी सीख ॥ हरिणाखी रे।
आसीस दीधी एहवी रे लाल, विलसउ कोड़ि बरीस ॥हरि०१॥
तइ मेरउ मन मोहियउ रे लाल, मानि मोरी अरदास ॥ हरि०
प्रारथिया पहिड़इ नहीं रे लाल, उत्तम पूरइं आस ॥हरि० २॥
रत्नवती रूप रजियउ रे लाल, प्रोहित आण्यउ पाप ।हरि०
नाखु कुमर नइ नीर मंइ रे लाल, एहनइ भोगवइ आप॥हरि०३॥
सिंहलसिंह मारु सही रे लाल, हुइ कुमरी मुझ हाथि । हरि०
जनम जीवित सफलउ करु रे०, सुख भोगवु इण साथि ॥ह०४॥
प्रवहण वहता पापियइ रे लाल, लपट लाधउ लाग । हरि०
दरिया माहि नाखी दीयउ रे०, ऊंडउ जेथि अथाग ॥हरि०५॥
रुद्र पुरोहित रोवतउ रे लाल, करइ रे आक्रंद पोकार । हरि०
हा हा दैव किसु हुयउ रे लाल, किम जल बूड़उ कुमार ॥ह०६॥
एह अखत्र इणइ कीयउ रे लाल, किसु न करइ कामंध । हरि०
हुं केथी थाउं हिवइ ते लाल, धणि पाखइ सहु धंध ॥हरि० ७॥
प्रोहित प्रारथना करइ रे लाल, भोगवि मुझसु भोग । हरि०
हुं किंकर तोरउ हुस्यु रे लाल, सुंदरि म करि तुं सोग ॥ह०८॥

चतुर नारी इम चिंतवइ रे लाल, कहउ हिव हुं करुं केम । ह०
सील मोरउ ए खंडस्यइ रे लाल, आपदा पड़ी मुझ एम ॥ह०६॥

हैं है वज्र मोरउ हीयउ रे लाल, पाथर थीय प्रचंड । हरि०
वाल्हेसर थी वीछड्या रे लाल, खिण न थयउ सतखंड ॥ह०१०॥

रे रे दैव तुं का रूठउ रे लाल, कुण अपराध मइं कीध । ह०
किहा पीहर किहा सासरउ रे लाल, दुख माहे दुख दीध ॥ह०११॥

विरह विलाप करु किसा रे लाल, रोया न लाभइ राज ।ह०
कोई वचना, कहु केलवी रे लाल, ए घाच टाल्यु आज ॥ह०१२॥

प्रोहित हुं तुझ वसि पड़ी रे लाल, सुख भोगवि ज्युं सुहात ।ह०
पणि बारहीयउ प्रियु तणउ रे०, कीधा पछी काइ बात ॥ह० १३॥

जोरइ प्रीत जुड़इं नहीं रे लाल, पडखि मुंनइ पंचराति । हरि०
रत्नवती सील राखीयउ रे लाल, प्रणमीजइ परभाति ॥ह० १४॥

आगइं दरियउ ऊछल्यउ रे लाल, भागी बेडी भड़ाक । हरि०
कोलाहल लोके कीयउ रे लाल, हा हा पड़ी बुंबहाक ॥ह० १५॥

लाधउ कुमरी लाकडउ रे लाल, तरती गई जल तीर ह० ।
प्रियमेलक पणि पामीयउ रे लाल, दुःख करती दिलगीर ह० ॥१६॥

प्रियमेलक भेद पूछियउ रे लाल, पहुती धनवती पासि ह० ।
नाह विना बोलुं नहीं रे लाल, ए यक्ष पूरस्यइ आस ह० ॥१७॥

प्रोहित ते पणि पापीयउ रे लाल, जीवितउ नीसरयउ जाणि ह० ।
नगर कुसमपुर नउ धणी रे लाल, मुंहतउ थयउ तसु माणि ॥१८॥

बे नारी वइठी रहइं रे लाल, जोता प्रियु दिन जात ह० ।
समयसुन्दर कहइ साभलउ रे लाल, वलि कहुं त्रीजी वात ह०॥१६॥
[सर्व गाथा १०६]

सोरठिया दूहा ६

पडतउ पाणी माहि, किणही कुमर उपाडियउ ।
पूरब पुण्य पसाहि, आण्यउ तापस आश्रमइं ॥१॥
आणंद तापस अंग, दीठा लक्षण देहना ।
रूपवती मनि रग, पुत्री परणावी पिता ॥२॥
कंथा दीधी काइ, कर मूंकावण कुमर नइं ।
सउ टका सुखदाइ, खिरी पड़इ खखेरता ॥३॥
सखर खटोली साइ, आपी आकासगामिनी ।
जहा भावइ तहां जाइ, मन जिहां मानइ आपणउ ॥४॥
बइसि खटोली बेउ, आकास मारगि ऊडीया ।
धनवती ध्यान धरेउ, जाउं धनवती छइ जिहा ॥५॥
नगरी कुसम निजीक, खिण मइ गई खटोलड़ी ।
नर नारी निरभीक, आवी बेऊ ऊतस्या ॥६॥
[सर्व गाथा ११५]

ढाल (६) राग—वयराडी, जलालिया नी

तिण अवसरि तरसी थई रे,
रूपवती करइ अरदास, जीवन मोराजी ।
कुंली रे काया तावड़ आकरउ रे,
पापिणी लागी मुनइं प्यास, जी० ॥१॥

पाणी रे पायउ हुं तरसी थई रे, खिण इक मइ न खमाय । जी० ।
कठ सूकइ काया तपइ रे, जीभइ बोल्यु न जाय । जी० ॥२॥
कंथा खाट काता तजी रे, जल लेवा नइ जाय । जी० ।
कुमर आगइ दीठउ कूयउ रे, थोडुं सु नीचउ जल नइं थाय ॥३॥
भुजंग बोल्यउ भाषा मनुष्य नीरे, काढि मुंनइ करि उपगार ।जी०।
लावउ मुंक्यउं आघउ लूगड़ड रे, काढ्यउ साप कुमार । जी०॥४॥
झाट मारी साप झूबियउ रे, कूबड़ कीधउ कुरूप । जी० ।
कुमर कहइ कासु कीयउ रे, अधम करइ ए सरूप । जी० ॥५॥
साप कहइ गुण जाणे सही रे, आगइं देखिस आप । जी० ।
सकट कष्ट पड्या सही रे, सानिध करिस्यइ तुं नइ साप ॥६॥
अचरिज कुमर नइं ऊपनउ रे, पाणी ले आयउ नारी पासि जी० ।
पी पाणी सीतल प्रिया रे, वनिता रहीय विमासि जी० ॥ ७ ॥
कुण पुरुष ए कूबड़उ रे, पर पुरुषा न रहुं पासि जी० ।
उफराठी ऊभी रही रे, वामणउ करइ रे वेषास जी० ॥ ८ ॥
नीर पीधा विण नीसरी रे, कंथ गयउ मुझ केथि जी० ।
वनि वनि जोयउ वालहउ रे, अबला न दीठउ एथि जी० ॥ ६ ॥
भूली रे भमंती गई भामिनी रे, तीरथ प्रियमेल तेथि जी० ।
त्रीजी रे बइठी नारी सिहा रे, जुवती बइठी छइ जेथि जी० ।१०।
त्रिण्हे नारी तपस्या करइं रे, बोलइं नहीं एक बोल जी० ।
समयसुन्दर कहइ हुं साख द्यु रे, एहनउ सील अमोल जी० ॥११॥
[सर्व गाथा १२६].

दूहा ६

कथा खाट मुंकी किहा, काता रहित कुमार।
नगर कुमर ते निरखता, निरखी त्रिण्हे नारि ॥ १ ॥
केइक दिन रहता थका, विस्तरी सगलइ वात।
कुमरी त्रिण तपस्या करइं, परमारथ न प्रीछात ॥ २ ॥
बोल एक बोलइ नहीं, दिव्य रूप कृश देह।
अन्न पान को आणि द्यइं, तउ ते खायइ तेह ॥ ३ ॥
राजा मनि आवी रली, साचउ एहनउ सत्त।
जिम तिम बोली जोइजइ, चिटपट लागी चित्त ॥ ४ ॥
राजा पडह फेरावियउ, साभलिज्यो सहु कोउ।
पुत्री द्यु तसु पुरुष मइं, जुवति बोलावइ जोउ ॥ ५ ॥
पडह छब्यउ वामण पुरुषि, पुहतउ राजा पासि।
ऊठि प्रभाते आवज्यो, तुरत बोलाविस तास ॥ ६ ॥
[सर्वगाथा १३२]

ढाल (७) मइ वइरागी संग्रह्यउ, एहनो

ऊठि प्रभाति आवीयउ, राजा रूड़ी रीतो रे।
सेठ सेनापति सूत्रवी, मत्री महाजन मीतो रे ॥ १ ॥
कुमरी वोलावइ कूवड़उ, लोक मिल्या लख कोडो रे।
अचरिज लोक नइं ऊपजइ, जुगति कहइ हीया जोड़ो रे ॥२॥ कु०
कोरा पाना काढिया, वलि कहइ एहवी वातो रे।
अक्षर ए देखइं नहीं, ते जाणीजइ त्रिजातो रे ॥ ३ ॥ कु०

भूपति प्रमुख सहु को भणइं, अक्षर सखरा एहो रे।
तिरजात कुण थायइं तिहा, किणरइ कारिज केहो रे ॥४॥ कु०
वाचइ पोथी वामणउ, साभलिज्यो सहु कोयो रे,
सिंहलसुत निज नारिसुं, चळ्यउ दरियइं चित्त लायो रे ॥५॥
आगइ दरियइं आवता, प्रवहण भागउ प्रवायो रे।
आज कथा कही एतली, वलि विहाणइ कहिवायो रे ॥६॥ कु०
हिव कहि आगइं किसुं हुयउ, बोली धनवती बालो रे।
कहिवा लागउ कूबडउ, भामिनी बोली भूपालो रे ॥७॥ कु०
वलि परभाति आवीया, रस लीधा राय राणो रे।
कोरी पोथी कूबड़उ, वाची करइ वखाणो रे ॥८॥ कु०
काष्ठ आधारि कुमर गयउ, नयर रतनपुर नामो रे।
रत्नवती सुता रायनी, उणि परणी अभिरामो रे ॥९॥ कु०
रत्नवती नइ ले चल्यउ, आवता समुद्र नइ आधो रे।
प्रोहित कुमर नइ पापियइं, नाख्यो नीर अगाधो रे ॥ १०॥ कु०
पोथी बाधी पडितइ, एतलउ सबंध आजो रे।
काल्हि कहिसि इहा आवज्यो, केहनइं छइ काम काजो रे ॥११॥कु०
रत्नवती न सकी रही, ततखिण बोली तामो रे।
कहि आगलि कासु थयउ, पडित करू य प्रणामो रे ॥१२॥ कु०
बीजी पणि बोली अछइ, सहु लोका नी साखो रे।
त्रीजइ दिन आया तिहा, लोक मिली नइ लाखो रे ॥१३॥ कु०
वांचइ आगइ वामणउ, अद्भुत राग उदारो रे।
पाणी मइं पडतउ थकउ, किणही उपाड्यउ कुमारो रे ॥१४॥ कु०

तापस परणावी तिहाँ, आपणी पुत्री एको रे।
रत्नवती रूपइ भली, वारू विनय विवेको रे ॥१५॥ कु०
खिणमइ वइसि खटोलडी, आया आश्रम एथो रे।
कुमर गयउ कूया भणी, आणिवा नीर अनेथो रे ॥१६॥ कु०
साप भ्रूव्यउ तेहनइ सही, ए त्रिहुं ना अवदातो रे।
इम कहिनइ ऊभउ रह्यउ, रूपवती न रहातो रे ॥१७॥ कु०
त्रीजी पणि बोली तिहा, तिम हिज ते ततकालो रे।
कुसमवती मागइ कूवड़उ, वाचा अविचल पालो रे ॥१८॥ कु०
मानी वात महीपति, आण्यउ निज आवासो रे।
चउरी वाधी चिहुं दिसइ, हरिणाखी करइ हासो रे ॥१६॥ कु०
गीत कोई गायइ नहीं, अंगि नहीं उछरंगो रे।
समयसुंदर कहइ सहु कहइ, सरिज्यो का ए संगो रे ॥२०॥ कु०
[सर्व गाथा १५२]

दूहा :

कुमरी मनि कौतुक थयउ, चिटपट लागी चित्ति।
कहिस्यइं इण विन को नहीं, प्रियु आगली प्रवृत्ति ॥ १ ॥
चउरी माहि चतुर गई, अवसर दीठउ एह।
सेवा करी संतोषस्या, नयण जणावइ नेह ॥ २ ॥
सोहलउ गायइ सुंदरी, तिण्हे मिली एक तान।
कहइ कदाचि खुसी थकउ, प्रीतम वात प्रधान ॥ ३ ॥
[सर्वगाथा १५५]

ढाल (८) सोहला री,

दुलह किसण दुलहि राणो राधिका जी, एहनी

कुमर कुमर सोभागी लाडण कूवड़उ जी, परणइं पुण्य प्रमाण ।
कुसम कुसमवती राजा नी कुंयरी जी, रूपइ रंभ समाण ॥१॥
दुलह कुमर कुमरी दुलहणी जी, चंद रोहिणि चिर जेम ।
अविचल अविचल जोडी होइज्यो एहनी जी,
प्रतिदिन वाधतइ प्रेम ॥ २ ॥ दु०
चतुर चतुर कुमर तोरी चातुरी जी, रीझविया राय राण ।
अम्हनइ अम्हनइ बोलावी अणबोलती जी,
पणि न कह्यउ जीव प्राण ॥ ३ ॥ दु०
कुवज कुवज कुमर अपछर कुंयरी जी, कारिम आरिम कीध ।
वरकन्या वरकन्या चउथउ मंगल वरतीयउ जी,
दखिणा याचक दीध ॥ ४ ॥ दु०
हरख हरख नहीं को हाथ मुकावणीजी, सालउ कहइ ल्यइ साप ।
कुमर कुमर कहइ साप आवउ कूपनउ जी,
आयउ साप तेहिज आप ॥ ५ ॥ दु०
कुमर कुमरनइं झूब्यउ साप तिहा किणइ जी,
मुरछित थयउ खिण माहि ।
मरण मरण साहस तिहा माडियउ जी,
सुंदरी छुरी रही साहि ॥ ६ ॥ दु०
कुमर कुमर मुयउ वात न को कहइजी, अम्हे पणि मरिस्य आज ।
अम्हनइ अम्हनइ सरण हिव एहनउ जी, कुण जीव्या नउ काज ।७।

तुरत तुरत प्रगट थयउ देवता जी, सुंदर कीधउ सरूप।
कुबज कुबज हुँतउ ते देवकुमर थयउ जी, मनोहर मूलगइ रूप ॥८॥
हरषित हरषित लोक सकों हुयउ जी, राय राणी उछरग।
भलउ भलउ लोक सको भणइं जी, आणंद कुसमवती अंग ॥६॥
उलख्यउ उलख्यउ प्रीतम एतउ आपणउ जी,
भागि मिल्यउ भरतार।
अपछर अपछर मिली च्यारे एकठी जी, कंत मेल्यउ करतार॥१०॥
महोछव महोछव मोटउ राजा माडियउ जी, वीवाह नउ विस्तार।
धवल धवल मंगल धुनि गावती जी,
वरनइ वखाणइ वार-वार ॥ ११ ॥ दु०
धन धन धन धन कुसमवती धुया जी, भलउ पाम्यउ भरतार।
भगति भगति जुगति भोजन अति भला जी,
दीजइं दय दयकार ॥ १२ ॥ दु०
सुदरी सुदरी च्यारेरही सुख भोगवइ जी, सिंहलसिंह प्रियु साथि।
समय समयसुदर कहइ सुकृतथकी जी, हुइ सुख सिगलाहाथि ।१३।
[सर्वगाथा १६८]

दूहा ४

कुमरइ पूछ्यउ कुण तु, किम कीधउ उपगार।
देव वदइ हुँ देवता, नामइ नागकुमार ॥ १ ॥
मइं तुझ आश्रम मुकीयउ, पडतउ पाणी माहि।
कीधउ रूप मइं कूवड़उ, चित माहे हित चाहि ॥ २ ॥

पुण्य घणउ तुझ पाछिलउ, सबलउ तुज्झ सनेह।
सानिधकारी हुँ थयउ, इहाँ कणि कारण एह ॥ ३ ॥
कुमर कहइ सगपण किस्यउ, मुझ तुझ माहोमाहि।
नाग कहइ साभलि निपुण, आणी अंगि उछाह ॥ ४ ॥
[सर्वगाथा १७२]

ढाल (९) पूरव भव तुम्हें साभलउ, एहनी

धनपुर नगर धरम तिलउ, सेठ धनंजय सारो रे।
धनवती नारि धरम निलउ, आभ्रण शील उदारो रे ॥ १ ॥
एहवा मुनिवर आविया, नाम थी हुयइ निस्तारो रे।
दरसण जेहनउ निरखता, पामीजइ भव पारो रे ॥ २ ॥ ए०
सेठ दातार सिरोमणि, साधु भगति आचारो रे।
ऊन्हालइ लू आकरी, तावड़उ तपइ अति तारो रे ॥ ३ ॥ ए०
तिण अवसरि आया तिहा, सूधा साध निग्रंथो रे।
गाम नगर गुरु विहरता, पालइ मुगति नउ पंथो रे ॥ ४ ॥ ए०
सतावीस गुण सोहता, जीव तणी करइ जयणा रे।
किम ही कूड बोलइ नहीं, लव अदत्त न लयणा रे ॥ ५ ॥ ए०
मैथुन थी विरमा मुनि, नहीं परिग्रह नहीं माया रे।
रात्रइ क्यु राखइ नहीं, न हणइ छज्जीव निकाया रे ॥ ६ ॥ ए०
इंद्री वसि करइ आपणी, लोभ तउ नहीं लागारो रे।
क्षमावंत मुनिवर खरा, भावना गुण भण्डारो रे ॥ ७ ॥ ए०
पडिक्रमणउ पडिलेहणा, किरिया ना खप कारो रे।
संयम योग धरइं सदा, चरण करण सुविचारो रे ॥ ८ ॥ ए०

मन वचनइ काया मुणी, सुंदर योग समग्गो रे।
सीतादिक पोडा सहइ, अनइ मरण उवसग्गो रे ॥ ९ ॥ ए०
एहवा गुण अणगार ना, वलि ते विद्या पूरा रे।
प्रश्न पडूतर परवड़ा, सवल तपस्या सूरा रे ॥१०॥ ए०
उन्हालइ आतापना, सीयालइ सहइ सीतो रे।
वरषा इद्री वसि करइ, चारितीया सुध चीतो रे ॥११॥ ए०
सवेगी सूधा यती, मोटा साध महंतो रे।
महानुभाव मुनीसरू, विनयवत जसवंतो रे ॥१२॥ ए०
क्रोध कषाय नहीं किहा, कठिन क्रियानुष्ठानो रे।
सुमति गुपति गुण सोहता, ध्यान धरम सावधानो रे ॥१३॥ ए०
कुखी सवल कुल तिला, निरमम निरहंकारो रे।
गोचरि करइ गवेषणा, अति सूझतउ ल्यइ आहारो रे ॥१४॥ ए०
मुनिवर मासखमण तणइ, पारणइ तेथि पधास्या रे।
दरसण धनदेव देखता, निज आतम निस्तास्या रे ॥१५॥ ए०
सान्हउ आयउ साधु नइ, परमाणंद मनि पावइ रे।
मिश्री दूध मीठा घणु, वादी नइ विहरावइ रे ॥१६॥ ए०
ते धनदेव तिहा थकी, पुण्य तणइ परभावइ रे।
हुयउ नागकुमार हुं, देवता मोटइ दावइ रे ॥१७॥ ए०
धनदत्त भावभगति धरी, आणंद अंग न मावइ रे।
सेलड़ीरस अति सूझतउ, विधि सेती विहरावइ रे ॥१८॥ ए०
भाव खंड्यउ पड़िलाभता, तिण वेला तिण्ह वारो रे।
तूते धनदत्त ऊपनउ, सुख लाधा अति सारो रे ॥१९॥ ए०

भाव खंडाणउ ते भणी, वियोग पड्यउ ति त्रिण वेला रे।
वलि रहिनइ विहरावीयउ, महिला मिली तिण मेला रे ॥२०॥
कीधउ रूप कुरूप मइं, वीर ते एणि विचारइ रे।
अधम पुरोहित ओलखी, मत तुम्हनइ ते मारइ रे ॥२१॥ ए०
सुर वाणी सुणता थका, ईहा पोह मनि आण्यउ रे।
पूरब भव पणि आपणउ, जातीसमरण जाण्यउ रे ॥२२॥ ए०
प्रोहित ऊपरि कोपीयउ, कुण अखत्र कमायउ रे।
मारण राजा माडियउ, कुमर कृपाल मुंकायउ रे ॥२३॥ ए०
सिंहलसुत सुख भोवगइं, देव गयउ वात दाखी रे।
दानइ दउलति पामीयइ, समय सुन्दर छइ साखी रे ॥२४॥ ए०

[सर्व गाथा १६६]

दूहा ६

मात पिता मिलवा भणी, उत्कंठा धरइ एह।
पाख ऊरी पहुंचु तिहा, साचउ पुत्र सनेह ॥१॥
अठसठि तीरथ छइ इहा, धुरि गंगा परधान।
अधिकी माता एहवी, मात-पिता बहु मान ॥२॥
धर्म्माचारिज-धर्मगुरु, मा-बाप सेट महंत।
उसिकल ए त्रिहुं तणा, हा किम माणस हुंत ॥३॥
जाव जीव जउ जुगति सु, सेवा कीजइ सार।
माता नी राति माह नी, ऊरण नहीं अपार ॥४॥
माता कूखि धर्यउ मुंनइ, दस मासा सीम दुक्ख।
पाली नइ पोढउ कीयउ, सरज्यउ नही मा सुक्ख ॥५॥

मा बाप गरढा माहरा, मइं मूक्या मतिहीण।
तुरत जाउ हिव हुं तिहां, लागि रहुं पगि लीण ॥६॥
[सर्व गाथा २०२]

ढाल (१०) तिमरी पासइ वडलुं गाम, एहनी ढाल, वाहण नी,
सिंहलसिंह मागी हिव सीख, वर जीवे तुं कोड़ि वरीष।
आसीस लेइ नइ उड्यउ आकास, बइसि खटोलड़ि बहुत उलास ॥१॥
चिहुं दिसि बइठी कुमरी च्यार, कुमर बइठउ विचमइं सुखकार।
गई रे खटोलड़ि आपणइ गाम, कुमर तणा फल्या वंछित काम॥२॥
माता पिता नइ जाइ मिलियउ, दुक्ख वियोग तणउ दुर टलियउ।
हीयंडउ मात पिता नउ हरख्यउ, नयणे आपणउ नंदण निरख्यउ॥३॥
च्यार वहू अति चतुर सुनाम, प्रेम सुं सासू नइ करइ प्रणाम।
सासू वहू नइं द्यइं आसीस, जस पुत्रवती हुइज्यो सुजगीस ॥४॥
आपणउ राजकुमर नइं आप्यउ, थिर राजा आपणइं पाटि थाप्यउ।
राजा योग मारग लियउ रंग, अद्भुत मुगति मारग नउ भंग॥५॥
रूडी परि सिंहलसुत राज, करइ अनोपम धरम ना काज।
पंडित गुरु पासइ प्रतिबुद्ध, श्रावक ना व्रत पालइ सुद्ध ॥६॥
खिण खिण राजा कंथा खंखरइ, झाझी द्रव्य नी कोड़ि झाझरइ।
पृथवी ऊरण पूरण कीधी, दानइ द्रव्य तणी कोडि दीधी ॥७॥
सत्रूकार मंडाया सार, दुखिया नइ ऊधरइ दातार।
आपणइ देसि पलाइ अमारि, आंप रहइ उत्तम आचारि ॥८॥

वावरइ दस खेत्रे निज वित्त, चतुर विचक्षण चोखइं चित्त।
जिनप्रासाद मडाया जेण, ताजा उत्तंग तोरण तेण ॥९॥

मडप पूतलि जग मण मोहइं, सुन्दर दड कलस धज सोहइ।
रण रण रणकइ घट रसाल, करइ राजा पूजा त्रिणकाल ॥१०॥

भगवंत ना बहु बिंब भरावइ, कुलदीपक परतीठ करावइ।
लाभ भणी वलि न्यान लिखावइ, सूत्र सिद्धात ना अरथ
सिखावइ ॥११॥

साधू अनइ साधवी नइ सुद्ध, आहार पाणी द्यइ अविरुद्ध।
साहमी साहमणि ऊगतइ सूरि, परघल भोजन द्यइ भरपूरि ॥१२॥

जीरण देहरा ऊधरइ जाण, पूरब पुण्य तणइ परिमाण।
पौषधशाल करावइ पवित्र, चिहुंदिसि चद्रोदय सुविचित्र ॥१३॥

साधारण द्रव्य मूंकइ सार, ए दस खेत्र तणउ अधिकार।
पड़िकमणउ सामाइक पोषउ, आठ करम रोग मेटण ओसउ ॥१४॥

सदगुरु पासि सुणइ सुवखाण, आगम अरथ तणउ अति जाण।
पर उपगार करइ परगट्ट, विनय विवेक वारु कुलवट्ट ॥१५॥

वहु दिन श्रावक ना व्रतबार, निरमल पाल्या निरतीचार।
अंत समइ अणसण पणि कीधउ, मन सुधि मिच्छामि दुक्कड़
दीधउ ॥१६॥

मरण समाधि करी सौधर्म, सुर पदवी पामी शुभ कर्म।
भोगवि देव सम्बन्धी भोग, सुन्दर अपछर सुख संयोग ॥१७॥

देवलोक थी चवि महाविदेह, उत्तम अवतार लहिस्यइ एह।
साधु समीपि सुणी ध्रम सार, भाव सु लेस्यइ संयम भार ॥१८॥
चारित्र पाली निरतीचार, पामस्यइ केवलन्यान प्रकार।
आठ करम नउ करिस्यइ अंत, मुगति तणा फल लहिस्यइ महंत १६

दान तणा फल परतखि देखउ, पुण्य पहूर सिंहलसुत पेखउ।
साधु नइ सेलडि रस विहरायउ, पद्मिनी च्यार सहित सुख पायउ ॥२०॥

इम जाणी आणी उल्लास, साधु नइ दान देज्यो सुविलास।
अविचल लहिस्यउ सुख अपार, कहइ समय सुंदर अधिकार ॥२१॥
[सर्व गाथा २२३]

ढाल (११) मदन मइ वासउ माहव माडियउ रे, एहनी
राग धन्यासिरी

दान सुपात्रइ श्रावक दीजियइ रे, दानइ दउलति होइ।
दीधा रा देवल चडइ रे, साच कहइ सहु कोइ ॥१॥ दा०

संवत सोल वहुत्तरि समइ रे, मेड़ता नगर मझारि।
प्रियमेलक तीरथ चउपइ रे, कीधी दान अधिकार ॥२॥ दा०

कचरउ श्रावक कौतकी रे, जेसलमेरी जाण।
चतुर जोडावी जिणए चउपई रे, मूल आग्रह मुलताण ॥३॥ दा०

इण चउपइ ए विशेष छइ, सगवट सगली ठाम।
बीजी चउपइ बहु देखज्यो रे, नहिं सगवट नु नाम ॥४॥ दा०

श्री खरतर गच्छ सोहता रे, श्रीजिनचदसूरीस ।
शिष्य सकलचंद शुभ दिमा रे, समयसुदर तसु सीस ॥५॥ दा०
जयवता गुरु राजिया रे, श्री जिनसिंह सूरिराय ।
समयसुंदर तसु सान्निधि करी रे, इम पभणइ उवझाय ॥६॥ दा०
भणतां गुणता भाव सु रे, साभलता सुविनोद ।
सयसुन्दर कहइ सपजइ रे, पुण्य अधिक परमोद ॥७॥ दा०

सर्व गाथा २३० इतिश्री दानाधिकारे प्रियमेलक तीर्थ प्रवन्धे सिंहलसुत चउपई समाप्ता टाल ११ ग्र था ग्रं० ३०५ लिखिता च मेदिनीतटे चोपडोपाश्रये ।छ। ॥श्री॥ संवत् १६७२ वर्षे कातीवदि छठि दिने । साधवी चापा लिखित ॥श्री॥

[अभय जैन ग्रन्थालय प्रति न० ४३१८ प० ८९]

कविवर समयसुन्दरोपाध्याय कृत

श्री वल्कलचीरी चउपई

दूहा

प्रणमु पारसनाथ नइ, प्रणमु सद्गुरु पाय ।
समरू[1] माता सरसती, सहु करज्यो सुपसाय ॥१॥
वलकलचीरी केवली, मोटउ साध महंत ।
चूप करी कहु चउपई, साभलज्यो सहु संत ॥२॥
गुण गिरुआ ना गावता, वलि साधना[2] विशेप ।
भव माहे भमियइ नहीं, लहियइ सुख अलेख ॥३॥
मइ संयम लीधउ किमइ, पणि न पलइ करु केम ।
पाप घणा पोतइ सही, अटकल कीजइ एम ॥४॥
तउ पणि भव तरिवा भणी, करिवउ कोइ उपाय ।
वलकलचीरी वरणवु, जिम मुझ पातक जाय ॥५॥

ढाल (१) चउपई नी, राग—रामगिरी

जवूदीप आपे छा जिहा, भरतखेत्र भलू ते तिहा ।
मगध देश अति रलियामणउ, सर्व देश मइ सोहामणउ ॥१॥
राजगृह नगरी ऋद्धि भरी, चउद चउमासा महावीर करी ।
सालिभद्र नइ धन्नउ साह, इण नगरी पाम्यउ उच्छाह ॥२॥

१—सरसति सामिणी २ साधा तणा

इण नगरी थयउ नंद मणियार, तिण पोसउ कीधउ तिणवार।
तरसे मरइ[1] राति तिणइ, जल बावड़ी करावी जिणइ ॥३॥
दद्दुर नाम थयउ ते देव, श्रीव्रधमान नी करतउ सेव।
सोनहिआ साढी कोडि बार, कइवन्नइ खाधी इक वार ॥४॥
जंबू सामि थयउ जिण ठामि, आठ अंतेउरि तजि अभिराम।
कनक तणी निन्नाणू कोडि, संयम लीधउ सहु रिधि छोडि ॥५॥
इहां गणधर गया मुगति इग्यार, गौतम प्रमुख बडा अणगार।
मुगति गया मेतारिज जती, सहिनाणे एहवे सोभती ॥६॥
राज करइ तिहां श्रेणिक राय, क्षायिकसमकित रउ कहिवाय।
मंत्री जेहनइ अभयकुमार, च्यारि बुद्धि धरइ सुविचार ॥७॥
न्याय तपास करइ नितमेव, सारइ श्री महावीर नी सेव।
दीवाण केहनइ न करइ दुखी, राजा राज प्रजा सहु सुखी ॥८॥
इण अवसरि श्री अरिहंतदेव, सुर नर किन्नर सारइ सेव।
गुणसिलइ चैत्य गुणे करि भर्या, श्री व्रधमान सामी समोसर्या ।९।
गणधर इग्यारह अणगार, चउद सहस साथि सुविचार।
साधवी सहस छत्तीस सुजाण, प्रातीहारज अष्ट प्रमाण ॥१०॥
माड्यउ समवसरण मंडाण, भगवंत बइठा जाणे भाण।
इन्द्र तिहां चउसठि आवीया, प्रभु देखी आणंद पामीया ॥११॥
वलकलचीरी नी चउपई, पहली ढाल ए पूरी थई।
समयसुंदर कहइ सुणिज्यो सहू, बोलिस बात हुँ आगइ बहू ॥१२॥

[सर्वगाथा १७]

---

1 मरतइ

दूहा

वनपालक वद्धामणी, दीधी आणी दोडि।
वन मइं पधार्‍या वीर जिण, बोलइ वेकर जोडि ॥ १ ॥
हीयडइ श्रेणिक हरखीयउ, मेघ आगम जिम मोर।
वसंत आगम जिम वनसपती, चाहइ चंद चकोर ॥ २ ॥
मन वंछित वद्धामणी, दीधउ तेहनइ मान[1]।
स्नान मज्जन श्रेणिक करी, पहिरइ वस्त्र प्रधान ॥ ३ ॥
हरख घणइ हाथी चड्यउ, सखर धर्‍यउ छत्र सीस।
चिहुं पासे चामर ढुलइ, आपइ भट्ट आसीस ॥ ४ ॥
हय गय रथ पायक हुआ, सहु राजा नइ साथि।
विधि सुं चाल्यउ वादिवा, अपणी ले सहु आथि ॥ ५ ॥
[सर्वगाथा २७]

ढाल (२) हुवारीलाल, नी

मारग मइ मुनिवर मिल्या हुँ वारी लाल,
रह्यउ काउसगि रिपिराय रे। हुं०
एक पगइ ऊभउ रह्यउ हु०, पग ऊपरि धरी पाय रे। हु ॥१॥
हुं बलिहारी जाउं साधनी हु०, ए मोटउ अणगार रे। हुं०
आप तरइ अउर तारवइ हुँ, नाम थकी निस्तार रे। हु०॥२॥
सूरिज साहमी नजरि धरी हु०, वे ऊँची धरी बाह रे। हुं०
सीत तावड़ परीसा सहइ हुं०, मोह नहीं मन माह रे। हुँ० ॥३॥

[1] दान

ध्यान हीयइ सूधा धरइ हु०, निरमल निरहंकार रे। हुँ०
दुख आपइ निज देहनइ हुँ०, ए सहु जाणइ असार रे। हुं० ॥४॥

समुख दुमुख श्रेणिक तणा हुं०, दूत आया तिहा दोय रे। हुँ
समुख प्रशंसा इम करइ हुँ०, कलि तुझ समउ नहिं कोय रे।हुं० ।५।

राज छोडी वन मइ रह्यउ हुं०, द्यइ देही नइ दुक्ख रे। हुं०
जनम जीवित सफलउ करइ हुँ०, त्रोडइ करम नु तिक्ख रे। हुं।६॥

धन माता जिण उर धर्यउ हुँ०, धन्न पिता धन वंश रे। हुँ०।
एहवउ रतन जिहाँ ऊपनउ हुं०, सुरनर करइ परसंस रे। हुँ० ॥७॥

दरसण तोरउ देखता हुं०, प्रणमता तोरा पाय रे। हुँ०
आज निहाल अम्हे हुआ हुं०, पाप गया ते पुलाई रे। हुं ॥८॥

तूं जंगम तीरथ मिल्यउ हुँ०, सुरतरु वृक्ष समाण रे। हुं०
मन वाछित फल्या माहरा हुँ०, पेख्यउ पुण्य प्रमाण रे। हुं ॥९॥

बीजी ढाल इम बोलता हु०, सुकृत संच्यउ हुयइ जेह रे। हुँ०
बोधि हुञ्यो बीजे भवे हुं०, समयसुदर कहइ एह रे। हुँ० ॥१०॥
[सर्वगाथा ३२]

दूहा ११

दुमुख दूत मुनि देखिनइ, असमंजस कहइ एम।
पाखंडी फिट पापीया, कहि व्रत लीधउ केम ॥१॥

गृहि व्रत गाढउ दोहिलउ, निरवाह्यउ नवि जाय।
कायर फिट तइं सु कीयउ, सहू पूठिइ सीदाय ॥२॥

बालक थाप्यउ बापडउ, नान्हउ घणूं निपट्ट ।
वइरी वहिला वीटिस्यइ, नगरी घणूं निकट्ट ॥३॥

वइयर थारी बापड़ी, पडिस्यइ बंदि प्रगट्ट ।
नदंन मारी नाखिस्यइ, दल मुंहुडे दहवट्ट ॥४॥

पुत्र मुआ पछी पापीया, तूं जाइसि निस्तान ।
पितर पिंड लहिस्यइ नहीं, रोस्यइ वडठा रान ॥५॥

पुत्र विण गति किम पामियइ, कीधुं तइं स्युं काम ।
मुख जोइयइ नहिं मूल तुझ, नवि लीजइ तुझ नाम ॥६॥

दुष्ट वचन दुरमुख कही, आगइ चाल्यउ एह ।
रौद्र ध्यान ते रिषि चड्यउ, साल्यउ पुत्र सनेह ॥७॥

रौद्र ध्यान माहे रह्यउ, चूकउ चितवइ एम ।
मन सुं संग्राम माडीयउ, जुद्ध करीजइ जेम ॥८॥

हथियार लीधा हाथमइ, घा मारइ अति घोर ।
वयरी सुं विढता थका, सबलो ऊठ्यो सोर ॥९॥

खडग सु वइरी खडिया, आण्यउ एहवो ध्यान ।
एहवइ श्रेणिक आवियउ, साधनइ चइ सनमान ॥१०॥

तुरत हाथी थी ऊतरी, प्रणम्या मुनि ना पाय ।
वीर जाइ नइ वांदिया, चरणे[1] चित्त लगाय ॥११॥

[सर्व गाथा ४३]

१ आण्यउ चित्त उच्छाह,

ढाल (३) राग—गउडी

जाति जकडी नी, 'श्री सहगुरु सुपसाउलइ' एह नउकार नी

श्रेणिक देसना साभली, प्रसन करइ प्रभु पासो जी,
मारग मइं मुनि वादियउ, उग्र तप करइ उपवासो जी।
उग्र तप करइ उपवास अहनिस, राजरिषि गरुअड़ निलउ,
ते मरइ हिवड़ा तउ मुनीसर,[१] केथि जायइ कहउ भलउ।
श्री वीर बोल्या सुणि हो श्रेणिक, तइ वाद्या तेहवइ रली,
जइ मरइ तउ सातमी जायइ, श्रेणिक देसणा साभली ॥१॥

श्रेणिक मनि सासउ पड्यउ, कहइ सामी ते केमो जी,
ए उग्र तपसी एहवउ, उपजइ सातमी केमो जी।
ऊपजइ सातमी केम प्रभुनइ, वलि, क्षणातरि पूछियउ,
मुनि मरइ हिवणा तो सर्वारथ-सिद्धि जातउ जाणिउ।
भगवंत एह सदेह भाज्यउ, चारतियउ कोपइ चड्यउ,
जव दुमुख कुवचन कह्या जातइ, श्रेणिक मनि सासइ पड्यउ॥२॥

मन सु संग्राम माडियउ, तीर नाख्या अति ताणो जी,
खडक भाजी खंडो खंड कीयउ, रण भाज्या राय राणो जी।
रण भाजिया राय राण वयरी, टोप वाहण कर वाहियउ,
सिर लोच देखी राय चिंतवइ, व्रत लेइ मइ विराहियउ।
हा हा हिवइ हुं केम छूटिसि, मइं अन्याय मोटउ कियउ,
अति घणउ पच्छाताप मड्यउ, मन सु सग्राम मंडियउ ॥३॥

---

२ किहा

वइरागइ मन वालियउ, कुण पिता कुण पुत्रो जी,
कुटुंब सहू को कारिमउ, सहु स्वारथ नउ सूत्रो जी।
सहु स्वारथ नउ सूत्र दीज्यइ, मइ हिंसा कीधी महा,
भारी क्रमइ मइ पिंड भास्यउ, हुँ नरगइ जाइस ह हा !!
आवस्यइ आडउ नहीं कोई, हीया माहि निहालियउ,
मुनि एम पच्छाताप माड्यउ, वइरागइ मन वालियउ ॥४॥
ध्यान भलउ हीयड़इ धरयउ, लोच थी प्रतिबोध लाधउजी,
पाप आलोया आपणा, सूध थयउ वलि साधो जी।
सूधउ थयउ वलि साध ततखिण, करम बहुल खपाविया,
जिम पड्यउ तिम वलि चड्यउ ऊचउ, ऊत्तम परणाम आवीया।
भावना बार अनित्य भावी, अति विसुद्ध आतम कर्यउ,
मूलगी परि मुनि रह्यउ काउसगि, ध्यान भलउ हीयड़इ धर्यउ।५
पूछिउ श्रेणिक प्रभु प्रति, रिपि बालक नइ राजो जी,
दे नइ का दीख्या ग्रही, कुण पड्यउ ए काजो जी।
कुण पड्यउ ए काज प्रभु कहइ, सुणि पोतननगरी तणउ,
सोमचद राजा प्रिया धारिणी, तेज प्रताप तपइ घणउ।
प्रेमइ करइ प्रिउ तणउ माथउ, जोवती लीला गतइ,
एक पली दीठउ कान ऊपरि, पूछिउ श्रेणिक प्रभु प्रतइ ॥६॥
देव देखउ दूत आवियउ, कहइ राजा ने केथो जी,
नयणे दूत दीसइ नहीं, ए नावइ किम एथो जी।
ए नावइ किम एथि, राणी, कहइ राजन साभलउ,
पली रूप पुरुष ए दूत जमनउ, झबकि मन्न प्रियु झलफलउ।

पोली पुरुष माहि पडह फेरउ, सुदरि इम सतोषीयउ,
कहिस्यइ नही को पली आव्यउ, देव देखउ दूत आवीयउ ॥७॥
नृप कहइ तू समझी नहीं, लागी नहि पलि लाजो जी,
पणि पूरवजे माहरइ, परिहर्यउ पलि विण राजो जी।
परिहर्यउ पलि विण राज आपणउ, वइरागइ व्रत आदर्यउ,
हू मूढ माया माहि खूतो, राग द्वेष करी भर्यउ।
हु लेउ दीक्षा हिवइ पणि मुझ, पुत्र अति नान्हो सही,
पुत्र नइं वइठी पालिजे तु, नृप कहइ तू समझी नहीं ॥८॥
धीरिज धरि कहै धारिणी, हु होइसि तुम्ह साथ्यो जी,
कामिनी कथ साथि कही, ए भोगवो सुत आथ्यो जी।
ए भोगवो सुत आथि अपणी, लाड कोड सु लघु वया,
परसन्नचद नइ राजि थापी, राय राणी तापस थया।
आविया तापस आश्रमइ ते, वारू कीध विचारिणी,
करि कुटी ओटज रह्या कानन, धीरिज धरि कहइ धारिणी ।९।
आणइ राणी इधणी, वनफल फूल विशालो जी,
कोमल विमल तरणे करी, सेज साजइ सुकमालो जी।
सेज सजइ सुकमाल राणी, इगुदी तेलइ करी,
उटला ऊपरि करइ दीवउ, भगति प्रिउनी मनि धरी।
ओटला लिंपइ आणि गोबर, गाइ छइ तिहा वन तणी,
वन व्रीहि आणइ आप तापस, आणइ राणी इधणी ॥१०॥
तपस्या करइ तापस तणी, निरमम नइ निरमायो जी,
सूधु सील पालइ सदा, ध्यान निरजन ध्यायो जी।

ध्यान निरजन ध्याय धरमी, उत्कृष्टी रहणी रहइ,
आकरी आतापना करी नइ, दिन प्रतइ देही दहइ।
ए ढाल त्रीजी समयसुन्दर, जाति जकड़ी नी भणी,
सोमचद रिषि धारिणी सेती, तपस्या करइ तापस तणी ॥११॥

[सर्व गा० ५४]

दूहा ५

इण परि रहता आश्रमइ, सोमचंद सुविचार,
निरख्यउ ग्रभ नारीतणउ, पूछ्यउ कुंण प्रकार ॥ १ ॥
कुल कलंक दीसइ किसउ, कहइ राणी सुणि कंत।
गृहस्थ थका नउ ए गरभ, मत बीहे मनि मन्त्र ॥ २ ॥
दीक्षा लेता दाखवु, तो व्रत परइ अंतराय।
सूधुं माहरु सील छइ, सोनइ सादि न थाय ॥ ३ ॥
पूरे मासे तापमी, सुत जायउ सुकमाल।
मंदेवाड पड़ी मुई, ते माता ततकाल ॥ ४ ॥
वलकल चीर सु वीटियो, जात मात्र अंगजात।
वलकलचीरी एहवूं, नाम दियउ निज तात ॥ ५ ॥

[सर्व गा० ५६]

ढाल (४) राग—काफी धन्यासिरी मिश्र,
जाइ रे जीउरा निकसकइ एहनी ढाल, दुनीचद ना गीत नी ढाल

वलकलचीरी वालहउ, मोटउ करइ धावि मायो रे।
ते पिण धावि तुरत मुई, सामिण विण न सुहायो रे ॥ १ ॥

महिषी दूध पीयउ मुणी, धरती अखडी नु धानो रे।
वनफल खवरावइ वली, वली सीखावइ विधानो रे॥ २॥
राति दिवस रमतो रहइ, मृगला नान्हा माहो रे।
वन व्रीहि खाये वली, आणे अगि उन्छाहो रे॥ ३॥
पग चापइ ते पिता तणा, सेवा करइ सुविचारो रे।
नाम न जाणइ नारि नु, व्रतधारी ब्रह्मचारो रे॥ ४॥
अस्त्री नइ ओलखइ नहीं, बहु तापस सु वंधाणो रे।
भद्रक जीव भोलउ घणु, जोगनउ थयउ ते जुवाणो रे॥ ५॥
प्रसनचंद पूठिइ थकी, साभली सगली वातो रे।
धारिणी माता उरि धर्यउ, वनि थउ पुत्र विख्यातो रे॥ ६॥
मुझ बाधव ते मुनिवरु, मुझनइ जउ मिलइ केमो रे।
उतकंठा धरी एहवी, प्रगट्यउ बाधव प्रेमो रे॥ ७॥
चतुर चीतारा तेडीया, हुकम कीयउ राय एहो रे।
वनि जाउ वहिला तुम्हें, तेथि पिता मुझ तेहो रे॥ ८॥
वलकलचीरी वनि रहइ, रूडु तेहनु रूपो रे।
चतुर आणउ तुम्हें चीतरी, भाखइ इणि परि भूपो रे॥ ९॥
चतुर चीतारा चालिया, प्रभु आदेश प्रमाणो रे।
पहुता वन माहे पाधरा, जिहा सोमचंद सुजाणो रे॥१०॥
ते वलकलचीरी तणउ, चीतर्यउ रूप चित्रामो रे।
रूप दिखाड्यउ राय नइ, अति अदभुत अभिरामो रे॥११॥
आणंद राय नइ ऊपनउ, अहो अति सुंदर रूपो रे।
बहु अणुहारउ बापनउ, समर तणो ए सरूपो रे॥१२॥

राजा रूप आलिंगीयउ, मुझ बाधव मिल्यउ एहो रे।
माथो चुम्यउ महिपती, रलियायत थयो रायो रे ॥१३॥
चउथी ढाल ए चित वस्यउ, वलकलचीरी वृतंतो रे।
समयसुंदर कहइ नृप थयउ, उच्छक मिलण अत्यंतो रे ॥१४॥
[सर्व गाथा ७३]

दूहा

चित माहे राय चिंतवइ, मुझ पिता वन मांहि।
व्रत पालउ अति वृद्ध ते, आणी अधिक उछाह ॥ १ ॥
पणि दुकर तप किम तपइ, मुझ बांधव सुकमाल।
वनचर नी परि वनि भमइ, वय जोवन विकराल ॥ २ ॥
राज रिद्धि हुं भोगवु, लीलासुं लपटाइ।
अविवेकी हुँ एकलउ, कुण आचार कहाय ॥ ३ ॥
बाधव वाह कहीजियइ, साचउ बाधव साथ।
मा जाया भाई मिलइ, एहिज मोटी आथि ॥ ४ ॥
ए बाधव इहा हुइ, माहरा राज मझारि।
बे बाधव सुख भोगवा, तउ सफलउ अवतार ॥ ५ ॥
बोलावी वेश्या वहू, हुकम कीयउ राय एह।
वेस करउ मुनिवर तणो, तापस सरिखउ तेह ॥ ६ ॥
तिण आश्रमि जाओ तुम्हे, वलकलचीरी वीर।
आणउ एथि, उतावलो, हुकम तणो ए हीर ॥ ७ ॥
कला अपणी सहु केलवउ, वचन सराग विकार।
दे आलिंगन दाखवउ, कन्द्रप कोडि प्रकार ॥ ८ ॥
[सर्व गाथा ८१]

ढाल (५) राग—ढोलणी दहिया नइ महिया रे
बाभणि वीरला रे रायजादी रे, एहनी ।

वेश्या नी टोली रे मिली विलसती रूप रूडी रे
हा रे वारू चतुर सउसठि कला जाण ।
कंचन वरण तनु कामिनी रू० हा रे० बोलति अमृत वाणि ॥१॥
रंगीली रे वंगीली रे हा रे वा० जोवन लहरे जाइ । आकणी ।
गजगति चालइ गोरी मलपती, रू० हारे० विभ्रम लील विलास ।
लोचन अणियाला लोभी लागणा, रू० हारे० पुरुष बधण मृग पास ॥२॥
ललना चाली रे बील फल ले, रू० हारे वेस तापस नउ वणाय ।
पुहती नइ तापस आश्रमि पाधरी, रू० हारे० दरसन अपणो दिखाय ॥३॥
जोगना पासइ रे जई ऊभी रही रे, रू० हारे० अतिथि आया मुझ केइ ।
अभ्यादर करी ऊठीयउ रू० हारे० दूर थी आदर देइ ॥४॥
पूछ्यउ ने पधार्‌या तुम्हे किहा थकी, रू० हारे० कुण कहउ तुम्हे बात ।
अम्हे तउ पोतन आश्रमि रहुं, रू० हारे० तापस तेहनी कहात ॥५॥
अम्हे नइ प्राहुणा थारइ आवीया, रू० हारे० करीसि भगति कुण आज ।
वलकलचीरी वनफल आणीया, रू० हारे० बील दिया । बहुसाज ॥६॥

कहइ तापस नीरस ए किसां, रू० हारे० फल खायइ तु फोकट्ट ।
इम कही नइ फल आपणा, रू० हारे० प्रवर ते वील प्रगट्ट ॥७॥
सखर सवाद फल नउ चाखीयउ, हारे० हाथ लगाड्यउ हीयावारि ।
कहइ रिपि तुम्हारइ हीयइ किसु, रू० हारे० ए फल तणइ अणुहारि ॥८॥
अम्हारइ आश्रमि फल एहवा, रू० हारे० सखर घणउ सुसवाद ।
अगफरस तापस अति भलउ, रू० हारे० पामीयइ पुण्यप्रसाद ॥९॥
अगनइ सूयालू आश्रम अम्हतणउ रू० हारे० जउ हुंसि फलनी होई ।
तउ तुम्हे आवउ आश्रमि अम्ह तणइ रू० हारे० सखर आश्रमि छइ सोइ ॥१०॥
मीठा नइ लागा फल मन गम्या रू० हारे० अंग फरस श्रीकार,
जीभनउ विपय रे जीपता दोहिलउ रू० हारे० कुण जीपइ काम विकार ॥११॥
मुझ ले जावउ पोतन आश्रमइ रू० हारे० कहउ संकेत नउ थान ।
सच करी नइ नारि ले नीसरी रू० हारे०[1] जीवन फल परिधान ॥१२॥
रूख ऊपरि राख्या टुकीया रू० हारे० करइ मत कोइ केडि ।
नतायउ सोमचंद पूठि आवतउ रू० हारे० वनिता नासी गई वेडि ॥१३॥
वलकलचीरी वनि एकलउ रू० हारे० तापस न देखइ तेह ।
भयभ्रांत थकउ वनमइ भमइ रू० हारे० पूठउ गयउ बाप प्रेम ॥१४॥

---

१ ताजा वलकल

इणि अवसरि एक रथी मिल्यउ रू० हारे० कीयउ अभ्याद प्रकार।
कह्यउ तुम्हे केथि पधारस्यउ रू० हारे० कहइ ते पोतन
अधिकार ॥१५॥

तुम्हे कहउतउ हूं साथि तुम्हारडइ रू० हारे० आवु पोतन आश्रमि।
का तु नावइ इम कहइ रथी रू० हारे० मोह्यउ वचन नरंमि॥१६॥

तात तात कहइ तेहनी नारिनइ रू०हारे० वहिली वासइ थकउ जाय।
कामिनी कहइ रे निज कतनइ रू० हारे० ए मुझ अचरिज
थाय ॥१७॥

रिषिपुत्र रलियामणउ रू० हारे० कहउए भोलउ केम।
कत कहइ सुणि कामिनी रू० हारे० एह मुगध रिपि एम ॥१८॥

इण अस्त्री का दीठी नहीं रू० हारे० सहु तापस संसार।
भद्रक जीव भोलउ घणु रू० हारे० निरति नहीं नर नारि ॥१९॥

वलकलचीरी पूछ्यउ वली रू० हारे० वहलीया वहता देखि।
मृगला मोटा नइ का मारउ तुम्हे रू० हारे० वाहउ केण
विसेषि ॥२०॥

हसि नइ कहइ रथी एहवु रू० हारे० सुणि भद्रक सुविचार।
काम कीधा इण एहवा रू० हारे० अम्ह दोस ए न लिगार ॥२१॥
रिषिपुत्र नइ रथी लाडुआ रू० हारे० खावा नइ दीया खास।
मोदक लागा मीठा घणु रू० हारे० उपनउ अधिक उलास ॥२२॥
रिषिपुत्र कहइ रथी एहवा रू० हारे० मोदक एहवइ मान्नि।
तापस पणि दीधा हुँता रू० हारे० पोतन ना परधान ॥२३॥

अधिक उछक थयउ मोदके रू० हारे० पोतन पहुचु किवार ।
वन-फल थी विरतउ थयउ रू० हारे० अरस तिहा आहार ॥२४॥
रथी नइ आगलि जाता राह मइं रू० हारे युद्ध लागउ अति जोर ।
प्रहार दीधउ रथी पिशुन नइ रू० हारे कोप करी नइ कठोर ॥२५॥
रथी नइ प्रहारइ चोर रजियउ रू० हारे० मूक्यउ निज अभिमान ।
माल लेज्यो इहा छइ माहरउ रू० हारे० तुम्हनइ थयउ तुष्टमान २६
माल सकट माहि थी लीयउ रू०, हारे० त्रिहु जणे मिलीनइ तेह ।
चोर मुयउ रथी चालियउ रू०, हारे० साथ सहु सुसनेह ॥२७॥
पहुतउ रथी पोतनपुरइ रू०, हारे० रथी कह्यउ सुणि रिषिराय ।
मित्र अम्हारउ तु मारग तणउ रू, हारे वाटउ अपणउ विहचाय २८
आश्रम पोतनइ ए तुं जा इहाँ रू०, हारे० तु जाणइ जो तेथि ।
दीधा[1] रे विना को देस्यइ नहीं रू०, हारे अन्न प्राणी ठामएथि २८
इम कहि नइ रथी आपणइ रू०, हारे० गेह गयउ सुप्रसन्न ।
पाचमी ढाल पूरी थई रू०, हारे० समयसुदर सुवचन्न ॥३०॥
[सर्वगाथा १११]

दूहा १२

ते वलकलचीरी तिहा, मुनि पोतनपुर माहि ।
नरनारी निरखइ घणा, रमता वालक राह ॥ १ ॥
मोटा मन्दिर मालिया, अति ऊचा आवास ।
हाथी घोडा हींसता, वलि दीधा सुविलास ॥ २ ॥

१—दाम

सुखिया तापस ए सहु, मृग मोटा उदमाद।
तात-तात कहि तेहिनइ, अभ्याद हो अभ्याद ॥ ३ ॥
नगर लोक कहि कुण नर, एहवउ ए अजाण।
लागा हसिवा लोक ते, भमता आथम्यउ भाण ॥ ४ ॥
आपइ को नहिं आसरउ, रहिवा रिषि नइ ठाम।
वहतो वेश्या घरि गयउ, ए उटज अभिराम ॥ ५ ॥
द्रव्य घणउ देई करी, रह्यउ मुनीसर रंग।
वेश्या आवी विलसती, उत्तम दीठा अंग ॥ ६ ॥
तुरत नापित तेडावि नइ, नख लिवराख्या नारि।
सूपडा सरिखा जे हुता, अगनउ मल उतारि ॥ ७ ॥
जटाजूट उखेलि नइ, उहलउ काकसि आणि।
सुगंध तेल सचारियउ, परम सुकोमल पाणि ॥ ८ ॥
अंग सुआला अंग सुं, वेश्या करि विगन्यान।
फुट परगट फरस्या सहु, धरि रह्यउ रिषि ध्रमध्यान ॥ ९ ॥
हा हा हुं हु रिषि करइ, कहइ स्युं करउ मुझ एम।
अतिथि आया अम्ह एहवी, प्रतिपति कीजइ प्रेम ॥ १० ॥
इण उटले रहिवा करइ, तउ तू मकरे ताणि।
करिवा देज्ये जिम करा, वेश्या बोली वाणि ॥ ११ ॥
ए रहिवा द्यइ ओटलइ, न कह्यउ तिण नाकार।
रिषि निश्चल ब्रइसी रह्यउ, वसि कीधउ तिणवार ॥ १२ ॥
[सर्वगाथा १२३]

ढाल (६) जाति-परियारी कनकमाला इम चिंतवइ, ए ढाल

सखर सुगंध पाणी करी, सहु वेश्या करायउ स्नान रे।
वारु वस्त्र पहिरावीया, पीला खवराव्या पान रे॥ १॥

वलकलचीरी वर, परणइ वेश्या नी पुत्रि रे।
पणि ते प्रीछइ नहीं, कारिमी मिली केहइ सूत्रि रे॥२॥ व०

सीस वणायउ सेहरउ, कानि दोय कुंडल लोल रे।
हीयइ हार पहिरायउ, दीपती दीसइ आंगुली गोल रे॥३॥ व०

वध्या विहु बाहे बहरखा, मोती तणी कंठे माल रे।
हाथें हथसाकली, भलउ तिलक कीयउ वलि भाल रे॥४॥ व०

चोवा चपेल लगावीया, फूटडा पहिराया फूल रे।
कारिम आरिम कीया, काइक कीधउ अनुकूल रे॥५॥ व०

वाजित्र सखर वजाडिया, गोरी वलि गाया गीत रे।
कहउ इण परि केहनउ, चूकइ नहीं चंचल चित्त रे॥६॥ व०

गीत गायइ ते इम गिणइ, रिपिजी रूडउ भणइ वेद रे।
आश्रम पोतन इस्यउ, भोलउ जाणइ नहिं भेद रे॥७॥ व०

एक कन्या आणी तिहाँ, रूपवंत घणुं रंग रेलि रे।
रिपि नइ परणावी, विलसंती मोहणवेलि रे॥८॥ व०

सुणहर माहि सूयारिया, सुख सेज तलाई साज रे।
रिपि राति विमासइ, ए अतिथि भगति थइ आज रे॥९॥ व०

१ कामिनी २ नाथ

छट्ठी ढाल छोटी भणी, वलकलचीरी वेसि रे।
समयसुंदर सच कहइ, कुण करम सु जोर करेसि रे ॥१०॥ व०
[सर्वगाथा १३३]

दूहा ४

ते वलकलचीरी तिहा, रहइ वेश्या घरि रंग।
तापस रूप वेश्या तिसइ, सहु आवी नृप संगि ॥१॥
करजोड़ी सघली कहइ, वलकलचीरी वात।
संकेत सीम आव्यउ हुतउ, तितरइ आयउ तात ॥२॥
ताम अम्हे नासी गई, बीहती अबला बाल।
मन जाण्यु मुनि बालि नइ, करइ भसम ततकाल ॥३॥
लोभायउ बड लाडुए, बील फले बहु वार।
पाछउ रिपि जास्यइ नहीं, नरवर ते निरधार ॥४॥
[सवगाथा १३७]

ढाल (७) राग—कनडउ, ठमकि ठमकि पाय पावरी वजाइ, गजगति बाह लुडावइ रग भीनी ग्वालणि आवइ, एहनी।

वात सुणी राजा विलखाणउ, भूप करइ दुख भारी।
मुझ बाधव कोई मिलायइ ॥
बाधव माहरउ बिहुथी चूकउ, वात कीधी अविचारी ॥१॥ मु०
मनवछित मागइ ते आपु, सघलइ वात सुणावइ मु० ॥आकणी
तात थकी तेहनइ मइ टाल्यउ, इहा पणि तेह न आयउ। मु०
हा ! बाधव किम करतो होस्यइ मुझ न मिल्यउ मा जायउ ॥२॥

भाई मिलइ इवड़उ भाग किहा थी, वलकलचीरी वीर । मु०
आखे दड दड आसू नाखइ, दुख करइ दिलगीर मु० ॥३॥
नाटक गीत विनोद निषेध्या, जीवण थयउ विष जेम ।मु०
निस सूता पण नीद्र न आवइ, कहउ हिव कीजइ केम मु० ॥४॥
राजसभा दिलगीर थई सहु, दिलगीर थयउ दीवाण । मु०
जिम राजा तिम प्रजा थई जिहा, सहु नइ दुक्ख समाण मु० ।५॥
इण अवसरि नर राय अनोपम, सबद सुण्या निज कानि ।मु०
सोहागिण सोहलानी ढालइ, गायइ गीत नइ गानि । मु० ॥६॥
धप मप धप मप धुधुमिधोंधों, मादलाना धोंकार । मु०
नरपति बोल्यउ नरति करउ रे, मूरिख कउण गमार मु० ॥७॥
हुँ दुखियउ चिंतातुर एहवु, ए करइ महुच्छव एम । मु०
जोवा काजि मुंक्या आपण जण, कहउ ए वाजित्र केम मु० ॥८॥
तिवार पहिली वेश्या तिहा आवी, बोलइ वेकर जोड़ि । मु०
सुणि राजन विरतात कहुँ सहु, खरउ कहता नवि वौडि मु० ॥६॥
इक दिन एक निमित्ती आयउ, अम्ह मंदिर अतिजाण । मु०
तु कन्या तेहनै परणावे, दीसइ रिषि दूकाण मु० ॥१०॥
अणतेड्यउ तेहवइ एक आयउ, मुझ मंदिर मुनि आज । मु०
मइं माहरी कन्या परणावी, स्वामित करि सहु साज मु० ॥११॥
वाजित्र तिण कारणि मुझ वाजइ, प्रगट्यउ आणद पूर । मु०
गीत गाय वीवाह ना गोरी, सहु घर माहि सनूर, मु० ॥१२॥
नाथ तुम्हारी वात न जाणी, देश धणी दिलगीर । मु०
ए अपराध खमउ अलवेसर, गिरूआ सजि गंभीर मु० ॥१३॥

साच कही सतोष्यउ राजा, वेश्या वचन विलास । मु०
महीपति अपणा माणस मुक्या, आवउ देखि आवास मु० ॥१४॥
जइ देखी आवीनइ जंपइ, ए चित्राम आकार । मु०
तुरत राजा तेहनइ तेडाव्यउ, आप हजूर अपार मु० ॥१५॥
आखे देखी तुरत उलखीयउ, माहरउ ए मा जायउ । मु०
सहोदर नइ साई दे मिलीयउ, परम आणंद सुख पायो ॥मु०१६
सातमी ढाल थई सुखदाई, भूपति नइ मिल्यउ भाई । मु०
समयसुन्दर कहइ सहु मिलिइ सहुनइ, प्रगट हुवइ जउ पुण्याई १७

[सर्व गाथा १५४]

दूहा १०

सखर हाथी सिणगार करि, बाधव नइ बइसारि ।
आण्यउ मंदिर आपणइ, नवल संघाति नारि ॥ १ ॥
उच्छव महुच्छव अतिघणा, कीधा राजा कोडि ।
बाधव बिहुंनी अति भली, जण जपइ ए जोडि ॥ २ ॥
सहु विवहार सीखाविया, जीमण तणी जुगत्ति ।
बोलण (चालण) वहु हला, अद्भुत हीया उगत्ति ॥ ३ ॥
वलि राजा परणावीयउ, कन्या बहु सुख काजि ।
भोग भली परि भोगवइ, सहु सामग्री साजि ॥ ४ ॥
तिरजच ते पणि सीखव्या, सीखइ सहु विवहार ।
कहिवू माणस नु किसु, वलि जिहा विवेक विचार ॥५॥
भोग करम विण भोगव्या, कहउ कुण छूटइ कोइ ।
नंदिषेण निरख्यउ तुम्हे, आद्रकुमार ए जोइ ॥ ६ ॥

करम सु जोरो को नहीं, जीव करम वसि जाणि।
जीव वात जाणइ घणी, पणि करम करै ते प्रमाण ॥ ७ ॥
चोर तणउ कंचण प्रमुख, नयणे रथी निहाल।
पोतनपुर माहे प्रगट, वेचइ हाट विचाल ॥ ८ ॥
धणीए ते धन ओलख्यउ, कह्यउ जइ नइ कोटवाल।
बाध्यउ पाछे बांधिया, ते रथी नइ ततकाल ॥ ६ ॥
वलकलचीरी आवियउ, उलख्यउ ए मुझ मित्त।
मुहत देई मुंकावियउ, चिंतवी उपगार चित्त ॥ १० ॥

[सर्व गा० १६४]

ढाल (८)—नगर सुदरण अति भलउ-ए चाल,

सोमचद एहवइ समइ, आश्रम रह्यउ एम।
विरह विलाप करइ घणा, पुत्र ऊपरि प्रेम ॥ १ ॥
हा हा हु हिव किम करुं, सुत नी नही सार।
गरढा नइ मुंकी गयउ, कहउ कुंण आधार ॥२॥ हा० ।आकणी।
किन्नरी के विद्याधरी, नागरी के नारि।
अथवा अपहर्‌यउ अपछरा, देखी दीदार ॥ ३ ॥ हा०
भमतउ के भूलउ पड्यउ, महा अटवी माहि।
निरति तउ काइ पडइ नही, कहउ जोऊं क्याहि ॥ ४ ॥ हा०
वनफल आणतउ वालहा, वन नी वलि त्रीहि।
पग तू माहरा चापतउ, रूड़ा राति नइ दीहि ॥ ५ ॥ हा०
साथरो सखर वछावतउ, पाणि पातउ आणि।
वाप नइ वइठउ राखतउ, वारु बोलतउ वाणि ॥ ६ ॥ हा०

राति दिवस रोता थका, भूली गई भूख।
आखे रिपि आधउ थयो, दोहिलउ पुत्र दूख ॥ ७ ॥ हा०
रिषिनइ इम रहता थका, वेश्या विरतात।
साभल्यउ सघले तापसे, ते जिम थयउ विरतंत ॥ ८ ॥ हा०
सोमचद्र सुख पामियउ, पोतनपुर पुत्र।
भाई घरि सुख भोगवइ, सुत वात ससूत्र ॥ ९ ॥ हा०
सहु तापस सोमचद नइ, वन-फल द्यइ विसेपि।
प्रति दिन प्रति चरजा करइ, दुखिया नइ देखि ॥१०॥ हा०
आठमी ढाल एहवी, पड्यउ पुत्र नउ दुक्ख।
कहइ समयसुदर ध्रम करउ, सुतनउ हुयइ सुक्ख ॥११॥ हा०

दूहा

वरस बारइ इम वहि गया, आयउ भोग नउ अत।
वलकलचीरी वास घरि, निशि सूतउ निश्चित ॥ १ ॥
आधी रात गई इसइ, चतुर चीतारी वात।
अधम इहा हु आवीयउ, तिहा मइ मुक्यउ तात ॥ २ ॥
जात मात्र जननी मुइ, मुई वली धा माइ।
मुझ नइ बाप मोटउ कियउ, पिता घणउ दुख पाइ ॥ ३ ॥
कुण वनत्रीहि कुंण फल, कुण पाणी कुण पत्र।
हा हा कुण आणतो हुस्यइ, तात भणी कहउ तत्र ॥ ४ ॥
हु अधम आव्यउ इहा, तात रह्यउ मुझ तेथि।
कहउ केही परि कीजीयइ, अधरम मइ कीयउ एथि ॥ ५ ॥

पिता उछेरइ पुत्र नइ, जीवथी अधिकउ जाणि।
पुत्र पछइ वूढापणइ, वेठि करइ निरवाणि ॥ ६ ॥
पणि हु मोटउ पापीयउ, जनक नइ न हुअउ नेह।
परलोक पामिसि तु तिहा, अफल कीयउ भव एह ॥ ७ ॥
किम ही हिव सेवा करू, मुझ तउ जनम प्रमाण।
वलकलचीरी चिरमतउ, चितवइ चतुर सुजाण ॥ ८ ॥
[सर्वगाथा १८३]

ढाल (९) राग—बगालउ,

इम सुणी दूत वचन्न कोपियउ राजा मन्न (ए मृगावतीनो दसमी ढाल)

वलकलचीरी इम वेगि, आवियउ चित उदवेग।
वीनती सुणि मुझ वीर, हु हुवउ अति दिलगीर ॥ १ ॥
मुझ मन ऊमाह्यउ तेथि, श्री तात आश्रम जेथि।
भणइ प्रसनचंद हे भाइ, सगपण सरीखु थाइ ॥ २ ॥
उछक थणु हु आप, भेटु भली परि बाप।
बाधव मिली करी वेउ, परिवार पूरउ लेउ ॥ ३ ॥
आश्रमइ आव्या जाम, उतस्या अश्व थी ताम।
वलकलचीरी कहइ वात, सुणि प्रसनचद्र सुजात ॥ ४ ॥
आश्रम दीठुं अभिराम, ऊतस्या अश्व थी ताम।
सर देखि साथी मेलि, करतउ हु हंस जु केलि ॥ ५ ॥
ए देखि तरु अति चग, रमतउ ऊपरि चढि रग।
फूटड़ा फल नइ फूल, एहना आणि अमूलि ॥ ६ ॥

भाई ए भइ सि नु देखि, वलकलचीरी नइं हु वेपि ।
ढोहे नइ आणतउ दूध, पीता पिता अम्हे मूध ॥ ७ ॥
मिरगला ए रमणीक, नित् चरइ निपटि निजीक ।
रमतउ हु' इण सु रगि, बाल तणी परि बहु भंगि ॥ ८ ॥
भाई भणी बहु भाति, ओलखावतउ एकाति ।
पहुता वे बाप नइ पासि, भाई भलइ उलासि ॥ ६ ॥
प्रणमइ तुम्हारा पाय, अगज प्रसनचद आय ।
भणइ एम लहुडउ भाइ, सहु तात नइ समझाइ ॥१०॥
सोमचद साम्हउ जोइ, हीया माहि हरषित होइ ।
वासइ दीधउ वलि हाथ, सतोपीयउ बहु साथ ॥११॥
पभणइ प्रसनचद राय, वलकलचीरी कहवाय ।
ते नमइ तात ना पाय, साम्हउ जोयउ सुख थाय ॥१२॥
वलकलचीरी मिल्यउ वेगि, अलगउ टल्यउ उदेग ।
चुंबियउ माथउ चापि, थिर पूठि हाथ सु' थापि ॥१३॥
वेटा बिहु' नइ संगि, रिपि पामीयउ मन रंगि ।
आमू हरखना आखि, झरता गई सहु झाखि ॥१४॥
अध पडल आखि ना दूर, परा गया आणंद पूर ।
पेखिया पुत्र रतन्न, महा उलस्या तन मन्न ॥१५॥
सुख पूछीउ सोमचद, पुत्र कहइ परमाणंद ।
तात जी तुम्ह पसाय, आणद अगि न माय ॥१६॥
मइ भणी नवमी ढाल, जनक नउ गयउ जजाल ।
भली 'समयसुन्दर' भाख, 'सूत्र रिपिमडल' द्यइ साख ॥१७॥

[सर्व गाथा २००]

दूहा १८

वलकलचीरी वहि गयउ, उटलइ वइठउ आवि ।
तापस ना उपग्रहण तिहा, पेख्या तिण प्रस्तावि ॥१॥
पात्र केसरिया पुजि करी, आणी अधिक उच्छाहि ।
पातरा हु पडिलेहतो, पड्यउ इहापोह माहि ॥२॥
जातीसमरण जाणीयउ, पूरवभव परवध ।
सुर नर ना भव साभस्या, साधु हुतउ ते संबंध ॥३॥
भावना मन माहि भावतो, वेगि चड्यउ वयराग ।
ध्यान सकल सूधउ धर्‌यउ, तुरत कीयउ म्हु त्याग ॥४॥
लोकालोक प्रकाशतउ, निरमल केवल न्यान ।
लहु वलकलचीरी थयउ, निश्चल जाणि निधान ॥५॥
दीधउ सासणदेवता, वेगउ साधुनउ वेस ।
प्रत्येकबुद्ध थयउ प्रगट, दयइ ध्रम नउ उपदेस ॥६॥
पिता बन्धु प्रतिबोधि करि, पिता मु कि अम्ह पासि ।
विचर्‌यउ आप अनेथि वलि, करतउ करम नउ नासि ॥७॥
प्रसनचन्द पुहतउ घरे, परि मनि परम वयराग ।
किण वेलायइ हु करूं, राज रमणि रउ त्याग ॥८॥
अन्य दिवस वलि अवसरइ, पोतनपुर उद्यान ।
श्रेणिक ! अम्हे समोसर्‌या, वदइ एम व्रधमान ॥६॥
प्रसनचद पृथिवीपती, वलि वादवा निमित्त ।
आव्यउ वणु उतावलउ, चोखइ निरमल चित्त ॥१०॥

दीधी त्रिण्ह प्रदक्षणा, प्रणमि अम्हारा पाय।
श्रवणे देशना साभली, आणद अंगि न माय ॥११॥
कर जोड़ी राजा कहइ, ए समार असार।
तुम्ह पासे लेइसि तुरत, सामी संजम भार ॥१२॥
पुत्र नइ पाटइ थापियउ, बेटउ ते अति बाल।
अम्ह पासे व्रत आदरी, तप माड्यउ ततकाल ॥१३॥
श्रेणिक आगइ जिण समइ, वात कहइ श्रीवीर।
वागी दुंदुभि तेहवइ, गयणंगणि गभीर ॥१४॥
दीठा आवता देवता, पवन नइ आसन्न।
वादी नइ वलि वीरनइ, श्रेणिक करइ प्रसन्न ॥१५॥
देव तणी ए दुंदुभी, वागी किहा व्रधमान।
प्रसनचंद रिषि पामीयउ, कहइ प्रभु केवलज्ञान ॥१६॥
अचरिज श्रेणिक ऊपनउ, ऐ ऐ अध्यवसाय।
खिण नरक खिण मुगति द्यइ, करणी किसु पुसाय ॥१७॥
प्रसनचद मुगति गयउ, वलि श्रीवलकलचीरि।
वार वार करू वंदना, तुरत लहु भवतीरि ॥१८॥

[सर्व गाथा २१८]

ढाल (१०) राग—धन्यासी, तीर्थकर रे चउवीसइ मइं संस्तव्या रे

श्रीवलकल रे चीरी साधु वादियइ रे।
हारे गुण गावता अभिराम, अति आणदियइ रे ॥१॥ श्री०
तापस ना उपग्रहण तिहा, पडिलेहता, हारे निरमल केवल न्यान।
अति भलु ऊपन्न, शिवरमणी रे, सगम नु सुख संपनु रे ॥२॥ श्री०

हु मागु रे मुगतितणी पदवी हिवइ रे, हारे श्रीवलकलचीरी पासि।
भगति वचन भणु रे, मागइ सहु रे, मसकति नु फल आपणु रे।३।
दूसमकालइ संजम पालता दोहिलउ रे, हारे किम तरियइ संसार।
भेट भलउ लह्यउ रे, गुणगाता रे, साधतणा मन गहगह्यउ रे ॥४॥
जेसलमेर रे, जिनप्रासाद घणा इहां रे, हांरे सोम वसु सिणगार।
(सोल इक्यासी) वरस वखाणीइ रे, खरतर गच्छ रे विरुद खरउ जगि जाणियइ रे ॥५॥ श्री०
जिनचंदसूरि रे, जुगप्रधान जगि परगड़ा रे, हारे तासु प्रथम शिष्य तेह।
सकलचंद सुखकरु रे, समयसुदर रे तास, सीस, सोभाधरू रे।६।
रीहड कुल रे, जिहा जिनचंदसूरि ऊपना रे, हारे तिण कुलि जसु अवतार।
सुलताण मइ वसइ रे, साह क्रमचंद रे, जेसलमेरी शुभ जसइ रे।७।
पद सगवट रे वलकलचीरी चउपइ रे, हांरे क्रमचंद आग्रह कीध।
आणंद अति घणइ रे, सुख पामइ, समयसुन्दर कहइ जे सुणइ रे ॥८॥ श्री० [सर्व गाथा २२६]

॥ इति श्री वलकलचीरी री चउपई ॥

१—गुलाबकुमारी लाइब्रेरी स्थित स्वहस्तलिखित प्रतिसे

२ सवत् १७३७ वर्षे - सुदि १२ तिथौ। प० श्री गुणविमल जी गणि शिष्य पं० कनकनिधान गणि शिष्य प० श्री खीमसी पं० देवराज पटनार्थम् ॥ श्री नापासरे मध्ये लिखत ॥ श्रीरस्तु ॥ शुभ भवतु ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय प्रति नं० ४३३५]

श्री समयसुन्दरोपाध्याय कृत

चम्पक सेठ चौपई

दूहा

जालोर माहे जाणतौ, पारसनाथ प्रतक्ष।
प्रहऊठी नै प्रणमता, सानिध करै समक्ष॥ १॥
गढ ऊपरि गरुअड निलौ, सोवनगिरि सिणगार।
महावीर प्रणमुं मुदा, दउलति नौ दातार॥ २॥
मात पिता पिण मन धरी, दीधौ जिण अवतार।
नाम लेई नै गुरु नमु, दीक्षा न्यान दातार॥ ३॥
कर जोड़ी प्रणमी करी, कहिस घणु श्रीकार।
चंपक सेठिनी चौपई, अनुकंपा अधिकार॥ ४॥
पाच दान परगट कह्या, सहु जाणै संसार।
अभयदान दीजै इहा, सुपात्रदान इहाँ सार॥ ५॥
चारित्र चोखौ पालियै, दीजै साधु नै दान।
ए बहु दान थकी अधिक, मुगति वधू द्यै मान॥ ६॥
अनुकंपा किरिपा इहा, दोहिलां दुखीया दान।
दुरभक्ष माहे दीजियै, मन धर आदर मान॥ ७॥
उचितदान जे आपिये, पामी मन सू प्रीति।
यथायोग गायै जिके, गुरु नै देवनागीत॥ ८॥

तूं कुलदीपक तूं करण, दिन प्रति दान दिवाइ।
कीरति सुणि काइ दीजिय, कीरतिदान कहाइ ॥ ६ ॥
अनुकंपादिक दान जे, त्रिहुँ तणौ फल एह।
संसार ना सुख पामीइ, लहियै लाछि अछेह ॥१०॥

ढाल १—पोपट चाल्यौ रे परणवा, ए देशी

च्यिहुं दिसि चावी चंपापुरी, पूरब देश प्रसिद्ध।
वडा वडा वसे विवहारिआ, सगला रिद्धि समृद्ध ॥१॥
चौरासी चौहटा जिहां, मनोहर नगर मझार।
सगा मा बाप विना सहू, सखरा लाभै श्रीकार ॥२॥ चि०
सुरहीया ना हाट सामठा, चोवा मांड्या चंपेल।
कपूर कस्तूरी ना हाट कुंपला, मह महता मोगरेल ॥३॥ चि०
गान्धी मांड्या रे गोफुला, तवखीर तज्ज तमाल।
ओषध वेषध अतिघणा, कूल्हडी कोथली माल ॥४॥ चि०
तंबोली पणि तिहां घणा, बैठा हाटा विचाल।
बोलै बीडा ल्यौ पानना, सखरी सोपारी फाल ॥५॥ चि०
सखर कंदोई कीया सुंखडा, दीठा पणि गलै दाढ,।
खायै लाडू नै खाजला, दाते दाढे दे वाढ ॥६॥ चि०
सोनार घाट घडै सदा, कुंडल त्रोडी कणदोर।
वींटी समथौ नैं वालला, पणि ते चौहटा ना चौर ॥७॥ चि०
मणिहार मांड्या रे सुगीया, प्रोया मोती प्रवाल।
कूंकूं सिंदुर कुंपला, भलो दीसै तिण भाल ॥८॥ चि०

दरिआई माडी दोसीए, बुलबुल चश्मा बहुमूल।
ऊंचा खासा अधोतरी, पाभडों ने पटकूल ॥९॥ चि०
नाणावटि निरखै घणा, नाणा नाना प्रकार।
रालसेरा नईया नै रूपीया, छक्कड़ पीरोजी सार ॥१०॥ चि०
जुडि करि बैठा रे जवहरी, कड माहि कोथली बाधि।
मणि माणक नै मोती तणा, साटौ मेली ल्यै साध ॥११॥ चि०
फाडिए माड्या रे फूटरा, गोहुँ चोखा ना गज।
मूंग उडद मउठ बाजरी, पगि पगि ज्वार ना पुंज ॥१२॥ चि०
घी ना गज माड्या घणा, कूडा भरि भरि कोडि।
ओछो द्यै ते अभागीया, मुगध नै त्राकडि मोड़ि ॥१३॥ चि०
गुल नै खाड ना गाडला, ऊतरै आवी वखार।
वेचै साटै रे वाणीया, वारू लाभ व्यापारि ॥१४॥ चि०
मोची माड्या रे मोजड़ा, जूना अधमोजा जोडि।
मुहगा पणि मोटीआर ल्यै, मचकता चालै अग मोडि ॥१५॥ चि०
घाची मोची ना घर घणा, सूजी खाती सूआर।
दातारा पन्नीगरा, ताई छींपा तूनार ॥१६॥ चि०
चौरासी इम चौहट्टा, मैं कह्या केईक नाम।
जे जोईयै ते लाभैं जिहा, पिण दीधा थका दाम ॥१७॥ चि०
महल मन्दिर ऊंचा मालीया, वलि सातभूमी आवास।
हींडोला खाट हींचती, ललना लील विलास ॥१८॥ चि०
व्यापारी व्यवहारीया, लील करै लख कोडि।
बईयर पुत्रवती वहू, खिण मात्र नहीं कोई खोड़ि ॥१९॥ चि०

पुण्य करी परिघल सहू, उत्तम चाल आचार।
पालै प्रीति कीधा पछी, नगर तणा नरनारि ॥२०॥ चि०
ताजौ तेथि त्रिपोलियौ, सखर घणु हाट सेरि।
गढ मढ देउल दीपता, फूटरी वाड़ी चौ फेरि ॥२१॥ चि०
वेरा कूआ नै वावडी, नदीय तलाव नीवाण।
परघल पाणी सहु को पीयै, मीठो अमृत समाण ॥२२॥ चि०
नगरी चपा सारखी, नहीं का बीजी किण देस।
'समयसुंदर' कहै साभलो, वर्णवी मैं लवलेश ॥२३॥ चि०

[सर्वगाथा ३३]

दूहा

राज कर तिहा राजीयौ, सामंतक सूरवीर।
राजा राज प्रजा सुखी, सबल हटक नै हीर ॥ १ ॥
वृद्धदत्त विवहारीयौ, वसै तिहा धनवंत।
सोनईया छिन्नू कोडि छै, पणि खुड़दो न खरचंति ॥२॥
सोनईया सगला सदा, आघा ओरड़ै घालि।
आठ पहुर आडौ रहै, परनै राखै पालि ॥ ३ ॥
देहरासर जिम देवता, पूजीजै परभाति।
वृद्धदत्त विवहारीयौ, धन पूछै दिन राति ॥ ४ ॥
कौतिकदेवी कामिनी, पिण नहीं पुत्र सतान।
पुत्री एक त्रिलुत्तमा, रूपै रंभ समान ॥ ५ ॥
साधदत्त नामै सधर, भेला रहै वे भाय।
दान पुण्य देवा तणी, वात विगत नहीं काय ॥६॥

वृद्धदत्त विवहारीयौ, लोभी लाभ निमित्त।
कण घी नौ संग्रह करै, वली वधै किम वित्त ॥ ७ ॥
करसण खेत्र करै घणा, वाहै पोठी ऊट।
लेता देतां लोभीयौ, ल्यै सहुना धन लूटि ॥ ८ ॥
आरभ लागै अति घणा, ते करै विणज व्यापार।
परलोक थी ते पापीयौ, कापै नहीय किवार ॥ ९ ॥
कणी न करावै केहनै, आकरो ऊतर देइ।
दरसण को देखै नहीं, निरणा नाम न लेइ ॥ १० ॥
एक मांगता पाव द्य१, देखौ कृपण दातार।
किमाड़ २ भोगल ३ उत्तर तुरत ४, गलहत्थौ गलबारि५ ।११।
दस दृष्टाते दोहिलौ, मनुष्य तणौ अवतार।
पापी पाप स्यु पिंड भरै, हा हा नाख्यौ हारि ॥ १२ ॥

ढाल (२) चरण करण धर मुनिवर, ए जाति ।

सेठ सोनईया नै पासै मूऔ, इक दिन आधी रातो जी।
एक आवी नै कहै काइ देवता, सेठ साभलि इक वातो जी ॥१॥
ए धन नौ भोगता एक ऊपनौ, त्रिण्हि राति कह्यौ तेमोजी।
वृद्धदत्त ते चितातुर थयौ, ए कुण छै कहै एमो जी ॥ २ ॥ ए०
मैं दुख देखी नै मेलीयो, मत को ल्यें मुझ मालो जी।
अजी सीम देखौ हुं अपुत्रीयौ, हा कुण होस्यै हवालौ जी ।३। ए०
बहु परि खबरि करी नै बाधीयै, पाणी पहिली पालो जी।
आराधु कुलदेवी आपणी, केनही कहै ते टालो जी ॥ ४ ॥ ए०

एक दिन कुलदेवी आगल, साथरौ घाली सूतो जी ।
अन्न पाणी लेइसि नही अन्यथा, दरसण द्यै अद्भूतो जी ।५।ए०
सातमैं दिन देवी परतिख थई, तैं आराधी केमो जी ।
कहि माता ए कवण वचन थयौ. कहै देवी ते तेमो जी ॥६॥ ए०
कहि माता ते कुण किहा ऊपनौ, कुलदेवी कहै एमो जी ।
कापिलपुर नौ त्रिविक्रम वाणीयौ, परिवार ऊपरि प्रेमो जी ॥७॥
पुष्पवती दासी छै तेहनें, तेहनी कूखि उपन्नो जी ।
अद्रश थई कुलदेवी इम कही, विलखौ थयो सेठ मन्नो जी ॥८॥
परभाते ऊठी कीयौ पारणौ, आवी वैठो एकातो जी ।
साधदत्त भाई नैं तेडीयौ, विगत कह्यौ विरतंतो जी ॥ ६ ॥ ए०
साधदत्त कहै भाई साभलौ, म करौ मन विषवादो जी ।
कहो भूठौ किम वोलें देवता, करम स्यु केहो वादो जी ।१०। ए०
वृद्धदत्त कहै विलखौ थकौ, साभलि तू साधदत्तो जी ।
आपणा प्राण जाता पण आगमी वेगि राखीजें वित्तो जी ॥११॥
भवितव्यता ऊपर वैसी रहै, परिहर पुरुषाकारो जी ।
लक्ष्मी छोडै तेहनैं लाजती, जिम वृद्ध कत कुमारो जी ।१२। ए०
उद्यम धैर्य्य पराक्रम आगमी, वल साहस नैं वुद्धो जी ।
ए छह देखी नैं डरइं देवतॉ. संपजें कारिज सिद्धो जी ॥१३॥ए०
साधदत्त कहै तुम्हे साभलौ, सगला मिलं सुरेसो जी ।
तौ पिण भवतव्यता भाजै नहीं, कूडा काय किलेसो जी ।१४।ए०
दंव उलंघी जे काम कीजीयं, ते काम किमहि न थायो जी ।
बव्वीहो सर नौ पाणी पीयै, पिण गलै नीसरि जायौ जी ॥१५॥

वृद्धदत्त कहै उद्यम कीजीयै, मानै नहीं साधदत्तो जी ।
समयसुन्दर कहै बिहुँ बाधव तणो, झगड़ौ लागौ नित्तो जी ।१६।
[सर्व गाथा ६१]

ढाल (३) राजा जौ मिले, एहनी,

साधदत्त कहै सुणहौ भाय, कीजे इहां कोडि उपाय ॥१॥
भावी ना मिटै, एक घड़ी पिण ना घटै । भा०
हुणहारी वात ते सहु होइ, कूडौ दुख म करस्यौ कोइ ॥२॥ भा०
एक साभलि तू इहा दृष्टात, भाई मत थाजे भय भ्रात ।३। भा०
रतनस्थल छै एहवौ नाम, नगर एक थिर रिद्ध नो ठाम ॥४॥भा०
रतनसेन राजा करै राज, भय कर सहु वैरी गया भाज ।५।भा०
रतनदत्त छै तेहनो पुत्र, कला बहुत्तर करि सुविचित्र ॥६॥ भा०
राजकुमर अति रूपनिधान, जान प्रवीण थयो पुरुष युवान ॥७॥
कुमर सरीखी कुमरी अनूप, परणावु इक करीय सरूप ।८। भा०
चिहु दिसि मूक्या चतुर सुजाण, सोलह सोलह पुरुप प्रमाण ।९।
जनमपत्री दीधी तीया साथि, कुमर रूप पट दीधौ हाथि ॥१०॥
चिहुँ दिशि फिरी आव्या तेह, गया सगला आप आपणै गेह ।११
इसी कहै कन्या न मिलै केथि, जोई अम्हे सगलै जेथि तेथि ।१२।
उत्तर दिसि पणि जे गया सोल, ते पाछा वल्या सगले ढढोल १३
गगातटि इक नगरी दीठ, चद्रस्थल नामै परतीठ ॥ १४ ॥ भा०
चद्रसेन राजा नो नाम, चद्रवती कन्या अभिराम ॥ १५ ॥ भा०
चौसठि कला सु दर रूप पात्र, ए आगै अपछर कुण मात्र ॥१६॥
मा बाप नौ जेहवो हुतौ मन्न, ते तेहवा मिल्या रूडा रतन्न ।१७।

कुंअरी कुमर मिली नाम राश, पट दीठा लह्यो रूप प्रकाश ।१८।
चारू दिन मेल्यो वीवाह, लीधौ लगन सोला दिन माहि ॥१६॥
वर वेगलो दिन थोडो विचाल, जीव पड्यौ सहुनो जंजाल ।२०।
मुंहतौ कहै तूमे माडो पलाण, घडिया जोयण ऊंट वंधाण ॥२१॥
सात दिवस जाता ना तेथि, सात दिवस आववा ना एथि ।२२।
सात दिवस पहुँता तिण ठाम, जिहा वर राजा छै अभिराम ।२३
म करौ ढील कहै भूपाल, पागड़ा पग दीधौ ततकाल ।२४। भा०
तिण अवसर तिहा थयौ विरतत, समयसदर कहैते सुणो तंत ।२५।

[सर्वगाथा ८६]

दूहा

समुद्र माहे छै साभलौ, पर्वत एक प्रचंड ।
तेहनो नाम चित्रकूट छै, तेहवौ नहि त्रिहुँ खंड ॥१॥
ते ऊपर लंकापुरी, थिर राक्षस नो ठाम ।
सखरो गढ सोना तणो, भला भुरज अभिराम ॥२॥
गढ मढ मंदिर मालीया, ऊंचा घणू आवास ।
रिद्धि समृद्धि भरी पुरी, स्वर्गपुरी संकास ॥ ३ ॥
दीसै दारियौ चिहुं दिस, तेहिज खाई तेथि ।
अगम अगोचर आवता, जावंतां पणि जेथि ॥ ४ ॥

ढाल (४)—मारग में आबी मिल्यौ, ए देशी,

राज करै तिहा राजीयौ, राणौ रावण दूठौ रे ।
इंन्द्रजित मेघनाद एहवा, पुत्र पूरै जसु पूठौ रे ॥१॥ रा०

ऊंघ छमासी एहनी, कुंभकरण कहिवायो रे।
विभीषण थी सहु को बीहै, बाधव सबल सहायो रे ॥२॥ रा०

अढार कोड़ि अक्षौहिणी, साथे चढै सनूर रे।
त्रिण्ह खंड नो ते धणी, पृथिवी माहि पडूर रे ॥ ३ ॥ रा०

बत्रीस सहस अंतेउरी, पामी पुण्य संयोगो रे,
अपछर सेती इन्द्र जिम, भोगवै सगला भोगो रे ॥४॥ रा०

जसु घर विह कोदव दलै, जम राणौ वहै नीरो रे।
पवन बुहारै आगणै, सबल हटक नै हीरो रे ॥५॥ रा०

नव ग्रह सेवा नित करै, खड़ातडा जसु खाटो रे।
इन्द्र तिके डरता रहै, नाख्या रिपु निरधाटो रे ॥६॥ रा०

अष्टापद ऊपरि इणै, वाई सखरी वीणो रे।
नाची नार मदोदरी, भगवंत सु लयलीणो रे ॥७॥ रा०

कहु वात हुँ केतली, रावण तणीय प्रसिद्धो रे।
पदवी प्रतिवासुदेवनी, भोगवै भली समृद्धो रे ॥८॥ रा०

राणौ रावण एकदा, बैठो सभा मझारो रे।
चामर छत्र धरावतौ, कोइ न लोपै कारो रे ॥९॥ रा०

मनमइ जाणइ मुझ समउ, को नही इण संसारो रे।
अजर अमर सहि हुँ अछुं, आणइ ए अहंकारो रे ॥१०॥ रा०

एहव एक निमत्तीयौ, आयौ सभा मझारो रे।
ऊभो आसिरवाद दे, दरसणीक दीदारो रे ॥११॥ रा०

ताजौ हाथे टीपणौ, जन्नोई जपमालो रे।
पासै योतिष पुस्तिका, 'समयसुन्दर कहि रसालो रे ॥१२॥ रा०
[सर्व गाथा १०२]

ढाल (५) १ नगर सुदरसण अति भलौ,
२ ते मुझ मिच्छामि दुक्कड।

पूछ्यौ रावण पढीया, कहि का आगली वात।
कलियुग में को छे इस्यौ, मुझनैं घालै घात ॥१॥
हुणहारी वात ते हुवै, निश्चै निस्सदेह।
कोडि उपाय कीधा थका, थायै निःफल तेह ॥२॥ हु०
योतिष जोइ जोसी कहै, अयोध्या ठाम।
दशरथ ना बेटा हुस्यै, राम लखमण नाम ॥३॥ हु०
मोटा थया तुनै मारस्यै, मति तू करै रीस।
माहरौ वचन मिटै नहीं, ए विसवा वीस ॥४॥ हु०
परतखि छै ए पारखं, ते तू करि जोय।
तेह नहीं थायै तो तुनै, डर भय नहीं कोइ ॥५॥ हु०
कुमरी कुमर तणो हुस्यै, सातमै दिन संग।
ते विघटायै तो तुनैं, राति दिन रली रग ॥६॥ हु०
कहै रावण वात ए किसी, आखि नैं फुरकार।
जे मनि चिंतवु ते करू, हुए तू हुसीयार ॥७॥ हु०
जोसी कहै जो झूठौ पडु, तो त्रोडु जिनोई।
फाडी नाखु टीपणो, करू तिलक न कोई ॥८॥ हु०

सात दिवस राखौ सही, रोकै ए लेइ।
विघटाडी वात न्यु सजा, कूडो न कहै कदेइ ॥९॥ हु०
राणौ रावण रढि चढ्यौ, करै दाय उपाय।
समयसुन्दर कहै वात ते, आघी पाछी न थाय ॥१०॥ हु०

[सर्व गाथा ११२]

ढाल (६) मधुकरनी

रावण राक्षस मु कीया, कन्या आणौ उपाड सुगुणा।
वरनौलै भमती थकी, जोती वरनी आड, सुगुणा ॥१॥
हुणहारी वात ते हुवै, का करो उद्यम फोक सु०।
पणि रावण पछतावस्यै, हासौ करस्यै लोक सु० ॥२॥ हु०
विद्यादेवी तेडि नै, कहै रावण सुणि एम सु०।
तिमंगली नु रूप करे, राखे कुशले खेम सु० ॥३॥ हु०
दात तणी पेटी करी, घाली कुमरी माहि सु०।
भक्ष पाणी माहे भरया, आपणे हाथे साहि सु० ॥४॥ हु०
तिमगली मुहडे माहे, मजूषा ते घालि सु०।
गगासागर संगमे, मुंकी नै कह्यो चालि सु० ॥५॥ हु०
सात दिवस पूरै थए, हुं तेडुं जदि तुझ सु०।
तदि आवे तु उतावली, ए आज्ञा छै मुझ सु० ॥६॥ हु०
ते तिमगली तिहा रही, ऊंचौ करनै मुख सु०।
चन्द्रावती कन्या तिहा, डरती करै अति दुख सु० ॥७॥ हु०
तक्षक नाग तेडावीयौ, व्यतर देव विशेष सु०।
कहै रावण कर काम तू, एकण मेषोनमेष सु० ॥८॥ हु०

पागडै पग दीधो तिण, तेहनैं जई तू भू त्रि सु० ।
जतनें पिण जीवस्यं नहीं, डक्यौ जे महा डु वि सु० ६ हु० ।
ते तिमही कर आवीयौ, तेड्यो ज्योतिषी तेह सु० ।
कहि रे ते हिव किम हुस्यें, इहा हिव संगम एह सु० ॥१०॥ हु०
बाभण बोल्यो बीहै नहीं, हुस्यै ते तिमहीज सु० ।
बोलै लोक का बापडा, खोड़ी चाढ़ै खीज सु० ॥११॥ हु०
साप झूव्यौ सहु हलफल्या, कीधा कोडि उपाय सु० ।
गारुडी नाग मंत्र गुण्या, पिण गुण कोई न थाय सु० ॥१२॥ हु०
कुमर अचेत थई पड्यो, नीली थई तसु देह सु० ।
कीधे जतन किसु हुव, जीवै नहीं एह सु० ॥१३॥ हु०
वैद्य वडो कहै एह नैं, घालौ मजूषा माहि । सु०
नदी माहि नाखौ तुम्हे, छेहलौ छै प्रतिकार । सु० ॥१४॥ हु०
गंगा मे वहती गई, पैंसे समुद्र मझार । सु०
तिण समै मत्स तिमंगली, कीधो एह विचार । सु० ॥१५॥ हु०
ऊंची गावड इम रह्या, देखु छु हुँ दुख । सु०
दात पेई दरिआ तटै, मूंकी पामै सुख । सु० ॥१६॥ हु०
मजूषा मूंकी तटै, करे जल माहि केलि । सु०
नारि पेई थी नीसरी, देखी दरिया वेलि । सु० ॥१७॥ हु०
वहती पेई आवती, देखी कुमरी तेह । सु०
पाणी माहे पैंसी करी, आघी लीधी एह । सु० ॥१८॥ हु०
पेई उघाडी पेखीयो, एक पुरुष प्रधान । सु०
विष विकार वाध्यो घणो, पायो अमृत पान । सु० ॥१९॥ हु०

महुरा नी हुँती मुंद्रडी, हाथ थकी ऊतार । सु०
पाणी ओहलो पाइयौ, आख वि छांटी अपार । सु ॥२०॥ हु०
विष ऊतर गयौ वेगलो, प्रगट्यौ मूलगौ रूप । सु०
नयणे नयण मिली गया, पणि न लहै कोई सरूप । सु० ॥२१॥
बिहुँ नै सासो ऊपनौ, ए कन्या तौ एह । सु०
मुझ वीवाह मिल्यौ हुतौ, ए तौ वर पणि एह । सु० ॥२२॥ हु०
लाज तजी पूछी लियौ, आप आपणो भेद । सु०
करम सु जोर कीजै किसौ, खिण नाणीजै खेद । सु० ॥२३॥ हु०
धूडि तणी ढिगली करी, ते गंधर्व विवाह । सु०
प्रेम सुं परण्या वे जणा, अगे अधिक उछाह । सु० ॥२४॥ हु०
सातमो दिवस हुतौ तिकौ, टलै न भावी टाक । सु०
मरजी वात ते सारिखी, कुण राजा कुण राक । सु० ॥२५॥ हु०
दरिआ तटि दीठा घणा, मोती लाल प्रवाल । सु०
लीधा नारी लोभणी, मेल्ह्या मंजूष विचाल । सु० ॥२६॥ हु०
वेंठा पेई मे वे जणा, छेहडा वेऊं बाध । सु०
पेई पणि पाछी जडी, सहु पाटिया नै साध । सु० ॥२७॥ हु०
मत्स आवी पेई ले गयौ, रह्यौ ते दरिया विचाल । सु०
मुहडा माहि पेई धरी, मत्त को लागै जजाल । सु० ॥२८॥ हु०
सभा वैस सातम दिने, बाभण नै बोलाय । सु०
मत्स तिमंगली तेड़ीयौ, आय ऊभौ तिहा थाय । सु० ॥२९॥ हु०
अविसासी आप हाथ सुं, पेइ आणी पास । सु०
ऊखेली आणंद सुं, न हुवै हुणहार नास । सु० ॥३०॥ हु०

परण्या पात्या बे जणा, नीसस्या ते नर नार । सु०
अचरिज लोक नै ऊपनो, कुण थयौ एह प्रकार । सु० ॥३१॥ हु०
ठाम बिमणा थया ठाव का, वाभण लही स्यावास । सु०
राणै रावण पूछीयौ, वर कन्या नै पास, । सु० ॥३२॥ हु०
कुण भेद थयौ कहौ तुम्हे, जिम थयौ तिण कह्यो तेम । सु०
पिता पास पहुता कीया, ले वेउं कुशले खेम । सु० ॥३३॥ हु०
वात कही वृद्धदत्त नै, साधुदत्त सहु एम । सु०
समयसुदर कहै इम कह्या, जिम तिम ते कह्यो तेम । सु० ॥३४॥ हु०
[सर्वगाथा १४६]

दूहा

वृद्धदत्त बोल्यो वली, भडक्यो भूत भराड ।
भाई तूं भूलौ घणु, ए दृष्टान्त दिखाडि ॥१॥
काछड काठौ वाधि नै, उद्यम कीजै आप ।
दैव विधाता पिण डरै, काया छूटै काप ॥२॥
जे सिरज्यो ते थाईस्यै, बैस रहै बल छोड़ि ।
अधम तिके नर आलसू, खरी लगाड़ै खोड़ि ॥३॥
उद्यम करसण नीपजै, उद्यम पेट भराय ।
उद्यम घाट घडीजियै, उद्यम थी सहु थाय ॥४॥
साधदत्त जे तैं कह्यौ, ते नहीं छै एकात ।
उद्यम ऊपरि हुं कहुं, ते सांभल दृष्टात ॥५॥

ढाल (७) केकेई राणो वर मागै, एहनो

पूरब दिसि मथुरापुरी, हरबल तिहां रानो रे।
सुबुद्धि नाम मुंहतौ तिहा, ते बहु बुद्धि निधानो रे ॥ १ ॥
उद्यम कीजै एकलौ, पणि भेलीजै भागो रे।
सहु उद्यम थी सपजे, भवतव्यता जाइ भागो रे ॥ २ ॥ उ०
अन्य दिवस एकै समै, समकालै सुविचित्तो रे।
हरदत्त मतिसागर थया, राजा मन्त्री नै पुत्तो रे ॥ ३ ॥ उ०
आधी राते व्यंतरी, अस्त्री रूप उदारो रे।
निरखी नीसरती थकी, मुहते महल मझारो रे ॥ ४ ॥ उ०
पाणि झालि नै पूछीयो, तुं कुण आवी कैसो रे।
ते कहै हुँ विधातरा, आवि छुं सुणि एसो रे ॥ ५ ॥ उ०
छट्ठी जाग्रण आज छै, अक्षर लिखवा आवी रे।
बालक विहुं नै में लिख्या, भाल अक्षर भावी रे ॥ ६ ॥ उ०
आहेडै एक जीवनै, झालस्यं राजकुमारो रे।
मत्रीपुत्र माथै करी, आणस्यै एकज भारो रे ॥ ७ ॥ उ०

उद्यमेन विना राजन् ! न फलन्ति मनोरथाः।
कातरा एव जल्पन्ते, यद्भाव्यं तद्भविष्यति ॥१॥

उद्यमे नास्ति दारिद्र्यं, जपतो नास्ति पातकं।
मौनेन कलहो नास्ति, नास्ति जागरतो भयं ॥२॥

छट्ठी राते जे लिख्या, मत्थइ देइ हत्थ।
देव लिखावइ विह लिखइ, कुण मेटिवा समत्थ ॥१॥

मु हतौ कहि मुगधा लिख्यौ, नहि कुल नें योग्य एहो रे।
विह कहै ते विघटै नहीं, तेहनौ सिरज्यौ तेहो रे ॥ ८ ॥ उ०
बुद्धि प्रपच करी वहु, तूं ऊभी थकी देखो रे।
वहिलौ हुं विघटाड़िसुं लिख्या ललाटे लेखो रे ॥ ९ ॥ उ०
मुहता करै माटीपणौ, ए वात कइयै न थायो रे।
विघटाडै विहना लिख्या, कलियुग मे नहीं कोयो रे ॥१०॥ उ०
वाद विधाता इम कही, अदृश थई ततकालो रे।
जोवा कुण हारै जीपै, समयसुंदर छै विचालो रे ॥११॥ उ०
[सर्वगाथा १९३]

दूहा

एक दिवस मथुरापुरी; आया कटक अजाण।
हरिवल राजा जूझता, तज्या आपणा प्राण ॥ १ ॥
नगर लोक नासी गया, सहर लूटाणो सर्व।
अरियण तिहाँ राजा थया, गरूआ आणी गर्व ॥ २ ॥
मतिसागर मुंहता तणौ, हरदत्त भूप नौ पुत्र।
ए पिण वे नासी गया, विगड्यौ राज नौ सूत्र ॥ ३ ॥
परदेसे गया पाधरा, करता भिक्षा-वृत्ति।
पापी पेट भरंतड़ा, दोहिलौ छै विण वित्त ॥ ४ ॥
लखमीपुर गामे गया, जुदा पड्या जुवान।
हरदत्त व्याध तणै घरे, काम करै तजि मान ॥ ५ ॥
अन्य दिवस कर झूफड़ौ, पासै रह्यौ हरदत्त।
आहेड़ै इक जीव नै, आणे आप निमित्त ॥ ६ ॥

मतिसागर तिण गाम में, ईंधण भारी एक।
आणी करै आजीविका, न टले विहनी टेक ॥ ७ ॥
मुंहतौ पिण भमतौ थकौ, गयौ लखमीपुर गाम।
ईंधण भारी आणतौ, दीठौ सुत तिण ठाम ॥ ८ ॥
पिता कह्यौ ए पुत्र स्युं, सगलो कह्यौ सरूप।
भारउ आण उदर भरूं, सारौ दिन सहुं धूप ॥ ६ ॥
बीजौ भारो बाप हुं, पामूं नहीं किण मेलि।
इम हुं करुं आजीविका, दिन दस नाखु ठेलि ॥१०॥
राजपुत्र पणि आपणी, कहै आहेडा बात।
बीजो जीव जुड़ै नहीं, घणी माडुं जौ घात ॥११॥
मुंहतै मन सुं विमासीयौ, सही विध साची थाय।
हुं पिण उद्यम ऊपरें, करु हिव कोई उपाय ॥१२॥

ढाल—शील कहै जगि हु वडौ, एहनी

सुत साभलि सीख माहरी, पहुँचे तुं वन माहे रे।
चंदन नौ भारौ भरे, बीजाने हाथ म साहे रे ॥ १ ॥
उद्यम पेखौ एहवौ, उद्यम थी सीझै काजो रे।
उद्यम थी सुख सपजै, उद्यम थी लहियै राजो रे ॥२॥ उ०
साझ सीम वनमें भमे, चन्दन न मिलै तो तुझनै रे।
तौ भूख्यौ तिरस्यौ रहे, मु ओ तो हत्या मुझनै रे ॥३॥ उ०
राजा नो बेटौ मिल्यौ, तेहनै पणि पूछ्यौ तिमही रे।
तिण कह्यौ आहेडै भमुं, पणि एक जीव मिलै किमही रे॥४॥

मुहतै कह्यौ हाथी विना, तू जीव म झालै कोई रे।
न मिलै तौ ठावौ आवे, विह मान भंग जिम होई रे ॥५॥
चंदन भारौ नै हाथी वेऊ, जौ हुं ए थोक न पूरु रे।
तौ इण थी झूठी पडु, पछै बैठी मन सु झूरु रे ॥६॥ उ०
बिहुं नै वेऊ थोक पूरवै, विधातरा चंदन हाथी रे।
मुहतौ ल्यै विहु पास थी, वेची नै मेलै आथी रे ॥७॥ उ०
हाथी हजार भेला कीया, चंदननी द्रव्य थई कोडी रे।
मुंहते वे महर्द्धिक कीया, पछै मसकति दीधी छोडी रे ॥८॥
हय गय रथ पायक सजी, कटकी करि मथुरा आया रे।
वैरी मार दूरै कीया, मूलगौ बाप नौ राज पाया रे ॥९॥
वृद्धदत्त विवहारीयौ, कहै साधदत्त सुण भाई रे।
मुहता ना उद्यम थकी, कुयरे ठकुराई पाई रे ॥१०॥ उ०
तिम हु देखि उद्यम करी, वापा पल सहुकर नाखुं रे।
माहरौ धन कोई भोगवै, ए वात हुं किमहि न साखुं रे ।११।
वृद्धदत्त ते लोभीयौ, उपाय अनेक ते करस्यै रे।
समयसुन्दर कहै पणि तिहा, फोकट पापै पिंड भरिस्यै रे ।१२।
[सर्व गाथा १८७]

दूहा

गाडा ऊठनै पोठीया, सार भरी भरपूर।
वृद्धदत्त व्यवहारीयौ, चाल्यो प्रवल पडूर ॥ १ ॥
नगरी कंपिल्ला जाइनै, मोटी मांडी भखार।
क्रय विक्रय बैठो करै, साह बडौ सिरदार ॥ २ ॥

व्यापारी जाणी वडौ, लेवा आवै लोक।
जे जोइयैं जे तिहां मिल, पणि ल्यै ते दाम रोक ॥ ३ ॥
त्रिविक्रम पणि तिहा रहै, ते दासी पणि तेथि।
पूछि गाछि निश्चय कीयौ, पेट भरथ पणि एथ ॥ ४ ॥
माडि प्रीति ते साह सु, मीठे वचन बुलाइ।
आविज्यो हाट छै आपणौ, ल्यौ जे आवै दाइ ॥ ५ ॥
जे जोईयै ते ल्यौ तुम्हे, देज्यो दाम प्रस्ताव।
नहीं द्यौ तौ पण नहीं ज छै, प्रीति नौ एह प्रभाव ॥६॥

ढाल (९) तु गियागिरि शिखर सोहै, एहनी

वृद्धदत्त नें घरे तेड़ी, भोजन भगति करेइ रे।
जा रहौ ताइ सीम इहा तुम्हे, जीमज्यो प्रीति धरेइ रे ॥१॥
मारवा नौ उपाय माड्यौ, पणि मरं नहीं कोइ रे।
ओल्यु करता थाइ पैल्युं, करम जौ पाधरौ होइ रे ॥२॥ मा०
आभ्रण नै वहु वस्त्र आप्या, सुखडी मेवा सार रे।
सेठ वहू सुत दास दासी, वसि कीयौ परिवार रे ॥३॥ मा०
वस्तु वाना सर्व वेची, हूओ चालणहार रे।
त्रिविक्रम सुं तेडी कीयौ, जाता तणौ जुहार रे ॥४॥ मा०
त्रिविक्रम कहै च्यार मास नी, प्रीति लागी चीत्ति रे।
चालता तुम्हनै वचन केहौ, कहुँ हुं कहो मीत रे ॥५॥ मा०
म जावौ इम तौ अमंगल, जावौ तौ नसनेह रे।
रहौ इम पणि हुवै प्रभुता, वचन नहीं क्यु एह रे ॥६॥ मा०

इम विचारी कह्यौ एहवौ, मित्र कहुं छु तुझ रे।
मन थकी वीसारज्यो मा, वहिला मिलल्यो मुझ रे ॥७॥ मा०
त्रिविक्रम कहै सुणो वीनति, तुम्हे कीधो प्रयाण रे।
अम्हारु ते छै तुम्हारु, प्रीति नो एह वधाण रे ॥८॥ मा०
ऊंट बलद नै वहिल घोडा, राछ भीछ प्रधान रे।
जो जोइयै ते साथ ल्यो तुम्हें, सेवक पणि सावधान रे ॥९॥ मा०
वृद्धदत्त कहै अम्हारु, किण सुं नहीं छै काम रे।
जे जोइयै ते सर्व थोक छै, वलि तुम्हारौ नाम रे ॥१०॥ मा०
बोल मानण भणी कहा छां, मारग में न सेरई रे।
पुष्पश्री दासीय साथि द्यौ, भोजन भगत करेइ रे ॥११॥ मा०
मारग माहे सोहिला थावां, पहुंता पछी ततकाल रे।
पाछी पहुती अम्हे करस्या, संग्रहज्यो संभाल रे ॥ १२ ॥ मा०
खिण इक विरहों खमे नहीं, ए पाखै न सरेइ रे।
तुम्हे कह्यौ मूंकी तौ जोइजे, वहिली वलण करेइ रे ॥१३॥ मा०
वृद्धदत्तै विदा कीधी, चाल्यौ सहु साथ लेइ रे।
दासी वहिल विचै बैसारी, दिलासा घणी देइ रे ॥ १४ ॥ मा०
पथ माहे पाप धरतौ, पहुंतो उज्जेण पास रे।
दाण भंजन भणी नीसर्यौ, वेगलो वनवास रे ॥ १५ ॥ मा०
साथ सगलौ कीयौ आगै, आप रह्यौ सहु पूठि रे।
वहिल पासै टालि वेगली, नीची नाखि अपूठि रे ॥ १६ ॥ मा०
लाते लाते मार महुकम, अधम कीध अचेत रे।
मूई जाण नें मूक दीधी, हरषित हुओ तिण हेति रे ॥१७॥ मा०

आप साथि नै मिली एहवी, कही वात विमास रे ।
शरीर चिंता हेति ऊतरी, दासी तौ गई नास रे ॥ १८ ॥ मा०
मैं तो सगलो ठाम जोई, पण न लाधी एथि रे ।
इहा थी चालौ ऊतावला ह्वै, दाणी आवस्यै एथ रे ॥१६॥ मा०
माणस मूकी खवर दीधी, त्रिविक्रम छै तेथ रे ।
पुष्पश्री दासी गई नासी, तिहा जोज्यो नही पंथ रे ।२०। मा०
कुशले खेमे आपणे घरे, आव्यो हरषित होइ रे ।
छिन्नु कोड़ि सोनईया अछै, मो विण भोगता न कोइ रे ॥२१॥
लखमी पामी न लोभ कीजै, दीधौ आवै साथि रे ।
समयसुन्दर कहै नहींतर, माखी ज्यु घसै हाथ रे ॥२२॥ मा०
[सर्वगाथा २१५]

दूहा

दासी तौ मुई मारता, सूणि पूठलो विरतत ।
मरता पेट थी नीसर्यौ. बालक बहु रूपवत ॥१॥
इम जायौ रहै जीवतौ, जो दया पाली होइ ।
जसु रक्खै गोसाइया, मार न सक्कै कोइ ॥ २ ॥

ढाल (१०) राय गजण समा २ स्वामि स्वयप्रभु साभलउ

इण अवसर इक डोकरी, वैगी किणही गाम रे । चतुरनर
उज्जेणी भणी आवती, ते आवी तिण ठाम रे ॥ चतुरनर ॥१॥
पुण्य घणौ हुवै जेहनै, ते किम मार्‍यौ जाइ रे । च० ॥पु०॥
ते सरूप दीठौ तिणै, अटकल कीधी तत्र रे । च०
किणही चंडाल पापीयै, ए कीधु अक्षत्र रे ॥ च० २पु० ॥

चोर नहीं रह्या गरहणा, वैरी मारी एह रे। च०
बालक टलवलतौ पड्यौ, दीठो डोकरी तेह रे ॥च० ३पु०॥
अधिक दया मन ऊपनी, बालक लीधो हाथ रे। च०
पुत्रतणी परि पालस्यु, सुख दुख एहनें साथ रे ॥च०४पु०॥
गाठे बाध्या गरहणा, आवी नगर उजेण रे। च०
राजा पास जई कही, सगली वात क्रमेण रे॥ च० ५ पु० ॥
राजा पणि ते रंजीयौ, डोकरी नें स्यावास रे।च०
लालच न करी गरहणे, बाल आण्यो मो पास रे ॥च०६पु०॥
राजा रलीयात थयो, कहै वृद्धा सुण वात रे। च०
रूडी परि तूं राखज्ये, बालक नें दिन रात रे ॥च० ७ पु०॥
राजा दासी नैं कीयौ, अगन तणौ ससकार रे। च०
डोकरी बालक ले गई, आपणे घरे अपार रे ॥च० ८ पु० ॥
मुहछव माड्यौ डोकरी, जिम जायै थकै पुत्र रे। च०
ए मोटौ थयौ राखस्यै, माहरा घर नु सूत्र रे ॥च० ९ पु०॥
राजा कह्यौ सुण डोकरी, खबर करे मुझ आव रे।
लेजे जे तुझ जोईयै, धू नी राखै धाव रे॥ च० १० पु० ॥
चपक तरु हेठै चढ्यौ, चंपक दीधो नाम रे।
चंद जेम चढती कला, वाधै गुण अभिराम रे॥ च० ११ ॥
आठ वरस वौल्या पछै, मोटो कर मंडाण रे। च०
भणवा मूक्यो दिन भलै, चंपक चतुर सुजाण रे ॥च० १२ पु०॥
थोडा दिनमाहे थयौ, बहुत्तर कला नो जाण रे। च०
निपुण घणा लेसालीया, पणि न को एह समान रे ॥च०.१३पु०॥

चतुराई चंपक तणी, अधिकी हीया उकत्ति रे । च०
हीयाली गूढा दूहा, जाणं अरथ जुगत्ति रे ॥ च० १४ पु०॥
चपक पूछ्यौ बोज कौ, जाण्यौ नहींय ज बाप रे । च० ।
छोह धरी छोकर कहै, बोलै किसु निबाप रे ॥च० १५ पु०॥
ते बोल लागे तीर ज्यु, पूछ्यौ कुण मुझ तात रे । च०
मूल थकी माडी कही, वृद्धा सगली बात रे ॥च० १६ पु०॥
मन माहे जाणी रह्यौ, ऐ ऐ करमनी गति रे । च०
ऐ ऐ करम विटंबना, ऐ ऐ पुण्य सपत्ति रे ॥ च० १७ पु० ॥
मति सभाली आपणी, माड्या विणज व्यापार रे । च०
घर वाधी लखमी घणी, वल वाध्यौ दरबार रे । च० ॥१८॥ पु०
पुण्याई जाग्यौ प्रगट, चंपक दीठौ चंग रे । च०
नगरसेठ थिर थापीयौ, राजा मन धर रंग रे । च० ॥१९॥ पु०
च्यार कोड़ि चंपक तणै, सोनईया संपत्ति रे । च०
वाधी व्यापारे घरे, अधिकी मति उकत्ति रे । च० ॥२०॥ पु०
वारू नगर ना वाणिया, मिल्या चपक नै मित्र रे । च०
समयसुन्दर कहै तेह सु, प्रीतिनी वात विचित्र रे । च० ॥२१॥ पु०
[सर्व गाथा २३८]

ढाल (११) बोलडो देज्यो सबक पुत्र, एहनी

चपक सेठ चाल्या जान, मित्र सघातै जी ।
सगा सणीजा लीधा साथ, आपणी न्यातै जी ॥ १ ॥
चपक सरीखौ साथ मैं को नही रे । आ०

सखर केसरीया, चपक सेठ, वागा वणाया जी ।
चोवा चंपेल नै मोगरेल, डील लगाया जी ॥२॥ चं०
घम-घम करती घोड़ा वहिल, ऊपर वैठा जी ।
मित्र संघाते माहोमाहि, बोलइ मीठा जी ॥३॥ च०
कन्या हुंती चपा पास, एणै गामै जी ।
वीवाह वेला पहुंती जान, तेणै ठामै जी ॥४॥ चं०
कन्या बाप अनै वृद्धदत्त, मित्र कहीजै जी ।
ते पिण तेड्यो आव्यौ तेथि, वरग वहीजै जी ॥५॥ चं०
रली रंग सुं थयौ वीवाह, परण्या पात्या जी ।
जानी मानी सहु सतोष, मन नी खांत्या जी ॥६॥ चं०
वली वीवाही राखी जान, भगत करेवा जी ।
जानी लोक सिगला लागा, फिरवा घिरवा जी ॥७॥ चं०
वावड़ी वैठो चंपक सेठ, दातण करतौ जी ।
वृद्धदत्त ते दीठौ दृष्टि, लीला धरतो जी ॥८॥ चं०
एतौ दीसै देवकुमार, गोष्ठी करीजै जी ।
वारू थायै जो पुत्री मुझ, एहनै दीजै जी ॥९॥ चं०
पहिली पूछूं न्यात नै पात, किहा ना वासी जी ।
सरल सभावी चंपक सेठ, वात प्रकाशी जी ॥१०॥ चं०
वृद्धदत्त नै हीया माहि, साल्यो गाढो जी ।
हा ! मैं दासी मारी गर्भ, हुं थयौ ताढो जी ॥११॥ च०
देवी कही ते साची वात, जिम हीज हुइस्यैजी ।
म्हारी लखमी नौ भोगवणहार, थातौ दीस्यैजी ॥१२॥ च०

केही चिन्ता वली उपाय, बीजौ करस्याजी।
जिम तिम करी हुंतौ एहनौ, जीवत हरस्याजी ॥१३॥ च०
आगै पण मैं मारी माय, हत्या लागी जी।
ए मारूं तो थाऊं पूर्ण, पाप विभागी जी ॥१४॥ च०
कादम ऊपर कादम लेप लागौ वहुपर जी।
मैलै पहरण मैलौ होइ, ओढण ऊपरि जी ॥१५॥ चं०
मारण नो वल माड्यौ उपाय, लोभ दिखाडीजी।
साह रहौ तुम्हे अम्ह पास, साथ नै छाडी जी ॥१६॥ च०
आपे करस्या विणज व्यापार, द्रव्य उपासाजी।
थोडा दिवसा माहि आपे, महर्द्धिक थास्याजी ॥१७॥ चं०
चंपानगरी माहि मजीठ, लाभै सुंहगीजी।
उज्जेणी माहि बिमणै मोल, छै अति मुहगीजी ॥१८॥ चं०
चंपानगरी चंपकसेठ, एकला जावौ जी।
व्यापारी बीजानै मत्त, कानें सुणावौ जी ॥१९॥ चं०
साभलस्यै जौ सगला जाइ, मजीठ लेस्यैजी। '
मजीठ मुहगी कर आपानै, आणै देस्यैजी ॥२०॥ च०
साथदत्त छै भाई मुझ, चपा माहेजी।
लेख लिखु छुं तेहनै एम, अधिक उछाहै जी ॥२१॥ चं०
मजीठ प्रमुख मुहगी वस्तु, लेई देज्यो जी।
अरधो अरध स्वाहा लाभ, विहची लेज्यो जी ॥२२॥ चं०
एम कह्यौ पणि लिखीयु तेह, सहु साभलज्योजी।
कागल वाची नै ततकाल, मत खलभलज्योजी ॥२३॥ चं०

इणै अम्हारी माडवी माहि, सहु माम पाड़ीजी।
एह अम्हारौ परमशत्रु, लाज गमाड़ी जी ॥२४॥ चं०
कागल वाची नै एहनै मार, कूयै नाखेज्यो जी।
दया मया लाल नै पाल को, मति साकेज्यो जी ॥२५॥ चं०
काम कीया पछै माणस मूक, देज्यो वधाई जी।
भलौ करतौ साधदत्त, मूकज्यो भाई जी ॥२६॥ चं०
एह समाचार कागल माहि, लिखनै बीड्यौजी।
लोभनै वाह्यै चंपक सेठ, हाथ मे भीड्यौजी ॥२७॥ चं०
चंपक सेठ चाल्यो तुरत, चंपा पहुतौ जी।
वृद्धदत्त तणै गयो गेह, भेद अलहतौजी ॥२८॥ चं०
तिण अवसर कौतिगदे आप, घर धणीयाणीजी।
कहि कण गई, साधदत्त, गयौ उग्राहणी जी ॥२९॥ चं०
घर माहे दीसे नही कोय, माटी वइअर जी।
त्रिलोत्तमा एकली आवास, नहि काई सहीयरजी ॥३०॥ चं०
क्रीडा करती दीठी सेठ, फूल दडा सु जी।
चंपक गयौ चाली नै माहि चित्त रूड़ा सुंजी ॥३१॥ चं०
भवतव्यता वस लेख उखेलि, कुमरी वाच्योजी।
मारण थी तौ तेहनौ मन्न, पाछौ खाच्यौ जी ॥३२॥ चं०
तिलोत्तमा ते लेइ लेख, राख्यौ पासै जी।
आगति स्वागत कीधी आप, एहवु भासैजी ॥३३॥ च०
घोड़वहिलीया सामी साल, बाधी वैसोजी।
करस्या काम तुम्हारुं सर्व, जे तुम्हे कहिसो जी ॥३४॥ चं०

कुमरी विमास्यौ एहवौ काम, स्युं करूं यु बापै जी।
भुडै कामै हा हा एह, भस्यो पिंड पापै जी ॥३५॥ च०
एतौ दीसै देवकुमार, रूपै रूड़ौजी।
आवा डाले बैठौ सोहै, जेहवो सूडौजी ॥३६॥ च०
भाग्य विशेषें ए भरतार, माहरै थायै जी।
सफल करूं तौ यौवन रूप, लहरे जायैजी ॥३७॥ च०
एम विमासी बाप नै अक्षरे, लिख्यौ लेख बीजोजी।
लिखनै दीधौ मा नै, सहु को पतीजै जी ॥३८॥ चं०
त्रिलोत्तमा देज्यो चंपक नै, साझिनी वेलाजी।
विलम्ब म करजो एह लिगार, सहु कर भेला जी ॥३९॥ चं०
साधदत्त पणि आयौ साझ, व्यालू कीधौ जी।
कौतकदे देउर नै हाथ, कागल दीधौ जी ॥४०॥ च०
साधदत्त पणि ऊंचै साद, वाच्यौ कागल जी।
सगा सणीजा भाई वध, सहु को आगल जी ॥४१॥ च०
वेला थोड़ी तो पणि लोक, मेल्या झाझाजी।
पाणिग्रहण कराव्या वेगि, पूरा आझाजी ॥४२॥ चं०
वृद्धदत्त नी जड़ी भखार, मोकली कीधी जी।
याचक लोक नें लाखे ग्यान, लिखमी दीधी जी ॥४३॥ चं०
वृद्धदत्त ने घरे प्रभात, आवै, वधामणी जी।
उच्छव महुच्छव गीत नै गान, गायै सुहामणा जी ॥४४॥ च०
इण अवसर हिवै वृद्धदत्त, वाटड़ी जोवै जी।
को आव्यौ कहै मास्यौ तेह, तौ भलुं होवै जी ॥४५॥ चं०

वृद्धदत्त नै याचक जाइ, वात सुणावी जी।
चपक नै त्रिलोतमा नारि, काकै परणावी जी ॥४६॥ चं०
वृद्धदत्त नै हीया माहि, दाहज ऊठ्यौ जी।
विपरीत वात कही दैव हा ! मुझ नैं मुठ्यौ जी ॥४७॥ चं०
अगति ने आकार गोपि, ते घर आयौ जी।
जानी मानी जीमता देखि, मन दुख पायौ जी ॥४८॥ चं०
वृद्धदत्त कहै आणद, ऊपनौ अम्हनै जी।
तुरतसु काम कीधौ एह, साबास तुम्ह ने जी ॥४६॥ चं०
चपक सेठ नो मोटो भाग, कन्या परणी जी।
समयसुंदर कहै ते पूरव, पुण्य नी करणी जी ॥५०॥ चं०

[सर्वगाथा २८८]

दूहा

वीवाह गाह वौल्या पछी, वृद्धदत्त कहै आम।
रे भाई ते स्यु कीयौ, ए अविचारत काम ॥१॥
साधदत्त कहै स्यु करू, तुम्हें मूक्यो मुझ लेख।
दोस म देजे मुझ नै, ए लेख भाई देख ॥१॥
वाची लेख विचारीयौ, कुमरी कीयौ विपरीत।
होवणहारौ ते थयौ, कही करू कफीत ॥३॥
फोकटि पिंड पापे भर्यौ, काम सर्यौ नहीं कोइ।
औल्या थी पेल्यु थयु, हुवणहार ते होइ ॥४॥
चपक तौ चपापुरी, परण्यौ जाण्यौ मित्र।
जान ऊजेणी सहु गई, चपक चम्पा तत्र ॥५॥

ढाल (१२)—गिरधर आवैलौ एहनी

जानी ए जाय जणावीयौ, मात नै ऊगतै सूर।
चम्पक तौ चम्पापुरी, परण्यो पुण्य पडूर ॥ १ ॥
मेरी मईया देहि वधाई मोहि।
जे मन माने हो तोहि, मुझ मन हरषित होइ। मे० आकणी
सासू सुसरं राखीयौ, नवल जमाई नेह।
मन वछित सुख भोगवें, त्रिलोत्तमा सु तेह। मे० ॥ २ ॥
चम्पानगरी मे भमै, चम्पक चतुर सुजाण।
नरनारी मोही रह्या, ऐ ऐ पुण्य प्रमाण। मे० ॥ ३॥
बीजी भूमि त्रिलोत्तमा, आपणै प्रिय नै सग।
सीयाले सूती हुती, राति समय रली रंग ॥४॥ मे०
नीची ऊतरती थकी, किणही आपण काम।
बीजी भूमे आवता, सवद सुण्यौ तिण ठाम ॥५॥मे०
वृद्धदत्त करै वारता, वईयर सु व्हु वार।
बीजौ को सुणतौ नथी, आधी राति मझार ॥६॥मे०
लेख लिख्यौ जूदी परै, जूदी परै थई बात।
दोष अम्हारा कर्म नौ, घाल्यो दैवे घात ॥७॥मे०
ज्ञाति पाति नहीं एहनी, किसौ जमाई एह।
घर माहे आवौ लियो, शत्रु सु किसो सनेह ॥८॥मे०
आगै जातौ ए हुस्यै, इहा रहतौ इण ठाम।
आपणी लखमी नौ धणी, तेह सु केहो काम ॥९॥मे०

जीमाड़ै छै तू सदा, विष देजे तिण माहि।
पाप उदेग टलै परौ, वीजौ डर नही काहि॥१०॥
मति तूं करे जे मोहनी, पुत्री तणी लिगार।
पुत्री परणीजै घणी, ए थकी नहीं आधार॥११॥मे०
वापे वोल कह्या तिके, मा पणि मान्यौ तेह।
विष देई हुं मारस्यु, अधम जमाई एह॥१२॥मे०
ए आलोच त्रिलोत्तमा, सांभलि आपणै कानि।
वज्राहत पाछी वली, ए भूडो तोफान॥१३॥ मे०
चीतव्यो एम त्रिलोत्तमा, जौ कहुं एह प्रकार।
तौ पति मारै वाप नै, नहिं तर मरै भरतार॥१४॥मे०
इहा वाघ इहा तौ कूऔ, कहो हिवै कीजै केम।
अकल विचारी नै कहुँ, आपण नै प्रियु नें एम॥१५॥मे०
शकुन निमित्त तणै वले, इम दीठौ छै अनिष्ट।
तुम्हनै मास वि सीम छै, कोइक मोटौ कष्ट॥१६॥ मे०
ते भणी तुम्हे मत जीमज्यो, पाणी म पीज्यो टाक।
तंवोल पिण मत खाइज्यो, इहा छै मोटौ वाक॥१७॥ मे०
मित्र घरे तुम्हे जीमज्यो, भमिज्यो नगर मझार।
रात पड़ी पछै आविज्यो, जाज्यो ऊठि सवार॥१८॥ मे०
आपणी अस्त्री नो कह्यो, मानीउ चतुर सुजाण।
वामी दुरगा वोलती, पंथी करैय प्रयाण॥१९॥ मे०
चंपक सेठ चिहुं दिसै, नगरी भमै निश्चिंत।
मित्र सु रहै परवर्‌यो, लीला केल करंत॥२०॥ मे०

वृद्धदत्त ते वलि कहै, वनता नै वार वार ।
मै कह्यौ ते कीधो नहीं, ते कहै कोण प्रकार ॥२१॥ मे०
कोतिगदे वलतो कहै, मुझ दोस नहींय लिगार ।
आवै नहीं घर आपणें, जीमै नहींय किवार ॥२२॥ मे०
वाहिर रहै वाहिर जिमै, पाणी न पीवै एथ ।
संनद्ध वद्ध संकित थकौ, दीसै जेथि नै तेथि ॥२३॥ मे०
वृद्धदत्त पापी वली, मारण तणौ उपाय ।
माडै वीजी वार ते, दया मया नहिं काइ ॥२४॥ मे०
वृद्धदत्त करस्यै वली, थिर मारवा नौ थाप ।
समयसुन्दर कहै देखज्यो, पोतै लागै पाप ॥२५॥ मे०

[सर्व गाथा ३१८]

ढाल (१३) कहिज्यो पडित एह हीयाली एहनी ।

वृद्धदत्त पापी इक दिवसै, तेड्या सुभट वेसासी ।
एकातें आधा तेडी नें, पाप नी वात प्रकाशी रे ॥ १ ॥
चिंतवै परनै ते पडै घर नें, भाई वधनै भूडौ' रे चि०
चिंतवै परनै ते पडै धरनै, राजा प्रजा नै रूड़ो रे ॥२॥ चि०
सौ सौ सोनईया हु देस्युं, प्रत्येकै थयै कामै रे ।
चंपक सेठ नै मारी नाखज्यो, लाग देखो तिण ठामै रे ॥३॥ चि०
सुभटे वात सही कर मानी, लोभ ते किसु न थाई रे ।
रात दिवस रहै बल छल जोता, पिण न लहै घात काई रे ॥४॥
चंपक सेठै चाकर राख्या, हथियार सखरा हाथै रे ।
तनु छाया जिम टलै न पासै, सदा रहै ते साथै रे ॥५॥ चिं०

छम्मास गया पिण छल पामे नहीं, वृद्ध कहै थायौ वेगा रे।
सुभट कहै कहो सी पर कीजै, अम्हनै लागौ उदेगा रे ॥६॥ चि०
राही रूप करी रावलिया, रमता हुता रातें रे।
नर नारी सहुना मन रींझवै, भली जिनस बहु भाते रे ॥७॥ चि०
चपक सेठ पणि जोवा बैठौ, रात घणी गई जोता रे।
भवतव्यतावश सुभटे जाण्युं, घरे जाँ भय नही को ताँ रे ॥८॥ चि०
आप आपणै घरे लोग गया सहू, राही रमनै थाकी रे।
चाकर को दीठो नहीं पासे, चपक चाल्यो एकाकी रे ॥९॥ चि०
ऊघालौ सुसरा घर आयौ, पौल माँहे जाई पैठो रे।
तिहाँ घणा त्रापड़ पाथरी मूक्या, आयौ गयौ रहे बैठो रे ॥१०॥
कोलाहल कर कोण जगावैं, कुण किमाड उघड़ावै रे।
इम विमासी नै तिहा सूतो, ऊंघ तुरत पिण आवें रे ॥११॥ चि०
तिण वेला ते पायक आया, चपक सूतो दीठौ रे।
हथियार ले हणवा भणी धाया, सगलौ साथ ते धीठौ रे ॥१२॥
वली विमास्यु दिवस घणा थया, सेठ पूछा तौ वारू रे।
सेठ कहै खिण विलंब म करिज्यो, बात सहु तुम्ह सारू रे ॥१३॥
माहलै माकण करड़ी खाधौ, जाणै मित्र जगायौ रे।
चपक ऊठि प्रिया घर सूतौ, तिहा आणंद सुख पायौ रे ॥१४॥
घायक पिण धाई नै आया, पिण ते तिहा न देखै रे।
जाण्यौ ते गयौ शरीर चिन्तादिक, किणही काम विशेषै रे ॥१५॥
आपे वेगला जई रहा छाना, ए आवी इहा सूस्यै रे।
घणा मिली आपे घाव देस्या, इम आपणौ काम सरस्यै रे ॥१६॥

वृद्धदत्त उतावल करवा, आप आयौ हा हा हूतौ रे।
को दीसै नहीं ते का आपज, तिण ठामै जाइ सूतौ रे ॥१७॥ चि०
तेहवै ते घायक पण आया, जाण्यो चंपक एही रे।
समकालै घाव मार्‌यौ सगले, ढील करा हिव केही रे ॥१८॥ चि०
पौल वाहिर कूआ मै नाख्यौ, शरीर लेई नै राते रे।
घायक पुरुष थया घणु हरखत, पामस्या दाम प्रभाते रे ॥१९॥
कूअै आव्या दातण करिवा, निचिन्ता थई तेही रे।
पाणी ऊपरि तरती दीठी, वृद्धदत्त नी देही रे ॥२०॥ चि० ।
आक्रद पोकार करवा लागा, हा अम्हे स्यु कीधौ रे।
ओल्यु करता थायै पैल्यु, काम न कोई सीधौ रे ॥२१॥ चि०
चडाल करम कीधु अम्हे पापी, अम्हे थया दुर्गति गामी रे।
कहइ स्यु न करइ लोभी माणस, कहउ स्यू न करइ कामी रे॥२२॥
साधदत्त भाई वात साँभलि, हीयौ फाटनै मूऔ रे।
छिन्नू कोडि सोनईया केरौ, चपक ते धणी हूऔ रे ॥२३॥ चि०
बारहियौ करि बहु माणस मिलि, घर धणी चंपक कीधौ रे।
जेहनै पुत्र नहीं नहीं भाई, तेहनै जमाई सीधौ रे ॥२४॥ चि०
सहु को लोक कहै छै सरज्यु, ते बोल केता वाचु रे।
उद्यम छै पणि भावी अधिकु, समयसुन्दर कहै साचु रे० ॥२५॥
पहिलौ खण्ड थयौ ए पूरौ, पिण सम्बन्ध अधूरौ रे।
समयसुन्दर वीजै खडै कहि, संवध थास्यै पूरौ रे ॥२६॥ चि०

॥ इतिश्रीअनुकम्पादाने चपकश्रेष्ठ संवन्धे प्रथम खण्ड समाप्तः ॥

द्वितीय खण्ड

दूहा

बीजउ खंड हिव बोलस्युं, चंपक पामी रिद्धि ।
ए अनुकपा दान थी, सगली जाणो सिद्धि ॥ १ ॥
छिन्नूं कोड़ि तणौ धणी, थयौ ते चंपक सेठ ।
वृद्धदत्त व्यवहारीयै, तिण तौ कीधी वेठ ॥ २ ॥
चौद कोड़ि सोना तणी, आपणा माता वृद्धि ।
उज्जेणी थी आण नें, सगली भेली किद्ध ॥ ३ ॥
चंपक सेठ चंपापुरी, भोगवै लील विलास ।
व्यापारै वाध्यो घणु, प्रगट्यौ पुण्य प्रकाश ॥ ४ ॥

ढाल (८)—कर जोडी आगलि रही, एहनी

छिन्नूं कोडि निधान गत, वलि छिन्नूं व्यापारन रे ।
छिन्नूं वलि व्याजे फिरै, ऐ ऐ पुण्य प्रकारन रे ॥ १ ॥
पुण्य तणा फल भोगवें, चंपक सेठ सुजाणन रे ।
अचरिज सुणता ऊपजें, पूरब पुण्य प्रमाणन रे ॥ २ ॥ पु०
सहस वाहण वहै सासता, सहस वहै सकट नित्यन रे ।
सहस गेह सातभूमिया, सहस हाट पणि सत्यन रे ॥३॥ पु०
भाडशाला इक सहस ते, पाचसै गज परवारन रे ।
पाचसै सुभट पासे रहै, हय पण पाच हज्जारन रे ॥ ४ ॥ पु०

पाच सहस बीजा सुभट, पाचसै ऊंट प्रधान रे।
दस हज्जार पणि पोठीया, लाख बलद नो गामन रे ॥५॥ पु०
सौ गोअल दस दस सहस, गोअल गोअल गाइन रे।
व्यापारी सेवा करै, दस हज्जार घर आइन रे ॥ ६ ॥ पु०
लाख द्रव्य लागै जिणै, एहवौ अगनौ भोगन रे।
मन वंछित सुख भोगवै, पूरव पुण्य संयोगन रे ॥ ७ ॥ पु०
दीन हीन देखी करी, द्यइं ते करुणा दानन रे।
राति दिवस दस लाखनुं, बाधु पुण्य बंधाणन रे ॥ ८ ॥ पु०
साधु समीपे ध्रम सुणी, थयौ ते श्रावक शुद्धन रे।
पालै जीवदया प्रगट, नहीं व्यापार विरुद्धन रे ॥ ९ ॥ पु०
देव जुहारें दिन प्रतै, ऊठी ऊगतै सूरन रे।
विहरावै कर वंदना, पातरा भर भर पूरन रे ॥ १० ॥ पु०
पडकमणूं बे टंक नूं, साचवै रूडी रीतन रे।
साहमी नै मानै घणूं, परमेसर सुं प्रीतन रे ॥ ११ ॥ पु०
सखरा सहस करावीया, जैन तणा प्रासादन रे।
दंड कलश ध्वज दीपता, वाद्या विटलै विषादन रे ॥१२॥ पु०
फटक प्रवाल पाषाणना, कनक रूपाना बिंबन रे।
लाखे गाने भराविया, वित्त नौ नहीं विलंबन रे ॥ १३ ॥ पु०
संसारना सुख भोगवै, करै धरम करतूतन रे।
समयसुन्दर सफलो करैं, ए करणी अदभूतन रे ॥ १४ ॥ पु०

[सर्व गाथा १८]

ढाल (४), प्राणपीयारी जानुकी, २ नाचै इद्र आणद सु

अन्य दिवस तिहा आवीया, चंपानयरी उद्यान रे।
घणा साधु सु परवरया, केवलिज्ञान प्रधान रे॥ १॥
केवल गुरू कहै ते खरू, साभलै सहु सावधान रे।
परमाणद पामै, धरै, नर नारी ध्रम ध्यान रे॥ २॥ के०
चंपकपण गयौ वादिवा, त्रिण्ह वार प्रदक्षण दीध रे।
वारु विनय सघातै, कर जोडी वंदना कीध रे॥ ३॥ के०
चंपक नौ चित रजीयौ, साभल गुरु देसणा सार रे।
पूछे कर जोडी करी, पूरव भव नो प्रकार रे॥ ४॥ के०
कहौ सामी भव पाछलो, मै केहा कीधा पुण्य रे।
इण भव मे पामी साही, इवडी लखमी अगण्य रे॥ ५॥ के०
वृद्धदत्त विवहारीयौ, कचण छिन्नु कोडी लाधा रे।
पणि भोगवी न सकी, ते कुण करम नै बाधा रे॥ ६॥ के०
अज्ञात कुल हुओ माहरौ, डोकरी ऊपर राग रे।
डोकरी मुझ नै पालीयो, ते कुण करम विभाग रे॥ ७॥ के०
विण अपराध मो ऊपरै, मारण माड्या उपाय रे।
वृद्धदत्त वाणीयें पिण, ते कुण वयर कहाय रे॥ ८॥ के०
कहै केवलि ते साभलो, सगला नो उत्तर एह रे।
पुण्य पाप पूठे कीया, भोगवै सहु फल तेह रे॥ ९॥ के०
नगरी एक सुमेलिका, वन मे तापस नो ठाम रे॥
तापस बे तिहा रहै, भवदत्त भवभूत नाम रे॥ १०॥ के०

कंद मूल पत्र ते भखै, पचाग्नि साधै वेऊ रे।
दुक्कर तपस्या करैं, रूड़ा रहिणी काल गमेऊ रे ॥ ११ ॥ के०
कुटल वृद्ध भवदत्त ते, भवभूति सरल सुभाव रे।
वेऊ मरने ते थया, यक्ष देव तप परभाव रे ॥ १२ ॥ के०
अन्यायपुर पाटण तिहा, भवदत्ते अवतार लिद्ध रे।
ते यक्ष चवी नैं तिहा थी, वचनामति सेठ प्रसिद्ध रे ॥१३॥ के०
भवभूति पणि तिहा चवी, पाडलीपुर महसेन नाम रे।
क्षत्रीकुलमें ऊपनौ, पुण्य प्रकृति अभिराम रे ॥ १४ ॥ के०
घरे लखमी सम्पति घणी, तिण सवल थयौ दातार रे।
करै पुण्य करतूत यु, सफल थायै अवतार रे ॥१५॥ के०
धन पामी खरचै नहीं, लोभ ना लीधा जे लोक रे।
समयसुंदर कहै तीए, पाम्यौ ते सगलुं फोकरे ॥१६॥ के०

[सर्वगाथा ३४]

दूहा

महासेन हिव एकदा, चाल्यो चतुर सुजाण।
तीरथ ज्ञात्र कर आपणो, जन्म करूं परमांण ॥ १ ॥
सार द्रव्य साथै लीयौ, करसि धरम नौ काम।
अन्यायपुर पाटण गयौ, वंचनामति जिण ठाम ॥ २ ॥
नगरसेठ मूंक्यौ घरे, करस्यै कोड जतन्न।
मुंकी द्रव्य नी गाठडी, माहे पाच रतन्न ॥ ३ ॥
महासेन मूंकी गयौ, आणी मन वेसास।
सेठ गाठ ऊखेल नै, जोता पूगी आस ॥ ४ ॥

ढाल (३) ऊमटि आई वादलो एहनी

लाख लाख ते मोल ना, मन मोहना, नीसर्‌या पाच रतन्न रे।
परमेसर तूठौ मुनै, महा हरषित थयौ मन्न रे ॥ १ ॥ ला०
एक रतन काढी करी, ग्रहणै मूक्यो तेह रे।
लाख द्रव्य लेइ कीया म० ऊंचा आवास गेह रे ॥ २ ॥ ला०
रतन चार राख्या रूडा, म० गुपत पणै घर माहि रे।
महासेन जात्रा करी, म० आयौ अंग उच्छाह रे ॥ ३ ॥ ला०
महासेन कहै सेठि जी, म० थापण आपौ मुझ रे।
सेठि कहै तूं कुण छैं म० हुं तो नोलखु तुझ रे ॥ ४ ॥ ला०
अम्हे तो थापण केहनी म० राखुं नहीं स्युं काम रे।
तू भूलौ आयौ इहा म० सरखौ होस्यै नाम रे ॥ ५ ॥ ला०
महासेन विसासवा म० लागौ सुं कई एह रे।
विटल ठगारा वाणीया म० दीसै छै निसंदेह रे ॥ ६ ॥ ला०
गुपति दीवो ते ओलवै म० परतखि दीधौ आध रे।
क्रय विक्रय करता थका म० लूटै तौ पिण साध रे ॥ ७ ॥ ला०
तोला माना त्राकड़ी म० जुगति कला नै जोर रे।
लूटी ल्यै सहु लोक नै म० चावा चौहटै चोर रे ॥ ८ ॥ ला०
वणक तणी नीवी वड़ी म० वेश्या वड़ौ सवाद रे।
दरसण नौ आधार तूं म० नमोस्तु मिरषावाद रे ॥ ६ ॥ ला०
युं विमास विलखौ थयौ म० ऊठि गयौ महासेन रे।
कहौ केही पर कीजीयै म० राख्या रतन अनेन रे ॥१०॥ ला०

राज सभा गयौ पाधरौ म० पूछूॅ चास नै भास रे।
कुंण नगर कुण राजवी म० केहौ न्याय तपास रे, ॥१२॥ ला०
किण ही कै पूछ्या थका म० विवरे सेती बात रे।
महासेन मन चिंतव्यौ म० समयसुन्दर ते कहात रे ॥१३॥ला०
[सर्व गा० ९०]

ढाल (४) वे बाधव वंदण चल्या एहनी,

अन्यायपुर पाटण इसौ, तेहनो सुणो तमासौ रे,
सरखे सरखु सहु मिल्यु, सुणता आवै हासौ रे ॥१॥ अ०
निर्विचार राजा इहा, सर्वलूटाक तलारो रे,
सर्वगिल मुहतो इहा, प्रधान इहा अनाचारो रे ॥२॥ अ०
अज्ञानराशि गुरु छे तिहा, राजवैद्य जतुकेतो रे।
उषध रस छे एहनै, कुटंब कोलाहल तेतो रे ॥३॥ अ०
नगरसेठ वंचनामती, पुरोहित ते सिलापातो रे,
कपट कोश्या वेश्या सही, घालै ते सहु नै घातो रे ॥४॥ अ०
नगर सरूप जाणी करी, महासेन विमासै रे।
गया रतन ए माहरा, केहनै जइयै पासै रे ॥५॥ अ०
इण अवसर इक डोकरी, राज सभा माहे आवी रे।
रोती रडवडती थकी, छूटे केसे छावी रे ॥६॥ अ०
राजा पास थई करी, ऊंचै साद पुकारी रे।
न्याव करौ राज माहरौ, हुं दुखणी थई भारी रे ॥७॥ अ०
महासेन पणि तिहा गयौ, देखो कुण अन्यायो रे।
कुण तपास राजा करै, पछै करु हु को उपायो रे ॥८॥ अ०

राजा कहै सहु साथ नै, ऊतावल छै केही रे।
लगन को आज लीधौ नहीं, जास्यै किहा नहीं तेही रे ॥३१॥ अ०
सहु जावौ आपणै घरे, भोजन करो भरपूरो रे।
इम कहि राजा ऊठीयो, आज थायै छै असूरो रे ॥३२॥ अ०
महासेन मन चींतवै, दीठौ न्याय तपासौ रे।
रतन गया ए माहरा, समयसुंदर आवै हासो रे ॥३३॥ अ०

[सर्वगाथा ८३]

ढाल (५) वेगवतो तिहा वाभणी, एहनी

इक दिन कपटकोश्या घरे, महसेन गयौ मतवंतो रे।
पाच रतन परपंच नौ, सगलौ कह्यौ विरतंतो रे ॥१॥
उपगारी पिण एहवा, मिलै पुण्य संजोगो रे।
बहुरतना वसुंधरा, सहु सरस्यै नहिं लोगो रे ॥२॥ उ०
कपटकोश्या मन ऊपनी, दया मया कहै एमो रे
वैगा रतन तुझ वालसुं, प्रपच कर जेम तेमो रे ॥३॥ उ०
दिलासा इम देइ नै, आप गई घर माहे रे।
सार रतन सगला लीया, वटुआ माहे हाथ वाहै रे ॥४॥ उ०
वारू वस्त्र विलाति ना, कसतूरी करपूरो रे।
मणि माणक मोती करी, पेई भरी भरपूरो रे ॥५॥ उ०
ऊंट चढी गई पाधरी, वंचनामति आवासो रे।
त्रिणह च्यार साथे सखी, सेठ नै कहै भरी सासो रे ॥६॥ उ०
सेठजी विनती साभलौ, वसंतपुर मुझ वाई रे।
कंठगत प्राण तिका थई, मुझ नै वेग बुलाई रे ॥७॥ उ०

हुँ मिलवा भणी जाऊं छुं, ता सीम तुम्हे राखो रे।
तुम्हा सरीखो को नहीं, बाधव मति ना दाखो रे ॥८॥ उ०
मुझ बहिन जौ ते मुई, तौ हुं साथै बलस्यु रे।
कुण दुख देखै वहन नौ, विरह वियोग टलस्युं रे ॥६॥ उ०
मुझ नै मुई जो साभलौ, खरचज्यो सर्व तिवारै रे।
वचना सेठ मन मानीयौ, ए परी मरै किवारो रे ॥१०॥ उ०
तौ लोबौ फवै मुझ नै, इम जाणी वात मानी रे।
महासेन संकेत थी, आवि ऊभो रह्यो कानी रे ॥११॥ उ०
महासेन माग्या तिहा, रतन पाँच मुझ दीजै रे।
थाप रूप मूंक्या हुता, कच पच काइ न कीजै रे ॥१२॥ उ०
लोभी सेठ विमासीयो, रतन वात छै थोड़ी।
कपट कौश्या पेटी चढ्यै, तो पामु धन कोडी रे ॥१३॥ उ०
रतन पाछा द्युं एहनै, तौ प्रतीत मुझ वाधै रे।
पेटी जास्यै हाथ थी, रतन तणै भेद लाधै रे ॥१॥ उ०
च्यारि रतन काढी दीया, पाचमै नें ते मूक्यों रे।
धनावह सेठ नै घरे, थे तौ ग्रहणै मूक्यो रे ॥१५॥ उ०
सेठ कहै जा पुत्र तू, पाचम रतन दे आणी रे।
महल अडाणौ मूंकि नै, आपणी सूझै कमाणी रे ॥१६॥ उ०
तुरत पुत्र ते तिम कीयौ, रतन आणी नें दीधो रे।
प्रतीति वधारी आपणी, सेठि भलौ काम कीधौ रे ॥१७॥ उ०
वधामणी रे वधामणी, आपज्यो माता अम्हनै रे।
समाधि थई छै बहिन नैं, माणस मूक्यो तुम्हनै रे ॥१८॥ उ०
वहिन तुम्हे मत आवेज्यो, हुँ तुझ मलवा आइस रे।

राजा पूछै का रूअै, कहि ताहरु दुख भाजु रे।
न्याय तपास करु नहीं, हो हु लोक मे लाजु रे ॥६॥ अ०
सुण राजन कहै डोकरी, हुँ, वसु ताहरै गामो रे।
वेढ राढ न करु कदे, ल्यु नही केहनो नामो रे ॥१०॥ अ०
अहो अहो राजा कहै, डोकरी केहवी सुशीलो रे।
साध माणस मसकीन छै, एहनी करवी सबीलो रे ॥११॥ अ०
डोकरी कहै दुख आपणो, हुँ छु चोर नी माता रे।
ते चोरी करे गाम में, बडो चोर विख्याता रे ॥१२॥ अ०
आज चोरी करवा गयो, देवदत्त घर पैठो रे।
खात्र देवा नी खात सु, भींत हेठ जई वैठो रे ॥१३॥ अ०
भींति हुँती ते जाजरी, ऊपर पडी ते वासे रे।
मूओ पुत्र ते माहरो, इवडी वात को सासे रे ॥१४॥ अ०
एक हीज वेटो हुतो, एहनो दुख अपारो रे।
किम जीवु किम पर टवु, हिव मुझ कोण आधारो रे ॥१५॥ अ०
कहै राजा सुण डोकरी, हुँ तुझ दुख गमेसु रे।
तुझ नहीं दोस तु जा घरे, देवदत्त नै दड देसु रे ॥१६॥ अ०
माणस मूंकी तेडावियो, देवदत्त तिहा आयो रे।
राजा रीस करी घणी, देवदत्त डरपायो रे ॥१७॥ अ०
भींत करावी का जाजरी, जाण्यु नहीं चोर मरस्यै रे।
आ हिव बापडी डोकरी, कहो केही पर करस्यै रे ॥१८॥ अ०
देवदत्त चित्त चींतवै, माथा थी हु उतारु रे।
कहै राजन तुम्हे साभलो, दूपण को नही अम्हारु रे ॥१६॥ अ०

सूत्रधार जाणै सहू, भूंडी का भींति कीधी रे।
अम्हे तौ मजूरी आपणी, पूरी भरनै दीधी रे ॥२०॥ अ०
सूत्रधार कहै साभलौ, भींत भली पर करता रे।
दोरी देई बिहुं दिसै, थर ऊपर थर धरता रे ॥२१॥ अ०
सोल श्रृंगार सजी करी, देवदत्त नी बेटी रे।
अम्हा पास ऊभी रही, मल्हपती माती बेटी रे ॥२२॥ अ०
चंचल दृष्टि गई पिहा, सिथल आव्यौ इंट बंधौ रे।
आवी का नारी इहा, किसौ दोप कामधो रे ॥२३॥ अ०
ते कहै हुं आवी इहा, राज मारग नै भाजी रे।
परव्राजक नागौ मिल्यौ, ते देखी हुं लाजी रे ॥२४॥ अ०
परव्राजक तेडी कह्यो, का इण मारग आयो रे।
नगन कहै हुं स्यु करु, घोडौ जमाई द्रौड़ायौ रे ॥२५॥ अ०
तुरत जमाई तेडीयौ, का तू घोडौ द्रौडावै रे।
जाण्यौ जमाई माहरै, माथै तो हिव आवै रे ॥२६॥ अ०
इण सगले टलती करी, हुं पिण बुद्धि उपावु रे।
राजन करम विधातरा, तिण मूक्यौ तौ आवु रे ॥२७॥ अ०
रीस करी राजा कहै, भो भो मंत्रि प्रधानो रे।
वेगी आणो विधातरा, ए करै का तोफानो रे ॥२८॥ अ०
हुं अपराध सासु नहीं, गुदरु नहीं हुं केहथी रे।
मंत्र प्रधान धूरत कहै, गई नासी ते गेहथी रे ॥२९ अ०
तेज प्रताप तुम आकरौ. तो थी थरहर धूजे रे।
माणस सगले मूकीया, खबर हुस्यै दिन दूजे रे ॥३०॥ अ०

इम कहि माणस मोकल्यौ, पथ मे तूं दुख पाइस रे ॥१६॥
कपट कोश्या हरखित थकी, पाछी लीधी पेई रे।
सेठ साम्हो जोई रह्यो, नाची फरगट देई रे ॥२०॥ व०

महसेन पिण नाच्यौ तिहा, वचनामति पण नाच्यौ रे।
लोके पूछ्यौ कहौ तुम्हें, कुण कहै हेत राच्यौ रे ॥२१॥

बहिन जीवी वेश्या कहै, आणद अग न माया रे।
महासेन कहै माहरा, गया रतन मै पाया रे ॥२२॥ उ०

सेठ कहै सहु साभलौ, जग सगलौ आज ताइ रे।
मै वंच्यौ पणि मुझ नैं, वंच्यौ नहि किण काइ रे ॥२३॥ उ०

कपटकोश्या वंच्यौ मुनैं, रतन पाच लेवाव्या रे।
मदिर ग्रहणै सूंकि नै, भामिनी भीख मगाव्या रे ॥२४॥ उ०

लोक माहे सेठ लाजीयौ, सगले फिट-फिट कीधो रे।
वैरागे मन वालीयो, तिण तापस नो व्रत लीधौ रे ॥२५॥ उ०

कपटकोश्या वेश्या थकी, लोक माहि स्याबाश लीधी रे।
पर उपगार कीधौ भलौ, महासेन स्युं ए कीधी रे ॥२६॥

महासेन धन माल ले, तिहां थी चाल्यौ वहतौ रे।
कुशल खेम कल्याण सुं, पोतानैं गामे पहुंतो रे ॥२७॥ उ०

महासेन महारिद्ध सुं, सुखी थकौ रहै तेथो रे।
समयसुन्दर कहै साभलौ, पूरव पुण्य छे एथो रे ॥२८॥ उ०

[सर्वगाथा १११]

ढाल (६) ईडर आबा आबिली, एहनी ।

तिण देसै हिव एकदा रे, पापी पड्यौ दुकालि ।
बार वरस सीम बापडा रे, सीधा लोक कराल ॥१॥

वलि मत पडज्यो एहवो दुकाल, जिणै विछोड्या मा बाप बाल ।
जिणै भागा सबल भूपाल ॥ व० ॥ आकणी ॥

खाता अन्न खूटी गया रे, कीजै कोण प्रकार ।
भूख सगी नहीं केहनी रे, पेट करै पोकार ॥२॥ व०
सगपण तौ गिणै को नहीं रे, मित्राई गई मूल ।
को कदाचि मागे कदी रे, तौ माथै चढै त्रिसूल ॥३॥ व०
मान मूकि वड़े माणसे रे, मागवा माँडी भीख ।
ते आपे पिण को नहीं रे, दुखीए लीधी दीख ॥४॥ व०
केई बईयर मूकी गया रे, के मूकी गया बाल ।
के वाप माँ मूकी गया रे, कुण पड़ै जंजाल ॥५॥ व०
परदेशे गया पाधरा रे, साभल्या जेथ सुकाल ।
माणस बल विण मूआ रे, मारग मांहि विचाल ॥६॥ व०
बापे वेटा वेचीया रे, माटी वेची बयर ।
बयरे माटी मूकीया रे, अन्न न द्यै ए वयर ॥७॥ व०
गोखै वैठी गोरडी रे वींजणै ढोलती वाय ।
पेट नै काजै पदमणी रे, जाचै घर घर जाय ॥८॥ व०
जे पंचामृत जीमता रे, खाता द्राख अखोड ।
काटी खायें खोरडी रे, के खेजड ना छोड़ ॥९॥ व०

जतीया नै देई जीमता रे, ऊभा रहता आड ।
ते तौ भाव तिहा रह्या रे, जीमता जडै किमाड ॥१०॥ व०
दान न द्यै के दीपता रे, सहु वैठा सत छाड ।
भीख न द्यै को भाव सु रे, द्यै तौ दुक्ख दिखाड़ ॥११॥ व०
देव न पूजै देहरै रे, पड़िकमै नही पोसाल ।
सिथल थया श्रावक सहू रे, जती पड्यउ जंजाल ॥१२॥ व०
रडवडता गलीए मूआ रे, मड़ा पड्या रह्या ठाम ।
गलीया माहे थई गंदगी रे, द्यै कुण नाखण दाम ॥१३॥ व०
संवत् सोल सत्यासीयौ रे, ते दीठै ए दीठ ।
हिव परमेसर एहनौ रे, अलगो करै अदीठ ॥१४॥ व०
हाहाकार सवल हूऔ रे, दीसै न को दातार ।
तिण वेला ऊठ्यो तिहा रे, करवा कल उद्धार ॥१५॥ व०
अवसर देखी दीजियै रे, कीजै पर उपगार ।
लखमी नौ लाहो लीजीयै रे, समयसुन्दर कहै सार ॥१६॥ व०
[सवगाथा १२७]

ढाल (७) मनडु रे ऊमाह्यौ मिलवा पुत्र नै रे, एहनी

महासेन मन मोटौ कियौ रे, मेरु तणी पर धन्न रे ।
करु लखमी सुकयारथी रे, आपु परघल अन्न रे ॥१॥ म०
रतन पांच वेची दीया रे, वीजा वदरा खोल रे ।
धान तणा संग्रह कीया रे, मुंहगै सुंहगै मोल रे ॥२॥ म०
सत्त्कार मंडावीया रे, ठाम ठाम तिण ठाम रे ।
जासक सहू जीमाडीयै रे, केवल धरम नै काम रे ॥३॥ म०

अभिमानी नर एहवा रे, मरैं न माडै हाथ रे।
तेहनै पिण छानौ दियौ रे, आपणा माणस हाथ रे ॥४॥ म०
आठ पहुर उद्घोषणा रे, दीजै नगर मझार रे।
अन्न पाणी आवी इहा रे, सहु ल्यौ सत्रूकार रे ॥५॥ म०
माड्या मोटा माडवा रे, कीधी टाढी छाह रे।
सहु को इहा वैसौ सूऔ रे, जिहा मन मानै ताह रे ॥६॥ म०
वैद्य वैसास्या आपणा रे, करै चिकित्सा तेह रे।
पग हाथ माथौ प्रमुख सहू रे, दुखती राखै देह रे ॥७॥ म०
इण अवसर इक डोकरी रे, आवी सत्तूकार रे।
अन्न विना सोजौ वल्यौ रे, वाध्यौ रोग विकार रे ॥८॥ म०
खाधौ पीधौ तेहनौ रे, जरयै नहीं लिगार रे।
महासेन नै ऊपनी रे, करुणा चित्त मझार रे ॥६॥ म०
ते तेड़ी घर आपणै रे, वैद्य बोलाव्या वेग रे।
सार सश्रूषा साचवै रे, टाल्यौ रोग उदेग रे ॥१०॥ म०
महासेन घर भारजा रे, उत्तम शील आचार रे।
नांमैं ते गुणसुन्दरी रे, ते पिण अति दातार रे ॥११॥ म०
दीन हीन दुखिया भणी रे, भोजन द्यै भरपूर रे।
सार सश्रूषा पिण करै रे, पूरै लूण कपूर रे ॥१२॥ म०
पोताने हाथे प्रीसन्नो रे, पोतानै हाथे पान रे।
पोतै आपै प्रेमसु रे, सहु नै अढलक दान रे ॥१३॥ म०
महासेन क्षत्री दीयौ रे, इम अनुकम्पा दान रे।
सगला लोक सुखी थया रे, वाध्यो वसुधा मान रे ॥१४॥ म०

बार वरस बैठौ रह्यो रे, दुरभक्ष ए दुकाल रे।
माग्या मेह वूठा वली रे, दुं दुं थयो सुगाल रे ॥१५॥ म०
महासेन देई संवलौ रे, दे वली वागा वेस रे।
सप्रेड्या सहु लोक नै रे, आप आपनै देश रे ॥ १६ ॥ म०
कुटंब रह्यौ ते जीवतौ रे, ते सहु को मिल्यो आव रे।
धरम ध्यान सहु साभस्या रे, पुण्य तणै परभाव रे ॥ १७ ॥ म०
इम अनुकपा दान द्यै रे, महासेन नी पर जेह।
समयसुन्दर कहै ते लहै रे, राजनै रिद्धि अछेह रे ॥ १८ ॥ म०
[सर्वगाथा १४४]

ढाल (८) धन्यासो, सुणि बहिनी पिउडो परदेसी।

केवली पूरव भव कहै, ते साभलज्यो सहु कोई रे।
ए अनुकंपा दान थी, ते चंपक नी परि होई रे ॥ १ ॥ के०
अनुकंपा दान थी थयौ, तूं चंपक सेठ समृद्धो रे।
गुणसु दरी त्रिलोत्तमा, तुझ, भारजा थई समृद्धो रे ॥ २ ॥ के०
दुकाल माहे डोकरी, जेहनै तें पांली पोसी रे।
उजेणी ते ऊपनी, जेणे तुनें पाल्यो डोसी रे ॥ ३ ॥ के०
वचनामति सेठ जे हुतौ, ते तापस व्रत लेई रे।
वृद्धदत्त थयौ वाणियौ, जे तुझ भणी दुख देई रे ॥ ४ ॥ के०
वंचनामति पाछलै भवै, तुझ रतन हस्या लोभ लाई रे।
छिन्नु कोडि सोना तणी, ए तिण कारण तै पाई रे ॥ ५ ॥ के०

तैं वंचनामति सेठि नै, अपभ्राजना नुं दुख दीधौ रे।
त्रिण्ह वार तिण तो भणी, मूल मारण नुं मन कीधौ रे ॥६॥ के०

महासेन क्षत्री भवै, तैं चपक कुल-मद कीधौ रे।
दासी कूख तु ऊपनौ, सहु क्रतूत लहीजै सीधौ रे ॥ ७ ॥ के०

केवली वचन सुणी करी, चंपक सेठ तौ प्रतिवुद्धो रे।
वैरागे मन वालीयौ, हुं लेइस सयम सुद्धो रे ॥ ८ ॥ के०

राग द्वेष रूड़ा नहीं रे, कड़ुआ वलि करम विपाको रे।
विपय सुख विष सरखा वली, विरुआ जेहवा आको रे ।९। के०

आडंवर मोटै करी, चंपक सेठै चारित लीधो रे।
त्रिलोत्तमा साथै थई, सती नारि नो ए ध्रम सीधौ रे ॥१०॥ के०

चढते परणामे करी, संयम सूधी परि पाली रे।
आराधना अणसण करी, दूषण लागा ते टाली रे ॥ ११ ॥ के०

देवलोक थया देवता, तिहा परमाणंद सुख पावै रे।
बत्तीस वद्ध नाटिक पडै, आगै अपछर ते गावै रे ॥ १२ ॥ के०

देवलोक ते चवी इण, महाविदेह में आस्यै रे।
संसार ना सुख भोगवी, जती थई मोक्ष जास्यै रे ॥ १३ ॥ के०

अनुकंपा ऊपर कह्यो, चपक सेठि नौ दृष्टातो रे।
अनुकपा सहु आदरौ, एहथी छै सुगति एकातो रे ॥ १४ ॥ के०

संवत सोल पंचाणूअै, मैं ज़ालोर माहे जोड़ी रे।
चपक सेठ नी चौपाई, अंग आलस ऊंघ छोड़ी रे ॥ १५ ॥ के०

श्री खरतरगच्छ राजीयौ, श्री युगप्रधान जिनचंदो रे।
प्रथम शिष्य श्रीपूज ना, श्री सकलचंद मुणिंदो रे ॥ १६ ॥ के०

समयसुन्दर शिष्य तेहना, तिण चौपई कीधी एहो रे।
शिष्य तणै आग्रह करी, जे ऊपर अधिक सनेहो रे ॥ १७ ॥ के०

नर नारी रसिया हुस्यै, ते साभलस्यै सदा आवी रे।
सुघड़ सुकंठी वे जणा, वाचज्यो भली वात वणावी रे ॥१८॥के०

इति द्वितीय खण्डोपि अनुकम्पा विपये समाप्तः सर्व गाथा १६२,
प्रथम खण्डे गाथा ३४४, द्वितीय खंडे १६२
द्वयोर्मीलने ५०६ ग्रन्थाग्रन्थ श्लोक ७००
संख्या इति चंपकसेठ चौपई संपूर्णाः।
संवत १७९४ वैशाख सुदी १३
श्री फलवद्धीपुरे।

प्रति नं० ४२६६ (व० ८९) श्री अभय जैन ग्रन्थालय,
पत्र १० प्रति पत्रे पक्ति १७ प्रति पक्ति अक्षर ६०

श्री समयसुन्दरोपाध्यायकृत-

व्यवहार-शुद्ध विषये धनदत्त श्रेष्ठि चउपई

(दोहा)

शातिनाथ जिन सोलमउ, प्रणमुं तेहना पाय ।
व्यवहार सुद्ध ऊपरि कहुँ, चउपई चित्त लगाय ॥ १ ॥
भगवंत भाखै भो भविक, मोटउ साध नउ धर्म ।
जेहथी मुगति जाइयइ, सासता लहियै शर्म्म ॥ २ ॥
दीसै ते अति दोहिलउ, सूर वीर करइ कोय ।
श्रावक नउं धर्म सोहिलउ, देवलोक सुख देय ॥ ३ ॥
श्रावक ना व्रत तउ पलइ, जउं हुवइ गुण इकवीस ।
नाम तुम्हे ते साभलउ, वारू विश्वा बीस ॥ ४ ॥
विणज करंतउ वाणियउ, ओछुं नापइ टाक ।
अधिकउ पिण ते ल्यइ नहीं, मन में नाणै साक ॥ ५ ॥
सखर वस्त न कहइ निखर, निखर सखर न कहेय ।
जिण वेला देवउं कह्यौ, तिण वेला ते देय ॥ ६ ॥
झूठुं कदि बोलइ नहीं, साचु कहै नितमेव ।
पहिलु व्यवहार सुद्ध गुण, इम कह्यौ अरिहंत देव ॥ ७ ॥
पाचे इन्द्री पखड़उ, ए बीजउ गुण लीय ।
प्रकृति शात तीजउ कह्यउ, चौथउ लोका प्रीय ॥ ८ ॥

वंचना रहित ते पाचमउ, अक्रूर नाम कहाय।
पाप थकी डरतउ रहइ, छट्ठउ आवइ दाय ॥ ६ ॥
माया न करइं सातमउ, आठमउ करिइ उपगार।
नवमउ वालै कुकरमथी, दसमउ दया अपार ॥ १० ॥
रागन रोस इग्यारमउं, मध्यस्थ रहै महात।
वहु गुण वालउं बारमउ. दरसण पणि सात दांत ॥ ११ ॥
गुण रागी गुण तेरमउ, संत कथ चउदस सुद्र।
सोभन पक्ष तेहीज कहयौ, कुलनइ वंस विसुद्ध ॥ १२ ॥
दीरघ दरसी पनरमउ, सोलमउं लहैं विशेष।
वृद्ध वुद्ध वासइं वहै, सतरम गुण छें एष ॥ १३ ॥
विनइ करइ ते अठारमउं, मा वाप गुरू नो जेह।
उपगार जाणे इण कीयउं, गुणीसमउं गुण एह ॥ १४ ॥
परहितकारी वीसमउं, अगित नैं आकार।
लब्ध लक्षै इकवीसमउं, ए एकवीस गुणसार ॥ १५ ॥

ढाल—(१) चउपई नी

एकवीस माहे व्यवहार वड़उं, पुण्य क्रतूत माहे परगड़उ।
व्यवहार पाखइं सगलउ फोक, वाल गोपाल कहै सहुलोक ॥१॥
पहिरण विण माथै पागड़ी, इंढोणी विण माथै घड़ी।
राग विना अम्मारति किसी, जाते वाहडे जायै खिसी ॥२॥
चेलाली माथइ वेहड़उं, निरगुण नाह किसउ नेहड़उ।
गाम नहीं तउ किहा थी सीम, ठांढ़ि नहीं तउ किहा थी हीम ॥३॥
व्यवहार सुद्ध विना नहिं सोभ, भागउं माणस किहा लहै थोभ।

सील विना सोभा किहा थकी, दाम्कि विना धूम न करइ सकी।।४।।
वइंरि नहीं तउ वेटउ किहां, धरम विना सुख नहीं जिहा।
गरथ विना किम मांडै हाट, गुरु विण कुण देखाड़ै वाट ।। ५।।
व्यवहार सुद्धि आका जिम भली, बीजा गुण मींडी एकली।
व्यवहार सुद्धि तउ सहु गुण भला, व्यवहार विण सगला निःफला ।६
दान तणा दीसै दातार, सील वरत पण ल्यइं सुविचार।
तपसी पिण दीसै छै कोय, विण व्यवहार केथे किण होय ।।७।।
साधनइ वोलउं सुद्ध आहार, श्रावक नइं वोलउं व्यवहार।
ए वेऊं करता दीसै भला, परभव पिण थायइ सोहिला ।। ८ ।।
व्यवहार शुद्ध पण दोहिलउं, सूर वीर तेहनइ सोहिलउं।
पहिली ढाल कही मइं लहू, समयसुदर कहै वात छइ बहू ।।९।।
[सर्व गाथा २४]

ढाल (२) तिमरी पासे वडलु गाम, एहनी

जबुदीप भरतक्षेत्र सार, नगरी अयोध्या नाम उदार।
राज करइ तिहा उग्रसेनराय, दोस नगरहि न्याय कहाय ।। १।।
पदमावती नामइं पटरानी, भरतार भगत दातार वखाणी।
सुबुद्धि नामइ मुहतउ मतिमत, सामि भगत राज-काज करत ।२।
धनदेव नउ पुत्र धनदत्त नाम, व्यवहारीयउ वसै तिण हीज ठाम
वाल पणइ मूया माय नइं बाप, प्रगट थयउ पूरवलउं पाप ।।३।।
बाप तणउ द्रव्य वइठउ खाय, अकज अधम नउ सहज कहाय।
आठ वरस नउं थयउ धनदत्त, शास्त्र भणइं न्याय नीति
नउ नित्त ।।४ ।।

ध्रमघोषसूरि तिहा एकदा आव्या, भव्य हुंता तेहनइ मनि भाव्या।
वादण काजि गया नर नारी, कर जोड़ि कहइ तुं तारि हो तारि ॥ ५ ॥
धनदत्त पिण आवी तिहा बइठउ, दरसणि लोयणु अमीय पयट्ठउ
साधइ देसणा दीधी एम, साभलता उपजइ अति प्रेम ॥ ६ ॥
दसे दृष्टाते नर भव लाधउ, घर धंधइ ते गमाडयूउ आधउ।
निफल जनम जायइं ध्रम पाखइ, दुरगति पडता कहउं कुण राखइं ॥ ७ ॥
राज नइ रिद्धि छती थकी छोडि• कुटुव अतेउर द्रव्य नी कोड़ि।
धन्य तिकौ जिण संयम लीधउ, तेह तणउ आत्मार्थ सीधउ ।८
एक माणस पड्या देखइ दुख, संसार नउ पणि नहिं को सुख।
तिरणा ना झूपड़ा ना गेह, नउलिया कोल आकुल कीआ जेह ॥६॥
अन्न नहीं घरे जीमण वेला, माणस मांहो माहि अमेला।
वईअरि ते पणि वागड वोली, काली कुछित गालि द्यइ गोली ॥१०॥
हाडी कुंडी ते पणि चोपी, वइसण ऊठण धरती अचोखी।
पहिरण ओढण फाटा त्रूटा, प्रवहण खरते काने वुटा ॥ ११ ॥
गृहस्थपणइ रहइ दुखिआ एहवा, पणि दीक्षा न ल्यइ ते पणि एहवा।
पणि संयम माहे घणा सुक्ख, जउ रहइ परिणामे कर लुक्ख ॥१२॥
वईर नी पणि नहीं का गालि, कुटुम्ब तणी पण नही काई दुआल।
प्रणमे मोटा राजवी पाय, परभवि सासता सुख थाय ॥ १३ ॥

साधजी दीधउ ए उपदेश, पाप तणउ नहीं तिहा लवलेश।
समयसुंदर कहै ढाल ए वीजी, साभलता सहु को करउ जी जी
॥ १४ ॥ [सर्वगाथा ३८]

ढाल - (३) कुमरी बोलावइ कूबड़उ।

कहै धनदत्त सामी साभलउ, तुम्हे कह्यउ साचउं धर्म्मों रे।
पण तउ ते मइ पलइ नहीं, हुं छ भारी कर्म्मों रे॥ १ ॥
संजम मारग दोहिलउ, कायर नउ नहिं कामो रे।
सूरवीर पालइ तिके, नित लीजइ तसु नामो रे॥ २ ॥ सं० ॥
पंच मेरु ऊपाड़िवा, माथा ऊपरि भारो रे।
माथइ लोच कराविवउ, स्नान न करिवउ किवारो रे ॥३॥ सं०॥
भूमि संथारउ सूयवउ, उसीसइ दे वाहो रे।
राति दिवस रहिवउं वली, गुरुनी शिक्षा माहो रे ॥४॥ स०॥
घरि घरि भिक्षा मागवी, सूझतउ लेवउं आहारो रे।
लोक देखता करिवउ नहीं, आहार नइ नीहारो रे ॥ ५ ॥ सं०॥
बावीस परीसा बोलीया, ते सहिवा निस दीसो रे।
लोक ना कुवचन साभलइ, पणि करवी नहीं रीसो रे ॥६॥ सं०॥
राधावेध नी पूतली, वींधवी एकणि बाणो रे।
खडग धार ऊपरि खरउ, चालेवो पगे अलवाणो रे ॥७॥ सं०॥
त्राकडीयै मेरु तोलिवउ, आगि उल्हावणी पायो रे।
गंगा नदी साम्हे पगे, कहउ किण परि पहुचायो रे ॥ ८ ॥ सं०॥
तप जप किरिआ करी, परिग्रह नहीं लवलेसो रे।
एक ठामि रहिवउ नहीं, भविवउ देस प्रदेसो रे ॥ ६ ॥ सं०॥

बीजउ मइ क्य पलइ नहीं, हुं पालिसि व्यवहार सुद्धो रे।
सावासि समयसुदर कहै, धनदत्त साह प्रतिवुद्धो रे ॥१०॥सं०॥
[सर्वगाथा ४८]

दूहा

तू धन तू कृत-पुण्य तु, साध कहै, धनदत्त।
पिण रूडी परि पालजे, निश्चल करि निज चित्त ॥ १ ॥
व्यवहार शुद्ध पणु ग्रही, आव्यउ आपणे गेह।
भलउ कीयउ कहै भारिजा, पिण दुकर छइ एह ॥ २ ॥
व्यापार माड्यउ वाणियैं, सगलउ बोलै साच।
वाड- कहै तंत पाडि नै, न वदै बीजी वाच ॥ ३ ॥
साचा तोला त्राकनी, साचा गज श्रीकार।
ओछुं नहिं द्यै आपणु, अधिकउ न ल्यै लिगार ॥ ४ ॥
साच ऊपरि राचै सही, लोक हठी कहै एह।
विणज व्यापार माठउ पड्यउ, द्रव्य नो आव्यो छेह ॥५॥
महुलति पूगी वाणियै आवी मागइ दाम।
घर माहे देवा नहीं, चितातुर थयउ ताम। ॥ ६ ॥
तेहवइं बोली भारिजा, सामी सासउं वात।
धन तूटा लागै खरच, किम गमिस्या दिन रात ॥ ७ ॥
घर धंधा दुख पालणा, सायर कूखि समाण।
एकणि रात्रे नीसर्या, गाहा पंच सयाण ॥ ८ ॥
रूडं करता पाडुयउ, थाइय कलियुगि तेह।
पणि धरमंइ जइं भेटि छै, अहि राखइ नर जेह ॥ ९ ॥

साच कह्यउ तइं सुदरी, पिण हिव करिस्या केम ।
सुंस न भाजु सर्वथा, मागरण रउ मुझ नेम ॥ १० ॥
परदेसि चालसि पाधरउ, दरियइ चढिसि हु देखि ।
लखमी तिहा लहियै घणी, वारू भाग्य विशेपि ॥ ११ ॥
बईरि बोली चालता, साभलिज्यो भरतार ।
हुं बैठी शील पालिसुं, तुं पाले व्यवहार ॥१२॥ [सर्व गा० ६०]

ढाल—(४) हिव करकडू आवियउ जी, एहनी ।

साथ संघातीय ओ चालीयउ जी, आव्यउ गाम विचाल ।
पूछ्यौ को छै इहा भलउजी, व्यवहार नउ प्रतिपाल रे ॥ १ ॥
दोहिलउ दीसइ व्यवहार सुद्धि ।
विवहार शुद्धि विना कह्यउ जी, श्रावक धरम अशुद्ध रे ॥ २ ॥
गाम तणा लोकै इम कहैजी, इहा छै घणा दातार ।
शीलवंत पिण छै घणा जी, साच बोला साहूकार रे ॥३॥ दो०
तप करइ तपणि छै घणा जी, भावना भावइति केइ ।
पणि व्यवहार पालइं जिके जी, जाण्या नहीं इक वेय रे ॥४॥
तूं किम पूछै तेहनै जी, ते कहै मुझ छै काम ।
वाणउत्तर हुं जउ तेहनउ जी, तउ मुझ भ्रम पडै ठाम रे ॥४॥ दो०
किण ही कह्यउ इक वाणियउ जी, व्यवहार शुद्ध छइ एथि ।
धनदत्त जाय मिल्यउ तेहनइ जी वाणउत्त थई रह्यउ तेथि रे ॥५॥
गाय भइंसि घणी तेहनइ जी, वाहरि चरिवा जाय ।
पारका खेत मइं पइसि नइं जी, फल्या फूल्या धान खाय रे ॥६॥
करसणी आवी कूकीया जी, स्या भणी धण चारेसि ।

सेठ कहै गोवालियो जी, तेड़ी नइ वारेसि रे ॥ ७ ॥ दो०॥
पण मन स्यउ वारइ नहीं जी, स्वारथ वाल्हउ होय ।
दूध दही घी हुवइ घणा जी, कुटुंव जाणइ सहु कोय रे ॥८॥ दो०।
धनदत्त चित्त विमासियउ जी, नहीं इहा व्यवहार शुद्ध ।
सेठ छोडी नइ साचरयउ जी, इहा तउ धरम अशुद्ध रे ॥६॥ दो०
वलि बीजै गामि मइ गयो जी, श्राविका सांभली तेथि ।
तेहनइ वाणउत्त जई रह्यउ जी, धन नहीं जाउं केथि रे ॥१०॥
तेहनइ माल घणउ घरे जी, करइ वलि वणिज व्यापार ।
घर नउ लेखउ तेहनइ जी, सूंप्यउ तूं करे सार रे ॥ १ ॥ दो०॥
ते बाई अति लोभणी जी, वलि नहिं पुत्री पुत्र ।
राति काति अरहटीयै जी, पा सेर अधपाव सूत्र रे ॥१२॥ दो०।
पडोसी नी मैडीयै जी, दीवउ रहइ निस सेज ।
जारी चादरणउ पड़इ जी, ते कातै तिण तेज रे ॥१३॥ दो० ।
धनदत्त कहै हुं नहीं रहुँ जी, ताहरइ नही व्यवहार ।
दूध मे पुरा तू जोवइ जी, कहै बाई वार-वार रे ॥४॥ दो० ।
कात्या नुं जे ऊपजइ जी, तेहनुं सालणुं थाय ।
सहु को जीमै ते सदा जी, खाति सुं सहु को खाय ॥१५॥ दो० ।
महीनौ लेइ नै नीसर्यउ जी, जइ मिल्यउ मूलगै साथि ।
विणज व्यापार सहु करइ जी, धन नहीं धनदत्त हाथि ॥१६॥
दिन केतला एक तिहा रह्या जी, वस्तु वाना वेचि साटि ।
साथ सहू परवारियउजी, वखत सारू धन खाटि रे ॥१७॥ दो० ।
मित्र कह्युं धनदत्त नइ जी, चालि तुं आपणइ देसि ।

धनदत्त कहइ धन मइं इहा जी, खाटयुं नहीं लवलेस ॥१८॥ दो०
पुत्र शिष्य सरिखा कह्या जी, रिप नइ देवता जेम।
मूरख तिरयच सारिखा जी, मुआ दालिद्री तेम रे॥ १६ ॥ दो०।

यत .—

जसु घरि वहिल न दीसइ गाडउ,
जसु घरि भइंसि न रीकै पाडउ
जसु घरि नारि न चूडउ खलकइं,
तसु घरि दालिद लहरे लहकइ ॥१॥

पुन. लोक वाक्य यथा .—

दोकडा वाल्हा रे दोकडा वाल्हा,
दोकड़े रोता रहइं छै काल्हा ।१।दो०।
दोकड़े ताल मादल भला वाजइ,
दोकडे जिनवर ना गुण गाजइ ।२।दो०।
दोकडे लाडी हाथ वे जोड़इ,
दोकड़ा पाखइ करडका मोड़इ ।३।दो०।

जउ हिवणा नावी सकइ जी, तउ पणि काह एक मू कि।
बईरि वाटि जोती हुस्यइजी, अवसर थी तूंम चूकि रे ।२०।दो०।
सु मूकु मित्र माहरइ जी, छोहडै नही काई वित्त।
मित्र कहइ हितुयउ थकउजी, साभलि तुं धनदत्त रे ।२१।दो०।
सखर बीजोरा इहा घणा जी, सुंहगा मोला सोय।
तपति छमासी ते गमइ जी, अति मीठा वलि होय रे ।२२।दो०।
मित्र मानी वात ताहरी जी, ल्यइ बीजोरा डालि।
तउ जाइनै भेटण करे जी, करंडिया मांहे घालि रे ।२३।दो०।

साथ सहू को चालियउ जी, ते पिण चाल्यउ मित्र।
धनदत्त ते तउ तिहा रह्यउ जी, करम नी वात विचित्र रे।२४।दो०।
ढाल ए चउथी भणी जी, व्यवहार सुद्ध नी वात।
समयसुंदर कहै साभलउ जी, एह सखर अवदात।२५।दो०।
[सर्व गा० ८५]

दूहा

प्रवहण तिहा थी चालियउ, सहु को चाल्यउ साथ।
धनदत्त साह तिहां रह्यउ, आथि न आवी हाथ॥१॥
प्रवहण कुसले आवियउ, किणही गाम निजीक।
साथ सहू को ऊतर्यउ, नर तिहां रहै निरभीक॥२॥
[सर्व गाथा ८७]

ढाल (५) जाति परिआनी

तिण अवसरि तिण नगर मइ, वाजइ ढंढेरा ढोल रे।
राजा ना आदमी, वोलइ वलि एहवा वोल रे।१।
बीजोरउ केहनइ हुय, तउ देज्यो नर नारि रे।
पर द्वीप नउ ऊपनउ, अति शीतल सुखकारि रे।२।वी०।
राजा तणउ पुत्र रोगीयउ, ऊपनउ दाघ ज्वर डील रे।
राजवैद्य वोलाविया, करउ औषध म करउ ढील रे।३।वी०।
दाय उपाय किया घणा, पणि शरीर समाधि न थाय रे।
वेदना सवली थई, जीवत हाथ माहि जाव रे।४।वी०।
वैद्य ऊभ्या हाथ झाटकी, कहइ मरतउ न राखइ कोय रे।
पणि एक उपाय छइ, परदेसी बीजोरउ होय रे।५।वी०।

राजा ढंढेरउ फेरनइ, कहइ जउ को बीजोरउ देय।
तउ हूँ आपुं तेहनइ, आपणइ मुंहड़इ जे कहेय रे।६।बी०।
नगर माहि पाम्यउ नहीं, साथ माहि पड़हउ संभलाव्यउ।
पर दीप थी आविया, कदाचि कोयक ते ल्याव्यउ रे॥७॥बी०।
धनदत्त नइ मित्र साभली, ढंढेरउ छव्यउ निज हाथि रे।
बीजोरउ ले गयउ, राजा ना पुरषा साथि रे।८।बी०।
कुमर नइ ते व्यवरावियउ, अति शीतल नइ सुसवाद रे।
दाध ज्वर ऊतर्‌यउ ओ, ऊपनउ राजा नइं आल्हाद रे।६।बी०।
करंडीयउं ले काठउ भर्‌यउ, मणि माणक कनक उदार रे।
मान्यउं घणउं मित्र नइ, कह्यौ तइं कीधउ उपगार रे।१०।बी०।
साथ नै दाण मुंकी दीयउ, साचउ ध्रम नउ संबंध रे।
सुखीयउ मूणइ साथ नै, न कीजइ तेहनउ प्रतिबंध रे।११।बी०।
ते साथ तिहां थी चालीयउ, आयउ वही आपणइ गामि रे।
समयसुंदर इम कहइ, पुण्य थी सीझै सहु काम रे॥१२॥बी०।

[सर्व गाथा ६६]

ढाल (६) राग-गौडी, मनड़ुं रे ऊमाह्यउमिलवा पुत्र नइ एहनी

साथ सहू घर आवियउ जी, कुसले खेमे संघाति रे।
धनदत्त एक न आवियउ जी, भारिजा नै थइ भ्राति रे।१।
नाहलियउ नाव्यउ रे नारी दुख करइ, नयणड़े नीर वहंत रे।
अबला जोवइ रे ऊभी बारणै, पिउ तणी बात पूछंत रे।२।ना०।
सेठ वाणउत्र सहु आविया, आव्या व्यापारी लोक रे।
आंडोसी पाडोसी सहु आविया, कंत बिना सहु फोक रे।३।ना०

बाप नै बेटा मिल्या सहु, वलि मिल्या स्त्री भरतार रे।
जेहनइ पुण्य पोतइ हुतउ, तेहनइ तूठउ करतार रे।४।ना०।
तिण समइ मित्र उतावला, वंदडि आवि नइ दीध रे।
कुसल छइ एह संभारणी, विगति सुं बात न कीध रे।५।ना०।
प्रीति पामी लेइ करंडीयउ, उरड़ा माहि उखेलि रे।
माल मलूक देखी करी, दुख करइ अवहेलि रे।६।ना०।
मसकति नउ माल ए नहीं, ए परवंचना माल रे।
सही व्यवहार सुद्ध भाजीयउ, ए परहउ धूड़ि मइ घाल रे।७।ना०
वरत भांजी वित्त पामीयै, ते विष सरिखउ होय रे।
दुख ससार माहि देखीयै, एस्युं माहरइ नहीं काम कोयरे॥८॥
मित्र आव्यउ मिलवा भणी, दिलगीर दीठी भउजाय रे।
आवडु दुख तुं का करइ, कंतनइ कुशल कहाय रे।६।ना०।
मन तणी वात नारी कही, मित्र कह्यउ सरव सरूप रे।
पुण्य फल्यउ तुझ प्रियु तणउ रे, एह कमाल अनूप रे।१०।ना०।
परम खुसी थई पद्मिनी, धरमनी आसता आणि रे।
सील पालइ रे सुलक्षणी, जिन ध्रम नउ फल जाण रे।११।ना०।
धनदत्त साहना मित्र नै, साबासि देव्यो सहु कोय रे।
लोभ लिगार कीधउ नहीं, एहवा जग में एक दोय रे।१२।ना०।
धरम थकी धन संपजइ, धरम थकी सुख होय रे।
समयसुन्दर साचु कहै, धरम करउ सहु कोय रे।१३।ना०।
[सर्वगाथा ११२]

ढाल (७) हिव राणी पदमावती एहनी

भेटि लेई गई भारिजा, राजा नै पासी।
धरती द्यउ नगरी धणी, माडु आवासो ।१।
धरम फल्यउ धनदत्तनउ, सहु कोई करै वातो।
पुण्य करउ रे प्राणिया, दिन नइ बलि रातो ।२।ध०।
राजा कहइ जेती जोईयइं, तेतली ल्यउ धरती।
मोटा महुल मंडावीया, अंगि आणंद करती ।३।ध०।
गउख कराव्या गोरडी, आलीआ नें जाली।
हींडोला खाट हींचिवा, वली चध्या चित्राली ।४।ध०।
बाग वाडी फल फूल नी, खंडोखलि माहे।
बारणइ तोरण बाधीया, ऊंचा कलश उच्छाहे ।५।ध०।
सील पालती श्राविका, रहइ महल मझारो।
सत्तूकार मडाविया, दान द्यइ दातारो ।६।ध०।
साध अनइ वलि साधवी, पात्रा भरि पोषइ।
भगति युगति करी अति भली, साहमी नइ सतोषइ ।७।ध०
दोहिला दुखिया दूबला, तेहनी करइ सारो।
धन धन लोक सहु को कहइ, तूठउ करतारो ।८ ध०।
धनदत्त नी कहै भारिजा, प्रिउ नउ परसादो।
प्रियु ना व्यवहार शुद्ध नउ, करू हुं का प्रमादो ।९।ध०।
सुंस ए व्यवहार सुद्ध नउ, साह नउ फल्यउ एहो।
समयसुन्दर सहु करउ, पिण नहीं पलइ तेहो ।१०।ध०।

[सर्वगाथा १२२]

॥ दूहा ॥

घणउ काल धनदत्त तिहा, रह्यउ परदेस मझार।
मसकति पण कीधी घणी, पणि पलवइ व्यवहार ।१।
धन काइ पाम्यउ नहीं, वली विमास्यउ एम।
धरती थी लहणउ नहीं, कहउ हिव कीजै केम ।२।
जइयइ मरता जीवता, जनमभूमि किमहीक।
तउ साता सुख पामियइ, इम करिवउ तहतीक ।३।
धनदत्त मनि धीरज धरी, एकलउ चाल्यउ एह।
कुसले खेमे आवीयउ, गेहनी वालइ गेह ।४।
फाटे तूटे लूगड़े, मोटी दाढ़ी मूंछ।
खासडे त्रूटे खेह भस्यउ, भूख्यउ तरस्यउ मुंछ ।५।
मोटा महुल ए केहना, पूछ्यउ ते कहै एम।
धनदत्त साह तणी प्रिया, प्रगट कराव्या प्रेम ।६।
धनदत्त नइं धोखउ थयउ, पिण जाऊं घर माहि।
पइसता बारणइ पोलिया, राख्यउ झालि बांहि ।७।
परदेसी तुं कुण छइ, पोलिए पूछ्यउ एम।
सेठाणी स्युं काम छइ, जावा द्यउ जिम तेम ।८।
हुकम विना को हद छइ, पइसइ महल मझारि।
माल मलूक मागूं नही, देखण द्यउ दीदार ।९।
हटक्यउ पिण हठ ले रह्यउ, स्त्रीनइ कह्यउ सरूप।
ते कहइ आणि ऊभउ करउ, जिहा तड़ तड़तउ धूप ।१०।

आप बैठी ऊंची चढ़ी, साम्हउ राख्यउ तेह।
तुरत देखता ओलख्या, ए मुझ प्रीतम तेह ॥११॥
तुरत बोलाव्यउ तेहनइ, आव्यउ निज आवासि।
हाथ जोडी ऊभी रही, पिण प्रिय चित्त उदास ॥१२॥
धनदत्त भरम धर्यउ इसउ, सही इण खंड्यउ सील।
नहिं तरि ए रिद्धि किहा थकी, धूडि पड़उ ए लील ॥१३॥
प्रियु पूछ्यउ रे पद्मिनी, कुण थयउ एह प्रकार।
नारि कहइ प्रियु तणउ, सुंस फल्यउ व्यवहार ॥१४॥
कामिनी सहु माडी कह्यउ, सबंध आमूलचूल।
मित्रइ साख दीधी वली, भागउ भरम समूल ॥१५॥
नाई तेड़ि नगर तणा, सरीर कराव्यउ सूल।
मर्दन करी न्हवरावियउ, पहिराव्या पटकूल ॥१६॥
भोजन भला करावीया, ताजा दीया तबोल।
ग्रहणा गाठा पहिर नइ, वे थया झामरझोल ॥१७॥
धनदत्त कहइ तुझ शील थी, आपे पाम्यउ सुक्ख।
नारि कहै व्यवहार थी, दूरि गया सहु दुक्ख ॥१८॥
जिन ध्रम करता वे रहइ, सुख सेती नर नारि।
समयसुन्दर कहै बिहुं तणइ, हुं जाऊं बलिहारि ॥१९॥

[सर्वगाथा १४१]

ढाल (८) राम देसउटइ जाय, अथवा-धरम हीयइ धरउ, एहनी

तेहवइ ते साध आविया रे, तिण नगरी उद्यान।
अवग्रह मानी ऊतरया रे, बैठा करइ ध्रम ध्यानो रे। १ ।

धरम करउ तुम्हे, विशेष पणइ व्यवहारो रे
संयम आदरउ. जिम पामउ भव पारो रे । २ । ध० ।
दसे दृष्टान्ते दोहिलो रे, नरभव नउ अवतार।
सूत्र साभलिवउ दोहिलउ रे, सरदहणा सुविचारो रे । ३ । ध० ।
धरम करता दोहिलउ रे, भारी करमा जीव।
जाणे पिण न सकइ करी रे, रुलस्यइ पाडता रीवोरे। ४ । ध० ।
कुटुंब सहूको कारिमो रे, जा स्वारथ ता स्वाद।
विहड़ै स्वारथ विण सही रे, पुण्य करउ अप्रमादो रे । ५ । ध० ।
वृक्ष तणी जिम छांहड़ी रे, खिण खिण फिरती जाय।
गरव न कीजइ गरथ नउ रे, घड़ी घडूथल थायो रे । ६ । ध० ।
भोग भोगवियइ अति घणा रे, तउ ही तृप्ति न थाय।
मन वालीजइ आपणो रे, ए छै एक उपायो रे । ७ । ध० ।
संयम थी सुख पामीयै रे, न पडीजै ग्रभवास।
अजरामर पद पामियै रे, लहीयै लील विलासो रे । ८ । ध० ।
सदगुरुनी देसण सुणी रे, प्रतिबूधउ धनदत्त।
पोतानी ऋद्धि परिहरी रे, परिहर्या पुत्र कलत्रो रे । ९ । ध० ।
वयराग माहे आवी रे, जाण्यौ अथिर संसार।
चढ़ते परणामे चढ़यउ रे, लीधउसंजम भारो रे । १० । ध० ।
धनदत्तसाध भलउ थयउ रे, सफल कीयउ अवतार।
समयसुन्दर कहै साधनइ रे,नित माहरउ नमस्कारो रे ।११ ।ध०
[सर्वगाथा १५२ |

ढाल (९)राग-धन्यासिरी, भरतनृप भाव सुँ ए, एहनी

गुरुनी सीख माहे रहइए, साभलइ सूत्र सिद्धान्त ।
संजम सूधुं करै ए, धनदत्त नामै साध । सं० ।
विनय वेयावच पणि करइ ए, ध्यान धरइ एकान्त । १ ।सं०।
खिण परमाद करइ नहीं ए, आतापना करइ नित्य । सं ।
करम खपावइ आपना ए, साधजी बोलै सत्य । २ । सं० ।
अति कठोर क्रिया करइ ए, तप करइ आकरा तेह । स० ।
करम थकी छूटण तणउ ए, सही उपाय छै एह । ३ । सं० ।
अनित्य भावना भावता ए, ऊपनुं केवलज्ञान । सं० ।
अनुक्रमि शिव सुख पामीयउए, व्यवहार सुद्धि निदान । ४ ।सं०
साध तणइ गुण गावता ए, जीभ हुयइ पवित्र । स० ।
साभलता सुख संपजइए, दरसण दीठा नेत्र । ५ ।सं० ।
मसकति नु फल मागीयइ ए, धनदत्त साधनइपासि । स० ।
तुम्हे पाम्या ते आपज्यो ए, मुझमन पूरिज्यो आस । ६ । सं० ।
संवत सोल छिन्नू समइ ए, आसू मासि मझारि । सं० ।
अमदावादइ ए कह्यौ ए, धनदत्त नउ अधिकार । ७ । सं० ।
श्री खरतर गच्छ राजीयउए, श्री जिनचन्द्र सूरीस । सं० ।
प्रथम शिष्य जगि परगड़ाए, सकलचन्द्र तसु सीस । ८ । सं० ।
समयसुन्दर सबंध कह्यउए, जिनसागरसूरि राज । सं० ।
भणता गुणता भाव सुं ए, सीझै वंछित काज । सं० । ९ ।

॥ इति व्यवहार शुद्ध विषये धनदत्त श्रेष्ठि चौपई ॥

सर्वगाथा १६१ ग्रन्थाग्रन्थ श्लोक २१८

संवत् १७७८वर्षे मिति चैत्र सुदि २ दिने ईसाभईखान मई कोटेलिखतं ॥

श्री अभय जैन ग्रन्थालय प्रति नं ८९।४३०० पत्र ४ पंक्ति १८

श्री समयसुन्दरोपाध्याय कृत

श्री पुण्यसार चरित्र चउपई

॥ दूहा सोरठा ॥

समरू श्री सरसत्ति, सद्गुरू पिण सानिध करउ।
आपो वचन उकत्ति, कहु कथा कल्लोल सु ॥ १ ॥
पुण्य करउ पुण्यवंत, जिम सुख पामउ जगत मइं।
अविहड एह अनंत, सुख साता थइ सासता ॥ २ ॥
पुण्य कीयो परलोकि, मन शुद्धइ जिण मानवी।
थिर थापइ बहु थोकि, विद्या वली वरांगना ॥ ३ ॥
उत्तम कुल उतपत्ति, लहइ लील लवणिम सदा।
पुण्यसार सुपवित्त, सुणिज्यो कथा सुभाव सु ॥ ४ ॥

ढाल (१) राग-रामगिरी

जंबूदीप लख योजन मान, पवित्र भरत क्षेत्र परधान।
नगर गोपाचल छइ गुण निलउ, तिहा पृथिवी तरुणी सिर तिलउ ॥ १ ॥
गढ मढ मंडित गुणह निधान, सरस कूआ सुथरा सब थान।
वन उपवन वाडी वावडी, पुण्यसाल जिहा बहु पावड़ी ॥ २ ॥
दीसइ दरसाऊ देहरा, सुन्दर सुघट पहुवि सेहरा।
चउरासी माड्या चउहटा, सखरा कीजइ सउदा सटा ॥ ३ ॥

न्यातवंत नरपति छइ जिहा, कुबुद्धि कुरूप न दीसइ किहा ।
सुखी लोक बहु रिद्धि समृद्ध, पुहवी माहि अछइ परसिद्ध ॥ ४ ॥
धरमवंत तिहा धनवत, सरल सहावी सदा जसवंत ।
पर उपगारी बहुत पडूर, सेठ पुरदर वसइ सनूर ॥ ५ ॥
पतिभगती गुणवती दयाल, सतीय शिरोमणि रूप रसाल ।
पुण्यसिरी इण नामि पवित्र, वारू विकसित वदन विचित्र ॥ ६ ॥
पतिव्रता पर उपगारिणी, रिपि भगवंत तणी रागिणी ।
शुभ आकृति नइ सोभागिणी, जणणी नारि रतन ए जणी ॥ ७ ॥
वचन कीजइ किता वखाण, मानइ सेठ लहइ वहुमान ।
दूषण एक पडयउ देहमइ, गुणवत सुत छइ नवि गेहमइ ॥ ८ ॥

यत

गेहंपि त मसाणं, जत्थ न दीसइ धूलि धूसिरीया
आवंति पडति रडवडति, दो तिन्नि डिभाइं ॥ १ ॥

सुत विण न रहइ घर नउ सूत, पृथिवी माहि मोटा पूत ।
सूनउ घर दीसइ सुत विना, कान निसुणी लोकोक्ति कना ॥ ९ ॥

यतः

अपुत्रस्य गृह शून्य मुख शून्यं अनेत्रता
मूर्खस्य हृदय शून्य सर्व शून्यं दरिद्रता ॥ २ ॥

राति दिवस सुत चिन्ता रहइ, करवत सरिखी कवियण कहइ ।
रामगिरी[1] ए पहिली ढाल, समयसुन्दर पभणी सुविसाल
॥ १० ॥ [सर्व गाथा १६]

---

१ रामगिरी ए ढाल रसाल, पहिली पभणी ए सुविसाल

॥ सोरठा ॥

सुत नइं वंछइ सेठ, सयण लोक पभणइ सुपरि।
हीयउ करी नइ हेठि, नवी नारि परणउ नवल ॥ १ ॥
सुणउ सेठ चित्त लाय, परणउ तुहे म पातरउ।
सहु सयणा समझाय, पर[1] न परणइ ते प्रिया ॥ २ ॥
प्रिया ऊपरि बहु प्रेम, नेह निगड़ बाध्यउ निपट।
नारी दूजी नेम, परणेवा कीधी परत ॥ ३ ॥
सुणउ सयण सहु कोइ, दूजी परणी वहुत दुख।
हमनइ वहु सुख होइ, अंगज हुइ जउ एहनइ ॥ ४ ॥

[सर्वगाथा २०]

ढाल (२) राग केदारा गउडी। सगुण सनेही रे मेरे लाला।

सयण कहइ सुणि सेठ विचारी, करहु उपाय लगइ काई कारी।
मंत्र तत्र वहु मूल महत, यक्ष यजन कीजइ वलि यंत ॥ १ ॥
जिण विधि पुत्र हुवइ जयकारी, भाजइ आरति मन नी भारी।
करउ उपाय एह करुणा पर, अम्हनइ सुख होवइ अपरंपर ॥ २ ॥
सेठ कहइ सुणिज्यो सहु कोई, होम प्रमुख विधि भली न होई।
समकित दूपण लागइ सवलउ, पाप वहुत मिथ्यामत प्रवलउ ॥ ३ ॥
एक करेस्युं सही उपाय, चगइ चित पूजिसु चित लाय।
कुलदेवी नइ करी प्रणाम, कहिस्यइ देव हुस्यइ मुझ काम ॥ ४ ॥

१ सुगुण सरूपा माणसा

खरइ चित्त करीय चखान, सुत निमित रहइ सेठ सुजान।
अन्य दिवस आराधइ देवी, सूधइ मनि पूरव जे सेवी ॥ ५ ॥
आराध्या विधि सुं ते आवी, कहि हो सेठ बात छइ काई।
पूरुं मन ईहित परतक्ष, देवि कहइ सुणिजे तू दक्ष ॥ ६ ॥
कहइ सेठि सुणि तू कुलदेवी, सदा सदा पूरवजे सेवी।
हिव तुम्ह कुण मनिस्यइ हित करि, सुणजे बात विचारी सुभपरि ॥ ७ ॥
मया करी मुम्फनइ सुत आपो, क्रूर कर्म दुःकृत ए कापो।
देवि कहै सुणिज्ये द्युति मंत सुत अनोपम हुस्यइ तुम्ह संत ॥ ८ ॥
धर्म करंता विधि सुं धीर, कितरइ कालि गया वड़वीर।
इम कहि देवि हुइ ते अदृष्ट, ईहित फल्यु सेठि नै इष्ट ॥ ९ ॥
आम्हाहुइ सेठ नइ अधिकी, सही पुत्र हुस्यइ मनसा सुध की।
कही[1] ढाल दूजी केदारा, अनुपम गउडी सहित उदारा ॥ १० ॥
[सर्वगाथा ३०]

॥ सोरठा ॥

अधिक पुण्य जीव एक, अवतरियउ उत्तम घरइ।
वखतवत सुविवेक, पुण्यसिरी कूखइ पवर ॥ १ ॥
मुहणउ लह्यउ सुजाणि, चद बदन चदा तणउ।
वारू करूं वखाण, जुगत संघातइ ज्योति स्यु ॥ २ ॥

१ समयसुन्दर ढाल बीजी केदारा

अनुक्रमि पुत्र उदार, जनम्यउ जननी जुगति सुं।
उच्छव कीया अपार, सेठ पुरंदर सरल मति ॥ ३ ॥
पुण्य करी परधान, आयउ पुण्य घरइ अधिक।
थापयउ पुण्य प्रमाण, प्रगट नाम पुण्यसार इति ॥ ४ ॥

दूहा

पंच धाय पालीजतउ, पुण्य तणइ परमाण
मात पिता वल्लभ महा, सुंदर सहज सुजाण ॥ ५ ॥
[सर्व गाथा ३५]

ढाल (३) राग—आसा, राजा नो कुमरो ए चाल।

आठ वरस नु अनुक्रमइ रे, पुत्र हूओ परधान।
मात पिता मन रंग सुं, मुंक्यउ पढिवा बहुमान रे ॥ १ ॥
सुंदर सोभागी। वाइ रे विधि स्यु वड़भागी, साल भणइ रे ।सुं०।
तिणि नगरी निवसइ तिहा रे, रतनसार रिद्धिवंत।
सुता तेहनी सुन्दरी रे, रत्नवती रूपवंत रे ॥ २ ॥ सु० ॥
ते पिण भणइ सदा तिहा रे, बुद्धिवती बलवंत।
पढता ते पुण्यसार सुं रे, होड करइ हठवत रे ॥ ३ ॥सु०॥
अन्य दिवस अलगी करी रे, पभणी ते पुण्यसार।
हे सुदरि सुणिजे सही, तु वारू एक विचार रे ॥ ४ ॥सु०॥
नर नी होड न कीजीयइ रे, नर निंदियइ न कोइ।
नारि होइसि नर तणी हे, जुगति करी नइ जोइ रे ॥५॥सु०॥

तड़कि करि बोलइ तिका रे, सुण मूरख सुलताण।
नारि होइसि पुण्यचंत नी, [1]गिण्यु तुझ नइ नवि ग्यान रे ॥६॥सुं०
पुण्यसार बोल्यउ पछइ रे, सुणजे सहीय सुजाण।
नियतइ नर सूझइ नहीं रे, परणु जे तुझ पराणि रे ॥७॥सुं०॥
नारि कहइ सुणि नीगुणा रे, नेह जोरइ नवि होइ।
वली पुरुप वनता तणा, तू रीस करीनइ रोइ रे ॥८॥सु०॥
कहइ कुमर सुण कामनी हे, जो परणुं तुझ जोर।
दास करू सब देखता, कीजइ काहे बहु सोर रे ॥९॥सु०॥
बोलइ बाला बोलडुं रे, गहिला म करे गर्व।
सुहणइ परणण मइ सही, सउंस कीधउ तुझ नइ सर्व रे ॥१०॥सुं०
वाद्या वेवे ते वली रे, विषमा बोल्या बोल।
ढाल तीजी ढलती कही, आसा मिश्रित सुं अमोल रे ॥११॥सुं०॥

[सर्व गाथा ४६]

॥ सोरठा ॥

आप आपणइ गेह, वाद करी आव्या बिन्हे।
दाधउ वचने देह, पुण्यसार प्रमदा तणइ ॥ १ ॥
किउ सरिस्यइ मुझ काज, चिंता बहुली चित्त मइं।
अन्न न खाऊं आज, ऊग मूग सूतउ अधिक ॥ २ ॥
सी चिन्ता सुत राज, पूछ्यउ सेठ पुरंदरइ।
लोपी मन नी लाज, बोले वलतो बोल ते ॥ ३ ॥

---

१ ढाल तीजी आस्या मिश्र में समयसुदर कही अमोल रे।

तउ तू सुणि हो तात, जउ मुझ वंछइ जीवतउ।
रतनसार नी राति, पुत्री परणावउ प्रगट ॥ ४ ॥
[सर्व गाथा ५०]

ढाल (४) राग मारू, चाल—वालुं रे सवायो वयर हुं माहरो।

सुत नइ तात कहइ सुणिजे सही रे, अजी तुं वाल अयाण।
तरुण पणइ परणावेस्यु तंनइ रे, सुंदर सहज सुजाण ॥ १ ॥
वोलइ तात सुणउ मुझ वीनती रे, अधिक विद्या रे अभ्यास।
करि हो कुमर कुतूहल परिहरी रे, अम्ह मनि वहुत[1] उल्हास ।२।
कुमर कहइ करिस्यु तुम्हारो कह्यउ रे, तरुणी मागउ तेह।
तउ हु जीमु तात सुणो तुम्हे रे, दुख भरि दाझइ देह ॥३॥वो०॥
सुत समझावी सेठ तिहा सही रे, जीमाड्यो जीव प्राण।
सागण चाल्यउ मारगि मल्हपतउरे, साथ ले सयण सुजाण ॥४॥
रतनसार पूछइ मनि राग सुं रे, किम आव्या किण काज।
भापउ हित करि भाव धरी भलउजी, आपण आव्या आज ॥५॥
रतनवती हिव आपउ रावली जी, वेटी वहु बुद्धिवंत।
रतनसार रलीयायत थई कहइ रे, गरूआ थे गुणवत ॥६॥वो०॥
मानीता थे नगर महीपतइ जी, आपण मांगी रे आइ।
मइ वेटी दीधी हिव माहरी जी, कालखि नाही काइ ॥७॥वो०॥
वेटी वचन सुणी ते वाप नु रे, पिता नइ ऊभी रे पासि।
तात भ्रात सुणिज्यो सहु को तुम्हे जी, वोलइ वचन विलास ॥८॥

1 अधिक

चउथी ढाल कही चिति चंग सु जी, मारू रागणि माहि।
सांभलता[1] सुख साता संपजे जी, आणंद अधिक उच्छाह ॥६॥
[सर्व गाथा ५६]

॥ *सोरठा* ॥

सुणिज्यो तात सयाण, बोलइ रतनवती वचन।
पावक पइससि प्राण, पुण्यसार परणण परत ॥ १ ॥
मन महि चिंतइ एम, सेठ पुरंदर वचन सुणि।
कहउ जुगति मिलइ केम, ए बाला दीसइ अधिक ॥ २ ॥
धुरि थी जे हुवइ धीठ, तरुण पणइ तरुणी तिका।
नहीं रहइ ते नीठ, वारी थकी वरागना ॥ ३ ॥
मुझ सुत चिंतामणि, मन ही मइ रहिस्यइ महा।
तपइ घणु ते तनि, एकरुखी न चलइ अवनि ॥ ४ ॥
[सर्व गाथा ६३]

ढाल (५) राग-मल्हार, नणदल री।

रतनसार बोलइ रही, सुणिज्यो सेठ सुजाण हो साजण।
मुग्धा पुत्री माहरी, करइ नहीं कछु काण हो साजण ॥ १ ॥
सुणि तु वचन सुहामणउ, रगि बोलइ ते रसाल हो साजण।
समझावी तुम्ह सूपिसु, बाल बुद्धि ए बाल हो साजण ॥ २ ॥
दीधी मइ तुम्ह दीकरी, निपट थाउ थे निचिंत हो साजण।
तुम्ह सुत परणेस्यइ तिका, करिस्या विधि सहु-कत हो सा० ॥३॥

१ समयसुदर कहै सांभलता सदा जी।

सेठ पुरन्दर साथस्युं, आवइ घरि उछरंग हो सा०
सुत बोलावइ सकति स्युं, बोलइ वचन सुरंग हो सा० ॥४॥सु०॥
कहीय सहु कुमरी तणी, बात वली ते विशेष हो सा०
साभल पूत सुलक्षणा, तेहनुं अधिको तेष हो सा० ॥५॥
ए जुगती जोड़ी नहीं, नेह रहित निटोल हो सा०
उचित नहीं अंगज तुनइ, विरूया बोलइ बोल हो सा० ॥६॥

यत.

कुदेहां विगत स्नेहां गृहिणी परिवर्जयेत् ।

अण रच ता० १ हीयड़ा नु हेजालुओ० २ इत्याद्युक्तम्

पुण्यसार पभणइ पछी, हठ करि कीधी होड हो सा०
तात तुरत सुणिज्यो तुम्हे, परण्या पूजइ कोड हो सा० ॥७॥सुं०॥
अवसर उपाय न ऊपजै, कुलदेवति थी काम हो सा०
सरिस्यइ एह सही सदा, जागिस्युं हुं बहु जाम हो सा० ॥८॥सु०॥
आराधइ अति भाव सुं, विधि पूरव वड़ वीर हो सा०
आखइ देव प्रतइ इसु, धरि ते मनि बहु धीर हो सा० ॥९॥सु०॥
दीधो देवि दया करि, पिता प्रतइ सुत सार हो सा०
करीय कृपा सुकलत्र नी, पूरि मनोरथ पार हो सा० ॥१०॥सु०॥
उठिसि हुँ इतरइ कीयइ, नहीं तर जीसिवा नेम हो सा०
जो पूरिसि नहीं जामिनी, कह्यउ कर्यउ मुझ केम हो सा० ॥११॥
कठिन प्रतिज्ञा ते करी, बइठउ देवी बारि हो सामिणि ।
पाचमी[1] ढाल पूरी थई, मन सुद्ध रागमल्हार हो सा०॥१२॥सु०

[सर्व गाथा ७५]

१ समयसुन्दर ढाल पंचमी कीधी राग मल्हार ।

॥ सोरठा ॥

इम करि इक उपवास, कर्यउ कुमर कौतुक करी
पुण्य प्रमाणइ पासि, आवी देवि उतावली ॥ १ ॥
वच्छ म करि विषवाद, सरिस्यइ तुझ कारिज सही
समर्यां देसुं साद, तू समरे मुझ नइ तुरत ॥ २ ॥
हरपित हूउ अपार, पुण्यसार कीयो पारणो।
सेप कला सब सार, सीखइ सही सनेह सुं ॥ ३ ॥
पढ्यउ कला पुण्यसार, आव्यउ जोवन अनुक्रमइ।
पूरव करम प्रकार, दुष्ट व्यसन लागो द्यूत नउ ॥ ४ ॥
मात पिता मन रंग, कुमर न वरज्यउ तिहा कीयइ।
सदा फिरइ ते सगि, जूआर्या माहे जुड्यउ ॥ ५ ॥
[सर्व गाथा ८०]

ढाल (६) राग—केदारा गौडो, चाल—कपूर हुवइ अति ऊजलो जी

एम करता तिण एकदा जी, हार्यो राणी हार।
लाख मूल लक्षण भलउजी, अनुपम अधिक उदार ॥ १ ॥
रे नदण सुणि तु सीख सुजाण, तू तो न करइ केहनी काण रे नं०
राजा मागइ रंग सुं जी, आपउ अम्हनउ हार
सेठ जाइ घर सोधीयउजी, लाभइ नहीय लिगार ॥२॥ रे नं०॥
जाण्यउ तिणि जुगतइ करी जी, सहीय लीयो पुण्यसार।
गूझ करी नइ गोपव्यउ जी, पर कुण लहइ तसु पार ॥३। रे नं०।
सेठि इसुं चिंतइ सही जी, पुत्र हुउ प्रत्यनीक।
जतन करी जायो हुंतो जी, लाई इण मुझ लीक ॥ ४ ॥ रे नं० ॥

हार्‌यउ हार तिणइ हुस्यइ जी, सहीय जुआर्‌या साथ।
काढिस्युं घर थी कपूत नइ जी, हटकी झाली हाथि ॥५॥ रेन०॥
इम चिंतवि नइ आवियउ जी, हाटइ करीय हजूर।
पुण्यसार नइ पूछीयउजी, कोपइ आखि करूर ॥ ६ ॥ रे नं० ॥
साची बात कही सहू जी, पुण्य प्रबल पुण्यसार।
कोप्यउ सेठ कहइ वली जी, हितशिक्षा हितकार ॥७॥ रे न० ॥
भूषण आणी भूप नो जी, आवइ इण घर माहि।
वचन बहु विरुवा वली जी, बोलइ झाली बांहि ॥ ८ ॥ रे नं० ॥
कंठ ग्रही कोपइ करी जी, काढ्यउ कुमर कुवेलि।
अमरस कुमर नइ ऊपनो जी, तिणि वेला तिणि मेलि ॥६॥रे नं०
करिस्यु करम नो पारिखो जी, इम चिंतवि अणवोल।
नीकलियो पडती निसा जी, तेहनो पुण्य अतोल ॥१०॥ रे नं०॥
राति पड़ी रवि आथम्यो जी, पसर्‌यो प्रबल अंधेर।
वड कोटर माहे वस्यउ जी, निपट नगर नइ नेडि ॥११॥रे न०॥
कहीय केदारा गउडीयइ जी, अनुपम एही ढाल।
छट्ठी छयला मन हरइ जी, चोखइ चित्त रसाल ॥१२॥रे नं०॥

[सर्व गाथा ६७]

॥ *सोरठा* ॥

तुरत पुरंदर तेथि, घरि आयो घरणी भणइ।
कुमर न दीसइ केथि, गयो किहा गरूया धणी ॥ १ ॥
सेठ कहइ सुणि नारि, शिक्षा कारणि मइं सही।
हिवणा आणे हार, कहि इम मइ काढ्यउ घरा ॥ २ ॥

तिणि वचनइ ततकाल, कुपी थकी कामिणि कहइ।
बाहिर काढी बाल, तू घर आयो किउं तुरत ॥ ३ ॥
जाई जोवउ जेथि, आणो इहा ऊतावलो।
आयो नहीं सुत एथि, निरति करउ सव नगर मइ ॥ ४ ॥

॥ दूहा ॥

गाढि रोपि गृहिणी कहइ, समरी सुत नइ सेठि।
नगर माहि निरखइ फिरी, दीरव फाटी देठि ॥ १ ॥
पुण्यसिरी चिंतइ पछइ, मूरख हुं सुमहंत।
किण वेला काढ्यउ घरा, कोप करी मइं कंत ॥ २ ॥
पहिली मूरखता पणो, कीधी सेठि कुनीति।
पति काढता मइं पछइ, राखी भलीँ न रीति ॥ ३ ॥
चिंता करती चित्त मइं वइठी घर कै बार।
कुमर तणो कहिस्युं हवइ, वारू अधिक विचार ॥ ४ ॥

[सर्व गाथा १००]

ढाल (७) राग—खभाइती, सोहलानो

कुमर ऊभउ हिव तिहा किणइ रे, देखइ देवति दोइ रे।
वड़ ऊपरि वाता करइ रे, आणंद अधिकइ होइ रे ॥ १ ॥
थारे वारणइ सखि,
कहउ काई बात विनोद नी जी, सुणइ कुमर सुजाण।
एक कहइ आपे सखी रे, इच्छा फिरइ अपारो रे।
चंद्र सहित राति चादणी रे, अनुपम एह उदारो रे ॥२॥ थारे०॥

दूजी इम कहइ देवता रे, फोकट फिरीया काऊं रे।
तुरत तमासउ ह्वइ जिहां रे, जुगति करी आपे जाऊं रे, ॥३॥
एक कहइ कौतुक अछइ रे, पुर वलभी पुण्यवंती रे।
सेठि वसइ तिहा सुंदरू रे, धन नामइ धनवंती रे ॥४॥ थारे०॥
नारि अछइ गुण(?धन)सुंदरी रे, तसु पुत्री छइसातो रे।
सकल कला गुण सोभती रे, वारू नाम विख्यातो रे ।५।थारे०।
ब्रह्मसुदरि धनसुंदरी रे, काम मुक्ति सुख कामो रे।
भाग सुभाग सुसुंदरी रे, गुणसुंदरी गुण धामो रे ॥६॥थारे०॥
वर काजइ तिण वाणियइ रे, आराध्यउ अति भावइ रे।
गणपति देव गुणइ भर्यउ रे, मोदिक देइ मनावइ रे ॥७॥थारे०
हरषित लबोदर हुई रे, वचन कहइ ते विसालो रे।
आज हुंती वर आविस्यइ रे, दिन सातमइ दयालो रे ॥ ८ ॥
निरत करइ दोइ नाइका रे, पूठे जे पुण्यवंतो रे।
लगन तणी वेला लही रे, सही सही सुणि संतो रे ॥६॥थारे०॥
पुत्री परणाजे पछइ रे, तेहनइ तू ततकालो रे।
सात सुता ले सामठी रे, भलो अछइ तसु भालो रे ॥१०।थारे०।
लंबोदरइ लखाईयो रे, कोई तेहनइ कुमारो रे।
हरषित सेठ करइ हिवइ रे, उच्छव अधिक उदारो रे ॥११॥थारे०
दिवस सातमो देवता रे, आज अछइ सुखकारो रे।
सातमी ढाल सुहामणी रे, रली खभाइत राणो रे ॥१२॥थारे०॥

[सर्व गाथा ११३]

॥ सोरठा ॥

वलभी नगरि विसाल, किसा अछइ कौतिक तुनइ।
लंबोदर सुरसाल, सव कौतिक देखु सही ॥ १ ॥
पढी मंत्र प्रधान, ऊखणीयो वड ते अधिक।
आणी घर्यउ उद्यान, खिण माहे वलभी खड़ो ॥ २ ॥
चाली तिहा चउसाल, नीपावी रूप नायिका।
देवति बिन्हे दयाल, पुण्यसार पणि साथे चल्यो ॥ ३ ॥

ढाल (८) राग वेलाउल, ऊलालानी।

लवोदर कहइ लार, मडप मंड्यौ अपार।
मेली स्वजन महत, सुता सहित सेठ संत ॥ १ ॥
वाट जोवइ तिहा वैठो, आणद अग पइठो।
तितरे देवति दोई, आगणि ते आवेई ॥ २ ॥
साथइ ते पुण्यसार, आव्यो हरख अपार।
ततखिण धन सेठ तेह, दीठी सुंदर देह ॥ ३ ॥
जाण्यौ एही जामाता, सगला मन हुई साता।
आयो सहीय ते इह किण, भलु भणी दीयइ बइसण ॥ ४ ॥
सुणि तुं चतुर सुजाण, जामाता हम जाण।
लवोदर थकी लहीयो, सात सुता वर कहीयो ॥५॥
इम कहि वचन उदार, आभ्रण वहु अपार।
सेठ सहु पहिरावइ, पुण्य पसाइ ते पावइ ॥ ६ ॥
धवल मगल धुनि गीत, करइ वधू कुल रीत।
चउरी मंडीय चार, कन्या परणइ कुमार ॥ ७ ॥

दीधा तिहा वहु दान, वाध्यउ अधिकउ ए वान।
परणी नारि प्रधान, सुन्दर सात सुजाण ॥ ८ ॥
करइ विचार कुमार, अम्ह पिय कह्यउ अपार।
इहां हुं आयो अजाण, प्रगट्यउ पुण्य प्रमाण ॥ ६ ॥
नहिंतर किम मुझ नाम[1], साचउ हूत सकाम।
उत्तम लक्षण एही, दाखइ दोष न कोई ॥ १० ॥
उच्छव करि घरि आण्यो, सजन सहु मनि मान्यो।
साते सुन्दरि साथइ, महल अनोपम माथइ ॥ ११ ॥
बइठो ते बुद्धिवंत, पवर पल्यंक हसंत।
पति पासेइ बइठी पीढे, साते सुन्दरि चीढे ॥ १२ ॥
प्रश्नपहूतर पूछइ, कला किती तुम्ह कुं छइ।
आठमि ढाल ऊलाला, राग रंगीलि रसाला ॥ १३ ॥
[सर्व गा० १२६]

॥ सोरठा ॥ ॥

कुमर कहइ सुविचार, सुणउ नारि सव श्रुत धरी।
वदउ तुम्हे वार वार, मुझ मनि कुछु मानइ नहीं । १ ।
श्लोक एक सुविशाल, कुमरइ वाल्यो अति कठिन।
बुद्धिवती ते बाल, तेह अरथ न लहइ तुरत । २ ।
पीछेइ ते पुण्यसार, वड़ जास्यै पाछउ वही।
इम चीतवइ अपार, पछइ किसी परि पहुंचिसु । ३ ।
अगित नइ आकार, जाण्यउ किहा किण जाइसी।
गुणसुन्दर गुणधार, भामनि भाव भरतार नउ । ४ ।

1 ताम

अगि चिन्ता तुम्ह अंगि, करिवा नी इच्छा कुमर ।
अछइ ऊठि मुझ संगि, कुमरि कहइ इम ही कुमरि । ५ ।
हरखइ जोडी हाथ, अधोभूमि आव्या बिन्हे ।
लिखी गुणे करि गाथ, कुमर जणावण कारणइ । ६ ।
किहां गोपाचल किहां वलहि, किहां लम्बोदर देव ।
आव्यो बेटो विहि वसहि, गयो सत्तवि परणेवी ॥ १ ॥
गोपाचलपुरादागा वल्लभ्या नियतेर्वशात् ।
परिणीय वधू सत्त पुनर्तत्र गतोस्म्यहं ॥ १ ॥

पुनः *सोरठा—*

रामा तणइ जु रागि, खरी खति खडीयइ करी ।
भींति तणइ इक भागि, अक्षर लिखिया एहवा । ७ ।

[सर्व गाथा १३७ उक्त मिलने १३६]

ढाल (९) राग-मल्हार

जीहो गुणसुन्दरि गजगामिनी लाल सखर सुभागिन तेह ।
जीहो वाच्यो नहीय विशेष स्युं लाल लाजती गुण गेह । १ ।
सहु जन सुणिज्यो सरस सम्बन्ध ।
जीहो आणंद होवइ अति घणउ लाल, धर्म करउ तजि धंध ।
जीहो कुमर कहइ कुमरी सुणो लाल, बइठो थे घर बारि ।
जीहो सुख तनु चिंता करि सही लाल, आविस हुं अवधारि ।२।
जीहो निराबाध निकटइ रहउ लाल, नवि थाउ निरधार ।
जीहो हु जाइसुं अलगो हली लाला, तू रहि तुरत दुवारि । ३ ।

जीहो इम कहि नै ऊतावलो लाला, गयो ते वड नैं गोठि ।
जीहो कोटर माहि कुमार जी लाला, वइठो ते पुण्य पोट । ४ ।
जीहो ते देवति आवी तिहा लाला, बइठी वड परि वासि ।
जीहो ऊपाड्यो आणंद सु लाला, आण्यउ मूल आवासि । ५ ।
जीहो पीछइ सेठ पुरंदरू लाला, भमी भमी पुर भूमि ।
जीहो थाकउ अति तिण थानकइ लाला, आई वइठो इकठामि । ६ ।
जीहो तितरइ राति तुरत गई लाला, नाठउ निपट अन्वेर ।
जीहो सहस किरण सूर ऊगतउ लाल, बाजइ भूगल भेरि । ७ ।
जीहो कोटर थकीय कुमार जी लाल, नीसरियो निरदम्भ ।
जीहो वस्त्र अलंकृत स्यु जड्यो लाल, अनुपम एह अचंभ । ८ ।
जीहो दीठा दरसण तात नो लाल, पुण्यसार पुण्यवंत ।
जीहो पीछइ पेखइ परगड़उ लाल, सेठ पुरंदर सन्त । ९ ।
जीहो अद्भुत शोभा अति वण्यो लाल, दीठउ पुत्र दयाल ।
जीहो विस्मय चिंति वछ वछ कही लाल, तात मिलइ ततकाल
जीहो आलिंगी घर आपणइ जी लाल, आण्यो अधिक आणद
जीहो पुत्र पती पेखइ विन्हे लाल, पुण्यसिरी पुण्य कद । ११ ।
जीहो खुसी थई खोले लियो लाल, प्रेम संघातइ पुत्र ।
जीहो पुण्यसिरी पूछइ पछइ लाल, विधि सु वात विचित्र । १२ ।
जीहो लिखमी एह किहा लही लाल, कहि तूं पूत कुमार ।
जीहो कुमर कही सव ते कथा लाल, माता पिता सुणइ सार १३

जीहो सुणी बात सोहामणी लाल, अहो अहो पुण्य[1] संसार।
जीहो नवमी ढालइ निउंछणा लाल, माता कीधा राग मल्हार
। १४ स०। [सर्वगाथा १५३]

॥ सोरठा ॥

अधिक वडो अपराध, मइ कीधो मतिहीण मह।
बाल्यो गुणे अगाध, खमिजे वछ ते खरो ॥१॥
शिक्षा हेत सुजाण, कहु वचन तुझनइ[2] कुमर।
पुण्यसार तुँ प्राण—जीवन जनक कहइ सदा ॥२॥
सुत बोलइ सुणि तात, शिक्षा[3] एह सुहामणी।
संपद नारी सात, हेतु इणइ मुझनइ हुइ ॥३॥
आण्या जे अलकार, द्यूतकार नै ते दविण।
हरखी दीध हार, राजा नो राजा प्रतइ ॥४॥
द्यूत विसन करी दूरि, पुण्यसार प्रणमी पिता।
हाटइ सहु हजुर, बइठउ बाप तणइ कन्हइ ॥५॥
वणिज अनइ व्यापार, करइ सदा कुमर आपणा।
चालइ शुभ आचार, कथा कहुँ हिव पाछली ॥६॥
[सर्वगाथा १५९]

ढाल (१०) राग—मारवणी, रुकमणि राणी अति विलखाणी, एहनी

गई पाछी घरि ते गुणसुन्दरि, वहिना नइ कहइ वृतांत जी।
सुन्दर सगुण सरूप सुलक्षण, किहा छोडी गयउ कंत जी ॥१॥

1 पुण्यवंत पुण्यसार, २ मुझनइ, ३ अमिय रसायण अग्गली

प्रीय आवो रे पाछा पुण्यवंत, वलि वलि विलवइ नारी रे।
साते सुन्दरि साहिव तइ सब, निपट छोडी निरधारी रे ॥२॥
किण अवगुण छोडी तइं कता, अम्हनइ अवगुण आखउजी।
दया करी द्यउ दरसण कृपा पर, रोस रती नवि राखउजी ॥३॥
घड़ी दुहेली तुम्ह विण घर में, विरह वियापइ देहजी।
पूरी प्रीत न पाली प्रीतम, छयल न दाखउ छेह जी ॥४॥
चंदो चंदन नइ चित्रसाली, चरणउ चूनड़ि सार जी।
चूडउ चीर अनइ चतुराई, अम्ह तनि लागइ अंगार जी ॥५॥
साहिव सार करउ अवलानी, अम्ह हिव कुण आधार जी।
भरण पूरण भरतार करइ सव, अस्त्री नइ आथि भरतार जी ॥६॥
देवइ दुख सवल ए दीधउ, पतिविण न रहइ प्राण जी।
किउं करि छोड़ि गयो अम्ह कता, जुगति तणउ तू जाण जी ॥७॥
करि वहु रुदन मन्नइ कुमरी, अवला पडइ अचेत जी।
सीतल पवन सचेत करी सव, नीर वहइ वहु नेत जी ॥८॥
पुत्री तणउ विलाप सुणी पितु,आयो तिण आवासि जी।
रग तणी वेला स्युं रोदन, पति किउं नहीं तुम्ह पासि जी ॥९॥
एह वृतान्त कहो मुझ अव, कहइ सुता कथा तेह जी।
परदेशी परणी ते पापी, नासि गयो मत तेह जी ॥१०॥
पकड़ी थे नवि राख्यउ किउं पति, नासतो निरभीक जी।
किसी कहुं हिव वात कुमरनी, ठउड़ कही नवि ठीक जी ॥११
रूप रग रामा नो देखी, सव भूलइ संसार जी।
तुम्ह रूपे नवि भूलो ततखिण, विरूउ तुम्हाविकार जी ॥१२॥

अथवा अंग तणा आभूपण, ले गयो लाइ न वार जी।
व्यसनी कोइ वदीतो वंचक, इणि लिखीये आचार जीं ॥१३॥
मारवणी ढाल माहे मीठी, दसमी ढाल दयाल जी।
कीधी प्रवल कुतुहल काजे, सुणिज्यो सरस रसाल जी ॥१४॥
[सर्वगाथा १७३]

॥ दूहा ॥

दया करी देवइ दीयो, करइ जो एहवा काज।
पुत्री पूरब कर्म नी, प्रगटी दुःकृत पाज ॥१॥
करतउ कथा कुमर रली, नवि जाण्यउ थे नाम।
अण लाधइ हिव अंगजा, किम सरिस्यइ तुम्ह काम ॥२॥
[सर्वगाथा १७५]

ढाल (११) राग—गउडो, आदर जोव क्षमा गुण

गुणसुन्दरि वोलइ गहगहती, लिख्यो अछइ तिण लेख जी।
भीत तणइ भागइ भरतारइ, वाच्यउ मइ न विशेष जी ॥१॥
सुणउ तात सुन्दर सोभागी, करम क्रतूत अलेख जी।
कर्म तणी गति लखइ न कोइ, दैव करइ ते देख जी ॥२॥
प्रगट हुयउ प्रभात ततखिण, अक्षर लह्या अनूप जी।
वाची नइ वखाण कियो तिणि, चटपट लागी चउप जी ॥३॥
तात प्रते ततखिण ते सुन्दरि, भाखइ भीभल नयण जी।
नगर गोपाचल थी तेही नर, आयो ते इहां गइणि जी ॥४॥
किणही कारण करम विसेपइ, इहा आयो राति माहि जी।
तुम्ह दीन्ही परणी नइ ततखिण, वली गयो तिण वाहि जी ॥५॥

तिण कारण मुझ तात तुरत थे, वारू द्यउ नरवेश जी।
गोपाचलपुर जाइ जुगति सुं, देखसुं पति नो देश जी ॥६॥
जाई जोस्यू जनक धणी नै, अवधि अछइ षटमास जी।
निरति कीयां नवि लाभुं पति ने, पावक पइसिसुं पास जी ॥७॥
कर परतगन्या चाली कुमरी, पिता दियो पति वेश जी।
मेली मोटो साथ महीपति, आई अधिक निवेश जी ॥८॥
पुर गोपाचल पहुता प्रगटी, करइ ते वणिज कुमार जी।
गुणसुन्दर नामइ गुणवंतो, अति दाता सु उदार जी ॥९॥
पुहवी माही थयो ते प्रगटो, सुन्दर सहज सरूप जी।
नगर माहि ए सहीय नगीनो, भलो भलो भणइ भूप जी ॥१०॥
क्रय विक्रय ते करइ विचक्षण, पुण्यसार सुं प्रीति जी।
विविध विनोद करइ वाता वलि, चालइ ते इक चीति जी ॥११॥
अन्य दिवस दीठो आवतउ, गुणसुंदरि गज गेलि जी।
रतनसुंदरी राग धर्‌या अति, मन सडं अपणइ मेलि जी ॥१२॥
तेड़ी तात नइ तुरत कहइ ते, मन मान्यो मुझ कत जी।
परणावउ गुणसुंदर परगट, खरी अछइ मन खंत जी ॥१३॥
सेठइ जाण्यो भाव सुता नो, तुरत गयो तसु पास जी।
कर जोडी नइ करइ वीनति, वारू वचन विलास जी ॥१४॥
गोडी रागइ गिणज्यो गुणवंत, एह इग्यारमी ढाल जी।
कहिस्यै वात तिकाहुँ कहिस्यु, सुणिज्यो सजन सुहाल जी ॥१५॥

[सर्वगाथा १९०]

॥ सोरठा ॥

गुणसुंदर गुणधार, सुणि तु एक वचन सही।
सुता अम्हारी सार, तुझ परणण वाछइ पवर ॥१॥
चिंति चिंतवइ कुमार, अहो कतूहल ए अधिक।
भामिनी नइ भरतार, महिला जुगल तणउ मिलइ ॥२॥
वनिता वंछइ एह, परणेवा मुझ नइ प्रगट।
रहिस्यै नहिं ए रेह, संबंध एह नहिं सारिखउ ॥३॥
कहुं हिव ऊतर कोई, वारू इणि कारण वली।
दुख होस्यइ हम दोई, नवि मिलस्यइ जो नाहलो ॥४॥
कहइ विचार कुमार, सुणिज्यो सेठ सहू सहू।
ए मोटा अधिकार, पिता न जाणइ पवर ॥५॥

॥ दूहा ॥

हिवणा ते दूरइ हुआ, तिण कारण तू तेड़ि।
कोई कुमार कलानिलउ, निज पुत्री द्यइ नेड़ि ॥६॥
रतनसार कहि राग धरि, सुणि हो कुमर सुजान।
मुझ पुत्री मनि तू वस्यउ, अब कहउ क्यु द्यउ आनि ॥७॥

[सर्व गाथा १९७]

ढाल (१२) राग-मल्हार, नारी अब हम मोकलो, एहनी,
कुमरइ मान्यो कथन ते, अति आग्रह सु अपारो रे।
उच्छव करि घर आणियो, परणाई सुता सारो रे ॥१॥
अचरिज एहवउ अब सुणउ, परणइ प्रमदा प्रेमो रे।
सुणता आणंद संपजइ, न मिटइ विधि लिख्यो नेमो रे ॥२॥

पुण्यसार पाछइ सुन्यो, परणी परतिख तेहो रे।
कुलदेवति नइ इम कही, दीकरा अव काइ मरइ तू आलो रे॥३॥
कहइ कुमर कुलदेवि नइ, महिला मागी मइं मातो रे।
परणी ते परदेसीयइ, तिण करु आतमघातो रे ॥४॥ अ० ॥
कहइ देवति सुण कुमर तुं, मइ दीधी मतिमंतो रे।
ते होस्यइ वछ ताहरी, नारी निपट नितंतो रे ॥५॥
कहइ कुमार कृपापरू, पर रमणी नवि पेखू रे।
ए परणी हिवणा अछइ, किसु करूं किसुं लेखुं रे ॥६॥
कहइ कुलदेवी किसुं करूं, वार वार वछ आल रे।
ते तरुणी होस्यइ तिहारे, ते सुणज्यो ततकाल रे ॥७॥
तेह वचन मान्यउ तिणइ, देवी तणा दयालो रे।
तिण अवसर होस्यइ तिहा, ते सुणज्यो ततकालो रे ॥८॥
गुणसुन्दर गुणसुन्दरी, चिंतहि मनहि मझारो रे।
अवधि अम्हारी अव थइ, नाह न मिल्यउ निरधारो रे ॥९॥
कठिन प्रतिज्ञा ते करी, चाली हु चउसालो रे।
पावक पइसिस हुं हिवइ, झलझलती बहु झालो रे ॥१०॥
इम चिंतवि ते वनि आवइ, काठ करइ इकठाई रे।
लोक मिल्या लख इम कहै, कुमर मरइ तु काइ रे ॥११॥
सकल नगर माहे ते सुणी, वात वडी वहु एहो रे।
सारथपति मरइ ए सही, निरति नहीं किण नेहो रे ॥१२॥
भूप प्रमुख आया मिली, कहइ कुमार नइ एमो रे।
काठभखण करइ काइ तू, कहइ वृतात छइ केमो रे ॥१३॥

राग मल्हार मइ राखिज्यो, वारमी ढाल विसालोरे ।
हरख करी सुणिज्यो हिवइ, आणद अधिक रसालो रे ॥१४॥
[सर्व गाथा २१२]

॥ सोरठा ॥

राजादिक कहइ रगि, किण आणा खंडी कुमर ।
अगनि पइसि करि अङ्ग, कारणि किणि भसमी करइ ॥१॥
कहइकुमर सुणि राय, कुण आणा खण्डित करइ ।
इष्ट वियोग अपाय, कारण हूं खडित करूं ॥२॥
नाखी ते नीसास, विरह वचन वदतउ सही ।
पावक केरइ पासि, आवइ अतिहि ऊतावलो ॥३॥
कहइ राजा छइ कोइ, समझावइ एहनइ सही ।
लख मिलिया छइ लोइ, वारउ मरण थकी विदुर ॥४॥
नागरि कहइ नरिंद, पुण्यसार एहनइ प्रगट ।
कुमर अछइ सुखकद, मोटउ मित्र महत मति ॥५॥
[सर्व गाथा २१७]

ढाल (१३ राग जयतसिरो, दूर दक्षिण कइ देसडइ, एहनो
राजा रलिआइत थई, आपइ तसु आदेस । शुभमति ।
पुण्यसार जाइ थे पूछइ, क्यु करइ कुमर किलेस शु० ॥१॥
एह अचम्भा अति खरउ, जोवन वेस जोवान ।शु०
किण कारण काठ आदरइ, सही का ऊपनी सान शु० ॥२॥
पुण्यसार पूछइ पछइ, नेडो जई निसंक ।शु०
तरुणपणइ तुं काइ तजइ, निपट शरीर निकंप शु० ॥३॥

किण दुख मरइ कुमार तू, वेदन कहि मतिमंत ।शु०
कहइ तेह किणनइ कहुँ, साजन नहीं कोई सत शु० ॥४॥
दुख रह्या मुझ देह मइं, ते किणि कह्या न जाइ ।शु०
कंठ हृदय आवइ कदा, वलि जावइ ते वाय शु० ॥५॥

यत

जासु कहीयै एक दुख, सोले उठे इकवीस ।
एक दुख विचमे गयो, मिले वीस बगसीस ॥१॥

सुणि कुमार दुखि सारिखउ, अम्ह तुम्ह एह अनन्त ।
रमणी मुझ पीहर रहइ, वलभीपुरी वसन्त ॥६॥
ए दुख मुझनै अति घणउ, हिव तूं तुरत प्रकासि ।
[तेह कहे मुझ प्रिय इहा, गोपाचलपुर वासि ॥७॥
हूं आगत तिण शोधिवा, पणि मुहलत पूरी होइ ।]
कुमर कहइं तेहिज सही, जुगति करी नइ जोइ ॥८॥
तेह कहइ तुझस्युं चली, तइं तजी तोरण वार ।
गुणसुन्दरि नामइ गुणी, नारी हूं निरधार ॥९॥
कारण ताहरइ मइ कीयो, पति जी इतो प्रयास ।
हिव हरषित हुइमुझ दीयो, वेस जुवति बहु वास ॥१०॥
घर थी आणि घडी माहि, आप्यउ वेस उदार ।
पहिरी वेस पवित्र ते, निकसी अपछर नार ॥११॥
बहूय वदइ छइ तुम्ह भणि, पीछइ कहइ पुण्यसार ।
सुसरादिक सव नइ सही, कुमर कहइ नमोकार ॥१२॥

राजा पूछइ रंग सुं, किसउ वृतांत कुमार । शु० ।
पुण्यसार प्रगटो कियो, अपणो ते अधिकार ॥ शु० ।१३। ए० ।
विसमित हूआ वलि सहू, अचरिज एह अनूप । शु० ।
रतनसार रहिनइ कहइ, भलीय परइ सुणउ भूप । शु० । १४ ।ए०।
परणी जइ मुझ पुत्रिका, अबला हुइ ते आज । शु० ।
हिव एहनी गति कुण हस्यइ, सुणि राजन सिरताज । शु०।१५।ए०

॥ सोरठा ॥

स्युं पूछइ हो सेठि, राजादिक कहइ रतन नइ ।
वनिता तेहनी वेठि, परणी तसु पुण्यसार पति ॥१॥
हरखित हुई कुमार, पुण्यसार वल्लभीपुरी ।
आणावइ अधिकार, सुन्दरि छए सामठी ॥२॥
आठे नारि उदार, आवी ते घर अंगणइ ।
आठे महल अपार, सूप्या सेठ पुरंदरइ ॥३॥
सुख भोगवइ सुजाण, पुण्य जोग पुण्यसार ते।
कोई न लोपइ कार, कुलनीतइ चालइ कुमर ॥४॥
इण अवसर गणधार, ज्ञानसागर गुरु आवीया ।
न्यानी निरतीचार, चारित पालइ चित्त सु ॥५॥
वाचइ बहु विस्तार, सेठ पुरंदर सरस मति ।
सुणइ देसणा सार, पुण्यसार सु परिवर्‌यउ ॥६॥

ढाल (१४) राग-गउडी, चाल-प्रतिबूधउ रे,

ज्ञानसार गुरु उपदिसइ सुणिसतो रे,
ए संसार असार सहु सुणो संतो रे ।
अथिर रिद्धि ए आउखउ सु० विणसत न लागइ वार स० ॥१॥

दस दृष्टान्ते दोहिलउ सु० ए मानव अवतार ॥ स० ॥
आरिज खेत अरिहंत नउ सु० धर्म सुणण गुणधार ॥ स० ॥२॥
सद्दहणा सूधी वली सु० करणो कठिन विचार ॥ स० ॥
परम अंग परमेसरइ सु० कह्या कठिन ए च्यार ॥ स० ॥३॥
दान धरम सब दुख दलइ सु० सील परम सिणगार ॥स०॥
तप तोड़इ क्रम आकरा सु० भावना मुगति भंडार ॥स०॥४॥
कारमी ए काया कही सु० खिरइ एक खिण मांहि ॥स०॥
कुछित मल नी कोथली सु० सोलह रोगां साहि ॥स०॥५॥
पाका पान ज्युं खिर पड़इ सु० अथिर अछइ ए काय ॥स०॥
संझ राग सिरखी कही सु० जल बिंदु जिउं मजाइ ॥स०॥६॥
बन्धु सही विहड़इ नहीं सु० पुत्र विहड़इ पापयोग ॥स०॥
मित्र महेला मात जी सु० स्वारथ मिलइ संयोग ॥स०॥७॥
तरु पंखी मेलउ तिसउ सु० एकठा आवी थाय ॥स०॥
जनम मरण थी जीवनइ सु० राखइ नहीं को राय ॥स०॥८॥
मरण थकी को नवि मिच्यउ सु० धरतीपति छत्रधार ॥स०॥
माल मुलक महिला तजी सु० अवसर भए अणगार ॥९॥
इम अनित्य सब जग अछइ सु० वरजउ विषय विकार ॥स०॥
अनरथ छइ तिहाँ अति घणउ सु० दुरगति ना दातार ॥स० ॥१०॥
धरम बिना सहु धध छइ सु० पूत कलत्र परिवार ॥स०॥
सूधइ चित्त ध्रम साचवउ सु० पामो ज्युं भव पार ॥स०॥११॥
ए उपदेश सुणी करी सु० प्राणी वहु प्रतिवुद्ध ॥स०॥
न्वदमी ढाल रसाल सु० सरस गउड़ी राग सुद्ध ॥स०॥१२॥

॥ सोरठा ॥

पूछइ प्रश्न पडूरि, सेठ पुरन्दर ध्रम सुणी ।
स्यु कीधउ पुण्य सूरि, पूरव भव पुण्यसार प्रभु ॥१॥
सूरि कहइ सुणि सन्त, न्यानइ सब लाधी निरति ।
पूरब भव पुण्यवंत, सुणज्यो सहु पुण्यसार नो ॥२॥
पुरनीतइ परसिद्ध, कुल पुत्र कोइक हुंतउ ।
सरल सभाव सबुद्ध, संतति कुल उच्छिन्न सब ॥३॥
जुगति करी नइ जीपि, पाँचे इन्द्री पवर मति ।
सुगुरु सुधर्म्म समीपि, व्रत लीधउ विरमी भवा ॥४॥

॥ दोहा ॥

सुमति पंच पालइ सदा, गुपति धरइ गुणवंत ।
काय गुपति खण्डन करइ, सुध नवि राखइ सन्त ॥१॥
दंस मशा जब देहनइ, लागइ सबला लारि ।
काउसंग पूरउ नवि करइ, उडावइ बार बार ॥२॥
गुरु बोलइ मधुरी गिरा, सुणि हो शिष्य सुजाण ।
आवश्यक आराधता, मोटउ दूषण माण ॥३॥
भव्य जीव भयभीत हुइ, सहइ परीसह सोइ ।
वेयावच गुरुनी करइ, करइ क्रिया मन धोइ ॥४॥

॥ सोरठा ॥

मर सुर हूयउ महंत, सौधर्म शुभ ध्यान थी ।
दीपइ ते द्युतिमत, भली परइ सुख भोगवइ ॥१॥

ढाल (१५) राग-धन्याश्री धर्म मलो छइ भावना एहनी,

सुर सुख भोगवि नइ सही, सुणि सेठ अपार ।
ए अंगज तुम्हनउ थयो, पुण्य थी पुण्यसार ॥१॥

पुण्य करउ भवि परगडउ, परिहरि सत्र पाप ।
पुण्य प्रमाणइ देवता, आवइ घरि आप ॥२॥ ॥पु०॥
सुमति गुपति साते सही, पाली प्रवचन मात ।
सुख स्य तिणि इणि ही सुखइ, परणी प्रमदा सात ॥३॥पु०॥
कष्टइ करि पाली काइकी, इम गुपति उदार ।
कष्टइ लाधी कामनी, सुणि सेठ विचार ॥४॥पु०॥
सुणि देसण सवेग थी, वारु मन वालि ।
सेठ पुरंदर सरलमति, दीख ग्रही दयाल ॥५॥पु०॥
श्रावक धर्म सूधउ ग्रह्यउ, पुण्यसार प्रधान ।
अतीचार अलगा करी, पालइ पचखाण ॥६॥पु०॥
पुण्यसार वय पाछली, दुक्कर ल्यइ दीख ।
पुत्रादिक परिवार स्युं, सहु स्युं करि सीख ॥७॥पु०॥
चंगी विधि चारित धरी, वधतइ वर भावि ।
अणसण अंते ऊचरी, चोखइ चिति चावि ॥८॥पु०॥
मरण समाधि मरी करी, सद्गति गयो सोइ ।
प्रगट चरित पुण्यसार नो, लखिज्यो सव लोइ ॥९॥पु०॥
शातिनाथ जिन सोलमउ, तसु चरित चउसाल ।
ए मइं तिहा थी ऊधर्यउ, सम्बन्ध विसाल ॥१०॥पु०॥
संवत सोल तिहुत्तरइ,[1] भर भादव मास ।
ए अधिकार पूरउ कर्यउ, समयसुन्दर सुखवास ॥११॥पु०॥

॥ इति श्री पुण्यसार चरित्रं सपूर्णम् ॥

ग्रन्थाग्र ० ३०१ श्लोक सख्यया ॥ सवत् १७३१ वर्षे चैत्र सुदि ११ दिने ॥ *[अभय जैन ग्रन्थालय प्रति न० ८९।४३२८]*

१—विहुत्तरइ

समयसुन्दररास पञ्चक में प्रयुक्त देशी सूची

सादूलराजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट के प्रकाशन

राजस्थान भारती (उच्च कोटि की शोध-पत्रिका)

भाग १ और ३,	८) रु० प्रत्येक
भाग ४ से ७	९) रु० प्रति भाग
भाग २ (केवल एक अक),	२) रुपये
तैस्सितोरी विशेषाक—	५) रुपये
पृथ्वीराज राठोड़ जयन्ती विशेषाक	५) रुपये

प्रकाशित ग्रन्थ

१ कलायण (ऋतुकाव्य) ३॥) २. वरसगांठ (राजस्थानी कहानियाँ) १॥)

३ अभै पटकी (राजस्थानी उपन्यास) २॥)

नए प्रकाशन

१ राजस्थानी व्याकरण	३)५०	१३ सदयवत्सवीर प्रबन्ध	
२ राजस्थानी गद्य का विकास	६)	१४ जिनराजसूरि कृति कुसुमांजलि	४)
३ अचलदास खीचीरी वचनिका	२)	१५ विनयचन्द्र कृति कुसुमांजलि	४)
४ हम्मीरायण		१६ जिनहर्ष ग्रन्थावली	
५ पद्मिनी चरित्र चौपाई	४)	१७ धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली	५)
६ दलपत विलास	२)२५	१८ राजस्थान रा दूहा	४)
७ डिंगल गीत		१९ वीर रस रा दूहा	२)
८ पंवार वश दर्पण	२)	२० राजस्थानी नीति दूहा।	
९ हरि रस		२१ राजस्थानी व्रत कथाएँ	
१० पीरदान लालस ग्रथावली		२२ राजस्थानी प्रेम-कथाएँ	
११ महादेव पार्वती वेल		२३ चदायण	
१२ सीताराम चौपाई		२४ दम्पति विनोद	

२५ समयसुन्दर रासपचक ३)

पता :—सादूल राजस्थानी रिसर्चइन्स्टीट्यूट, बीकानेर।